ISSN 0975-4083

Centre for Research Studies
REWA (M.P.)

रिसर्च जरनल ऑफ आर्ट्स, मैनेजमेन्ट एण्ड सोशल साइन्सेस

Peer-Reviewed Research Journal
UGC Journal No. (Old) 2138 Impact Factor 4.875 (IIFS)
Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory
ProQuest, U.S.A. Title Id : 715204

अंक - 21, हिन्दी संस्करण, वर्ष-11, अप्रैल-सितम्बर 2021

2021

www.researchjournal.in

आई. एस. एस. एन. 0975-4083

रिसर्च जरनल ऑफ आर्ट्स, मैनेजमेन्ट एण्ड सोशल साइन्सेस

Peer-Reviewed Research Journal
UGC Journal No. (Old) 2138
Impact Factor 4.875
Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, ProQuest, U.S.A. Title Id : 715204

अंक-21	हिन्दी संस्करण	वर्ष-11	अप्रैल-सितम्बर 2021

प्रोफेसर ब्रजगोपाल
प्रधान सम्पादक
सेवानिवृत्त आचार्य, उच्च शिक्षा
प्रतिष्ठित भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एवार्ड से सम्मानित
profbrajgopal@gmail.com

डॉ. अखिलेश शुक्ल
ऑनरेरी सम्पादक
प्राध्यापक, समाजशास्त्र एवं समाजकार्य विभाग
उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान, नैक 'ए' ग्रेड
शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
प्रतिष्ठित भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एवार्ड तथा पं. गोविन्द वल्लभ पंत एवार्ड से सम्मानित
akhileshtrscollege@gmail.com

डॉ. संध्या शुक्ल
प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग
उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान, नैक 'ए' ग्रेड
शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
drsandhyatrs@gmail.com

डॉ. गायत्री शुक्ल
अतिरिक्त निदेशक, सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, रीवा
shuklagayatri@gmail.com

डॉ. आर. एन. शर्मा
सेवानिवृत्त आचार्य, उच्च शिक्षा, रीवा
rnsharmanehru@gmail.com

सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, रीवा
की मुख्य शोध पत्रिका

Experts & Members of Advisory Board

- Prof. Hemanta Saikia, Assistant Professor, Department of Rural Development,Debraj Roy College, Circuit House Road, Golaghat, Assam, India.Pin-785621
  jio84hemant@gmail.com
- Dr. K. S. Tiwari, Professor, Regional Director, Regional Centre Bhopal, IGNOU, Bhopal
  kripashankar19954@gmail.com
- Dr. Puran Mal Yadav, Department of Sociology, Mohan Lal Sukhadia University
  UDAIPUR – 313001 (Rajasthan)
  pnyadav1964@gmail.com
- Dr. Ram Shankar. Professor of Political Science, RDWVV Jabalpur University, (M.P.)
  rs_dubey@yahoo.com
- Prof. Anjali Bahuguna, Department of Economics, School of Humanities and Social Sciences (SHSS),, HNB Garhwal University, (A Central University), Srinagar-246174 (Garhwal)
  anjali shss@gmail.com
- Dr. Sanjay Shankar Mishra, Professor of Commerce, Govt. TRS PG College, Rewa (M.P.)
  ssm6262@yahoo.com
- Dr. Pramila Shrivastava, Associate Professor, Department of Economics, Govt. Arts College Kota (Raj),
  dr21pramila@gmail.com
- Dr Alka Saxena, D. B. S. College, Kanpur (U.P.)
  alknasexna65@yahoo.com
- Dr. Deepak Pachpore, Journalist
  deepakpachpore@gmail.com
- Dr. C. M. Shukla, Professor of History Government Maharaja College, Chhatarpur District Chhatarpur(M.P.),
  rajan.19shukla@gmail.com

Guide Lines

- **General:** English and Hindi Editions of Research Journal are published separately. Hence Research Papers can be sent in Hindi or English.
- **Manuscript of research paper:** It must be original and typed in double space on the one side of paper (A-4) and have a sufficient margin. Script should be checked before submission as there is no provision of sending proof. It must include Abstract,Keywords, Introduction, Methods, Analysis, Results and References. Hindi manuscripts must be in Devlys 010 or Kruti Dev 010 font, font size 14 and in double spacing. All the manuscripts should be in two copies and in Email also. Manuscripts should be in Microsoft word program. Authors are solely responsible for the factual accuracy of their contribution.
- **References :** References must be listed cited inside the paper and alphabetically in the order- Surname, Name, Year in bracket, Title, Name of book, Publisher, Place and Page number in the end of research paper as under- Shukla Akhilesh (2018) Criminology, Gayatri Publications, Rewa : Page 12.
- **Review System:** Every research paper will be reviewed by two members of peer review committee. The criteria used for acceptance of research papers are contemporary relevance, contribution to knowledge, clear and logical analysis, fairly good English or Hindi and sound methodology of research papers. The Editor reserves the right to reject any manuscript as unsuitable in topic, style or form without requesting external review.

लेखकों से निवेदन-

- रिसर्च जरनल ऑफ आर्टस एण्ड मैनेजमेन्ट एण्ड सोशल साइंसेज (ISSN-0975-4083) सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज की मुख्य शोध पत्रिका है।
  शोध पत्रिका उलरिच इन्टरनेशनल पीरियाडिकल्स डाइरेक्ट्री प्रोक्वेस्ट, संयुक्त राज्य अमेरिका से इंडेक्स्ड और लिस्टेड हैं।
- शोध पत्रिका का अंग्रेजी एवं हिन्दी संस्करण अलग-अलग प्रकाशित होता है।
- रिसर्च जरनल ऑफ आर्ट्स, मैनेजमेन्ट एण्ड सोशल साइंसेस का प्रकाशन प्रतिवर्ष मार्च तथा सितंबर में किया जाता है।
- रिसर्च जरनल ऑफ आर्ट्स, मैनेजमेन्ट एण्ड सोशल साइंसेस को इम्पैक्ट फैक्टर एवं आई.एस.एस.एन प्राप्त हैं। शोध पत्रिका Peer-Reviewed हैं।
- शोध पत्रिका के नवीनतम अंक में प्रकाशित शोध पत्रों को हमारी वेबसाइट www.researchjournal.in (Current Issue) में देखा जा सकता है तथा डाउनलोड किया जा सकता है।
- शोध पत्रिका का प्रिंट एडीशन सदस्यों को अलग से डाक द्वारा भेजा जाता है।
- शोध पत्र में शीर्षक, नाम, पद, पदस्थापना का विवरण, पत्र व्यवहार का पता तथा दूरभाष क्रमांक, मोबाइल नं., ई-मेल एड्रेस अवश्य दिया जाये।
- शोध पत्र के प्रारम्भ में कम से कम 50-100 शब्दों का सारांश दिया जाये।
- मुख्य शब्द सारांश के नीचे टाइप कराया जाये।

- शोध पत्र में शोध पद्धति तथा शोध में प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण किया जाना चाहिए।
- शोध पत्र में निष्कर्ष और अंत में संदर्भ ग्रंथ सूची दी जाये। संदर्भ ग्रंथों का विवरण पूरा दिया जाये। लेखक का नाम, वर्ष, पुस्तक का नाम, प्रकाशक का विवरण, प्रकाशक का स्थान और पृष्ठ संख्या आदि का विवरण दिया जाना चाहिए।
- शोध पत्र माईक्रोसॉफ्ट वर्ड की फाइल में टाइप किया हुआ होना चाहिए। (नोट- पेज मेकर की फाइल, पी.डी.एफ. फाइल, स्कैन मैटर आदि में कदापि शोध पत्र न भेजें) शोध पत्र हिन्दी लिपि में कृतिदेव या देवलिस फांट 010 (फॉन्ट साइज 14, स्पेस डबल, मार्जिन ए-4 साईज के कागज में चारो तरफ 1 इंच) में भेजा जाना चाहिए।
- शोध पत्र के साथ यह घोषणा अवश्य संलग्न करें कि शोध पत्र मौलिक है तथा इसे कहीं अन्यत्र प्रकाशनार्थ प्रेषित नहीं किया गया है।

सर्वप्रथम शोध पत्र ई-मेल द्वारा भेजें-

- **researchjournal97@gmail.com,**
- **researchjournal.journal@gmail.com**
- शोध पत्र की स्वीकृति की सूचना सम्पादकीय कार्यालय द्वारा लेखक को ई-मेल एवं दूरभाष द्वारा प्रदान की जाती है।

© सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज

एक अंक रुपये 500.00	-सदस्यता शुल्क -	
अवधि	व्यक्तिगत सदस्यता	संस्थागत सदस्यता
वर्ष एक	2000-00	2500-00
वर्ष दो	2500-00	4000-00

सदस्यता शुल्क की राशि गायत्री पब्लिकेशन्स के स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, ब्रांच-रीवा सिटी (आईएफएस कोड 0004667 MICR Code 486002003) के खाता क्रमांक 30016445112 में जमा की जाय, नगद जमा की स्थिति में 75 रु. अतिरिक्त बैंक चार्ज जोड़ा जाय।

प्रकाशक: गायत्री पब्लिकेशन्स
रीवा- 486001 (म.प्र.)

मुद्रक: लीनेज ऑफसेट
रीवा (म.प्र.)

संपादकीय कार्यालय

186/1, विन्ध्य विहार कालोनी
रीवा- 486001 (म.प्र.)
E-mail- researchjournal97@gmail.com, researchjournal.journal@gmail.com
www.researchjournal.in
दूरभाष - 7974781746

रिसर्च जरनल में प्रस्तुत किये गये विचार और तथ्य लेखकों के हैं, जिनके विषय में सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, सम्पादक मण्डल, प्रकाशक तथा मुद्रक उत्तरदायी नहीं हैं। रिसर्च जरनल के सम्पादन एवं प्रकाशन में पूर्ण सावधानी रखी गई है, किन्तु किसी त्रुटि के लिए सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, सम्पादक मण्डल, प्रकाशक तथा मुद्रक उत्तरदायी नहीं हैं। सम्पादन का कार्य अव्यावसायिक और ऑनरेरी है। सभी विवादों का न्यायालय क्षेत्र, रीवा जिला रीवा (म.प्र.) रहेगा।

सम्पादकीय

भारतीय शिक्षा क्षेत्र के स्वरूप में सुधार करने के लिए वर्तमान सरकार ने एक व्यापक राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (एनईपी-2020) प्रस्तुत की है, जो अकादमिक जगत में सराहनीय कदम है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति में उच्च शिक्षा संस्थानों को समस्या की तलाश में समाधान के स्थान पर समस्याओं के समाधान की दिशा में कार्य करने के लिए प्रेरित किया गया है, जो निश्चित रूप से भारत में उच्च शिक्षा के परिदृश्य को बदलने में सक्षम होगा और छात्रों को एक बेहतर इंसान बनाने की दिशा में कारगर होगा। स्वामी विवेकानंद जी ने भी कहा था की जनता को शिक्षित बनाओ और उनका सर्वांगीण विकास करो, तभी समाज और राष्ट्र का विकास संभव है। भारतीय संदर्भ में जो व्यवसायिक भविष्यवाणियां इशारा कर रही हैं, उससे सन 2032 तक भारत दुनिया की तीसरी बड़ी अर्थव्यवस्था बन सकता है। यह तभी संभव है जब हमारे छात्रों का सर्वांगीण विकास हो और उन्हें रोजगार के अवसर उपलब्ध हो। जब तक हम ज्ञान के विकसित संसाधन अपने युवाओं को उपलब्ध नहीं कराएंगे, तब तक हम संपूर्ण लक्ष्य की तरफ कदम नहीं बढ़ा सकते हैं और राष्ट्रीय शिक्षा नीति में ज्ञान के विकसित संसाधनों को उपलब्ध कराने की बात को प्रमुखता से लिया गया है, जो प्रशंसनीय है। नई शिक्षा नीति युवाओं में पढ़ाई के प्रति बुनियादी बदलाव और उनके नजरिए को विकसित करेगी। स्कूल शिक्षा से लेकर महाविद्यालय और विश्वविद्यालय शिक्षा तक छात्रों के पास अनेक प्रकार के विकल्प उपलब्ध होंगे, जो उन्हें रोजगार और उनके व्यक्तित्व परिमार्जन में सहायता करेंगे। निश्चित रूप से एक नए भारत का आगाज नई शिक्षा नीति के माध्यम से हुआ है।

नई शिक्षा नीति की मूलभूत विशेषता यह है कि यह भारतीय दर्शन पर केंद्रित है और इसके माध्यम से हम एक ऐसे समाज की संकल्पना को साकार रूप दे सकते हैं, जिसमें संतुलित विकास हो। नई शिक्षा नीति नई तकनीकों, नई विधियों, नए पेटेंट, नए प्रकाशन पर भी ध्यान दे रही है, जिससे हमारे छात्रों का उज्जवल भविष्य का मार्ग प्रशस्त हो, रोजगार परक सर्टिफिकेट डिप्लोमा एवं व्यावसायिक पाठ्यक्रम भी प्रारंभ किए गए हैं। इससे निश्चित ही विद्यार्थियों के व्यक्तित्व के परिमार्जन के साथ-साथ उनका कौशल संवर्धन भी होगा और रोजगार के विभिन्न विकल्प उन्हें उपलब्ध होगें। इस नीति में पर्यावरण, योग, मानवीय मूल्य, नैतिकता, महिला सशक्तिकरण आदि विषयों को भी शामिल किया गया है, जिससे समाज में एक स्वस्थ वातावरण का निर्माण हो सके।

नई शिक्षा नीति का दृष्टिकोण छात्रों को अनुसंधान परक बनाना है। महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों ने पाठ्यक्रमों में इस का दृष्टिकोण को विशेष रूप से शामिल किया है कि विद्यार्थो में अनुसंधान परक का दृष्टिकोण विकसित हो। नई शिक्षा नीति के क्रियान्वयन से हम उम्मीद कर सकते हैं,एक नए भारत की, एक नए समाज की, एक नए भविष्य की, जिसमें हम अपने युवाओं को एक नया भारत, सशक्त भारत दे सकें। इस दिशा में राष्ट्रीय शिक्षा नीति ब्रह्मस्त्र के रूप में कार्य करेगी।

मध्य प्रदेश सरकार के माननीय मुख्यमंत्री श्री शिवराज सिंह चौहान और माननीय शिक्षा मंत्री श्री मोहन यादव के नेतृत्व में नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति को प्रदेश में लागू किया है। यहां विद्यार्थो को अनेक विकल्प उपलब्ध हैं। उदाहरण के लिए मान लीजिए कि आप कला स्नातक पाठ्यक्रम में अध्ययन कर रहे हैं। एक साल बाद विद्यार्थो का कला स्नातक पाठ्यक्रम करने में मन नहीं लगा तो नई नीति के मुताबिक आपका यह एक वर्ष खराब नहीं जाएगा और आपको एक वर्ष का सर्टिफिकेट मिल जाएगा। अब अगर आप कोई दूसरी डिग्री में अध्ययन कर रहे हैं और दो साल बाद उसे भी छोड़ देते हैं, तो आपको इन दो सालों का डिप्लोमा मिल जाएगा। स्नातक स्तर का पूरा पाठ्यक्रम 3 वर्ष में पूरा होगा। राष्ट्रीय नीति में दो तरह के विकल्प विद्यार्थी को प्रदान किए गए हैं। 3 वर्ष में ग्रेजुएशन और दूसरा जो अनुसंधान में जाना चाहते हैं, उन्हें 4 साल का अध्ययन करना होगा। अब स्नातकोत्तर भी 1 वर्ष का होगा। विद्यार्थियों को ऑफलाइन के साथ-साथ ऑनलाइन सुविधाओं का भी विकल्प उपलब्ध रहेगा। ऑनलाइन पाठ्यक्रम से प्राप्त अंकों अथवा ग्रेड को अंकसूची में प्रदर्शित किया जाएगा। यहां एक बात और उल्लेखनीय है कि वार्षिक परीक्षा 2 घंटे की होगी। मूल्यांकन अंतरराष्ट्रीय मानकों के अनुरूप क्रेडिट प्रणाली पर आधारित होगा। विद्यार्थी एक से अधिक विषयों की पढ़ाई कर सकता है, विज्ञान का विद्यार्थी कला या वाणिज्य का विषय भी ले सकता है। उसे पहले और दूसरे साल में विषय परिवर्तन का विकल्प भी उपलब्ध कराया गया है और साथ ही साथ व्यावसायिक पाठ्यक्रम की सुविधा भी इसी के अंतर्गत छात्रों को उपलब्ध है। निश्चित ही इससे विद्यार्थियों का कौशल संवर्धन होगा और रोजगार के कई अवसर उपलब्ध होंगे।

प्रोफेसर ब्रजगोपाल
प्रधान संपादक

डॉ. अखिलेश शुक्ल
सम्पादक

अनुक्रमणिका

01. संग्रामी डुंगर सिंह बिष्ट द्वारा स्थापित विभिन्न विकास योजनाए: एक ऐतिहासिक अध्ययन 09
उमा काण्डपाल
नीरज रुवाली
02. राजा की नियुक्ति के सिद्धान्त एवं शिक्षा संबंधी शुक्रनीतिसार के राजनीतिक विचारों का अध्ययन 19
अमरजीत सिंह
महेन्द्र कुमार द्विवेदी
03 जोधपुर राज व्यवस्था में धार्मिक प्रतीक का महत्व: विशेष सन्दर्भ- कुल देवी नागणेचियाँ माँ 24
अर्चना शर्मा
04 वर्तमान परिप्रेक्ष्य में पं. दीन दयाल उपाध्याय के आर्थिक विचारों की प्रासंगिकता 31
सिद्धार्थ मिश्र
05 उत्तर प्रदेश राज्य ललित कला अकादमी की संकल्पना को लेकर अवध प्रान्त के कानपुर की प्रथम बहुआयामी कला शिविर 35
राज कुमार सिंह
06 भारतीय कला में मानवाकृतियों का पुर्नजन्म बंगाल शैली (बंगाल शैली) 39
यतीन्द्र महोबे
07 बंगाल स्कूल के प्रसिद्ध चित्रकार अवनीन्द्र नाथ टैगोर 45
निशा गुप्ता
08 एच आई व्ही संक्रमितों पर शासन की विभिन्न योजनाओं का प्रभाव 49
कल्पना वर्मा
अखिलेश शुक्ल
09 पारिवारिक विघटन का परिवार व समाज पर प्रभाव (रीवा नगर के विशेष संदर्भ में) 53
मधुलिका श्रीवास्तव
उमेश सिंह
10 तम्बाकु युक्त धूम्रपान का खिलाड़ियों के स्वास्थ्य व समाज पर पड़ता प्रभाव 63
पवन कुमार पचौरी
11 कुपोषण नियंत्रण की पहल 70
सुषमा श्रीवास्तव
अमिता खरे
12 महिला सशक्तिकरण में बाधक महिलाओं के ही कतिपय विधिक अधिकार (एक आनुभविक अध्ययन) 75
भूमिका चौबीसा
13 एच. आई. व्ही. संक्रमितों के लिए चिकित्सीय सुविधाओं का अध्ययन 83
कल्पना वर्मा
अखिलेश शुक्ल
14 पर्यावरण और मानवीय संबंधों का बदलता स्वरूप 86
आकृति खरे
एस. बी. विश्वकर्मा

15	रीवा जिले में औद्योगिकीकरण (रीवा जिले के विशेष संदर्भ में) **प्रियंका गौतम**	92
16	पान कृषि के लिए भौगोलिक दशाएं **नीना चौरसिया**	98
17	भारत में स्कूली शिक्षा विकास एवं कोविड़ काल **कुमुद श्रीवास्तव**	105
18	तुलनात्मक अनुसंधान का महत्व **अमित शुक्ल**	113
19	माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्या **प्रत्यूष वत्सला द्विवेदी**	116
20	अशोक के धम्म में निहितार्थ सामाजिक एवं आर्थिक चिन्तन **मीना कुमारी**	119
21	जीवन में आत्मा की खोजः एक दृष्टिकोण **सोनी सिंह बघेल**	124
22	खेलों में अपराध एक अध्ययन **पवन कुमार पचौरी**	128
23	रीवा विकासखण्ड के अंतर्गत ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं की बालिका शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन **रीता निगम, पी. एन. मिश्र**	137
24	सारण जिला में (बिहार)में जनसंख्या वृद्वि एवं पर्यावरण अवनयन **संजय कुमार**	146
25	कोविड–19 के परिप्रेक्ष्य में सूक्ष्म, लघु एवं कुटीर उद्योग की भूमिका एवं संभावनाएं **ऋचा पाण्डेय, आशुतोष सिन्हा**	153
26	औपनिवेशिक काल में शिक्षा : एक वर्णनात्मक अध्ययन **धर्मेन्द्र यादव**	158
27	उच्च शिक्षा में गुणवत्ता उन्नयनः एक विश्लेषणात्मक अध्ययन **सुधा गुप्ता**	163
28	आधुनिक सभ्यता पर गाँधी के विचारः पर्यावरण के विशेष संदर्भ में **अनुराधा सिंह**	170
29	मध्यवर्ग : एक परिचय **दिव्या मिश्रा, रामेश्वर पाण्डेय**	175
30	महिला सशक्तिकरण मध्य प्रदेश पंचायत राज एवं ग्राम स्वराज अधिनियम 1993 के संदर्भ में **वंदना मिश्रा, संकटा प्रसाद शुक्ल**	181
31	भैरव प्रसाद गुप्त के कथा साहित्य में भारतीय समाज **दिव्या मिश्रा, रामेश्वर पाण्डेय**	188
32	महिलाओं की राजनैतिक सहभागिता एवं सशक्तिकरण की स्थिति मध्यप्रदेश के सतना जिले के संदर्भ में **वंदना मिश्रा, संकटा प्रसाद शुक्ल**	194

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

संग्रामी डुंगर सिंह बिष्ट द्वारा स्थापित विभिन्न विकास योजनाए: एक ऐतिहासिक अध्ययन

• उमा काण्डपाल
•• नीरज रुवाली

सारांश- 19वीं शताब्दी का मध्य एवं उत्तरार्द्ध काल को भारतीय राष्ट्रीय पुर्नजागरण का युग कहा जाता है। इस दौर में भारत में ऐसे अनेक प्रतिभाशाली व्यक्तियों ने जन्म लिया, जिनके आदर्श जीवन और सतत प्रयासों के परिणामस्वरूप भारत अपनी खोई हुई आत्मा को पुन: प्राप्त कर सका तथा आधुनिक भारत की नींव भी इसी काल में रखी गयी। भारतीय राष्ट्रीय संग्राम के इसी दौर में देश के दूरस्थ हिमालय भू-भाग उत्तराखण्ड का कुमाऊँ क्षेत्र भी राष्ट्रवाद व पुर्नजागरण के स्पर्श से अछूता नहीं रहा। यहाँ भी सामाजिक परिवर्तन के साथ-साथ राष्ट्रीय चेतना का विकास हुआ, जिसके परिणामस्वरूप हर क्षेत्र में अनेक महत्वपूर्ण व्यक्तियों का उभरना शुरू हो पाया, जिनके परिणामस्वरूप भारत को औपनिवेशिक दासता से मुक्ति मिली। राष्ट्रीय व स्थानीय स्तर पर बने इस परिवेश ने उत्तराखण्ड से भी अनेक महत्वपूर्ण व्यक्तियों को राष्ट्रीय आन्दोलन में अपने व्यक्तित्व को उभारने व नेतृत्व का अवसर दिया। फलस्वरूप उत्तराखण्ड के अनेक व्यक्तियों को राष्ट्रीय नेताओं का दर्जा बाद के वर्षो में प्राप्त हुआ। राष्ट्रीय संग्राम की इस धारा से जुड़े इन्हीं व्यक्तियों में डुंगर सिंह बिष्ट एक थे। उन्होनें कुमाऊँ की स्थानीय चेतना को राष्ट्रीय संग्राम से जोड़ने, स्थानीय जन आंदोलन में सक्रिय भागीदारी कर उन्हें सफल बनाने, समाज सुधार का असाधारण कार्य करने में ऐतिहासिक भूमिका निभायी।

मुख्य शब्द- पुर्नजागरण, उत्तराखण्ड, समाज सुधार, भागीदारी

बिष्ट को मार्च 1949 में नैनीताल लोक निर्माण विभाग के अधिशासी अभियन्ता से जानकारी प्राप्त हुई कि संयुक्त प्रांत के मुख्य अभियन्ता द्वारा उनको आदेश किया गया है कि मल्ला रामगढ़ से तल्ला रामगढ़ तक मार्ग का अतिशीघ्र इस्टीमेट बनाकर लखनऊ भेजें क्योंकि उक्त मोटर मार्ग को प्रदेश सरकार द्वारा स्वीकृत किया गया है।[1] अप्रैल 1949 में संयुक्त प्रांत सरकार की ग्रीष्मकालीन राजधानी नैनीताल में पहुंचने की जानकारी बिष्ट को हो गई। ग्रीष्मकाल में प्रधानमंत्री सहित सभी मंत्री नैनीताल आ जाते थे। बिष्ट ने आगर चौभेंसी के लोगों को अपने साथ ले जाकर एक मई 1949 को नैनीताल पहुंचकर संयुक्त प्रांत के प्रधानमंत्री गोविन्द बल्लभ पंत से भेंट करके उनसे अनुरोध किया कि आगर चौभेंसी क्षेत्र में लाखों कुंतल आलू व फल की खेती होती है, किंतु मोटर मार्ग न होने से मंडी हल्द्वानी पहुंचकर आलू व फल की कीमत किराए में चली जाती है। आलू व फल

• हल्द्वानी (नैनीताल)
•• इतिहास विभाग, एम. बी. राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, हल्द्वानी (नैनीताल)

पैदा करने वालों को कुछ नहीं मिल पाता है। रामगढ़ से मुक्तेश्वर तक मोटरमार्ग का निर्माण किया जाये तो आगर चौभेंसी क्षेत्र वालों को आलू व फल उत्पादन से बड़ा लाभ मिलेगा। बिष्ट ने गोविन्द बल्लभ पंत से कहा कि उनको ज्ञात हुआ है कि संयुक्त प्रांत की सरकार द्वारा मल्ला रामगढ़ से तल्ला रामगढ़ तक मोटर मार्ग स्वीकृत हो गया है।[2]

गोविन्द बल्लभ पंत ने बिष्ट से अपने साथियों को लेकर सार्वजनिक निर्माण मंत्री हाजिफ मोहम्मद इब्राहिम से मिलने को कहा। पंत ने उनको फोन भी कर दिया। बिष्ट अपने शिष्टमंडल को लेकर हाफिज मोहम्मद इब्राहिम से मिले। मोहम्मद इब्राहिम ने कहा कि पंत ने ही मल्ला रामगढ़ से तल्ला रामगढ़ तक मोटर मार्ग की स्वीकृति दी और उनसे उक्त मोटर मार्ग का आंगणन बनाने के लिए कहा तभी उन्होनें मुख्य अभियन्ता, नैनीताल को आंगणन बनाने का आदेश दिया।

लो.नि.वि.मंत्री हाफिज इब्राहिम ने बिष्ट से कहा कि आप लोगों द्वारा प्रस्तावित किए गए रामगढ़-मुक्तेश्वर मोटर मार्ग निर्माण के लिए उनकी ओर से भी स्वीकृति है। किंतु आप लोग पंत से ही मिलें। बिष्ट अपने शिष्टमंडल के साथ पुन: गोविन्द बल्लभ पंत से मिलने गए। उनको हाफिज इब्राहिम द्वारा कही गई सब बातें बताई। पंत ने भी स्वीकार किया कि उनको आगर-चौभेंसी क्षेत्र में लाखों कुंतल आलू व फल होने की स्वयं जानकारी है। पंत ने कहा कि प्रदेश सरकार के पास बहुत कम बजट होता है। मोटर मार्ग आदि की सभी क्षेत्रों से मांग आती रहती है। पंत ने बिष्ट से पर्वतीय भाषा में कहा ''तुम लोग पांच-सात मील मोटर मार्ग श्रमदान द्वारा बना दी जालो मैं मोटर सड़क की स्वीकृति लैक दी द्यूलौं'' बिष्ट ने श्रमदान द्वारा रामगढ़ से मुक्तेश्वर तक सात मील मोटर मार्ग सड़क (दस कि.मी.) बनाने का पंत को आश्वासन दिया। किंतु उनसे यह अनुरोध किया कि उक्त मोटर मार्ग का लो.नि.वि. नैनीताल से शीघ्र सर्वे तथा आंगणन बनवाने का आदेश किया जाए। पंत ने अधीक्षण अभियन्ता को उसी समय अपने यहां बुलाकर बिष्ट तथा शिष्टमंडल के सामने अधीक्षण अभियन्ता, नैनीताल को आदेशित किया कि वे दो सप्ताह में सर्वे तथा आंगणन बनाकर उसकी कापी डुंगर सिंह को उपलब्ध करा दें।

अधीक्षण अभियन्ता लो.नि.वि. नैनीताल ने भी तीन सप्ताह में ही 21 मई 1949 को उक्त मोटर मार्ग की सर्वे तथा आंगणन बनाकर संयुक्त प्रांत सरकार के मुख्य अभियन्ता को भेज दिया तथा पंत को भी सूचना दे दी तथा बिष्ट को सर्वे व आंगणन उपलब्ध करा दिया गया। बिष्ट ने 10 जुलाई 1949 को आगर चौभेंसी क्षेत्र के ग्राम प्रधानों तथा समस्त प्रकार के जन प्रतिनिधियों तथा आम नागरिकों की आम सभा कसियालेख में आयोजित की। सभी ने बिष्ट के प्रयासों की प्रशंसा करते हुए कहा कि श्रमदान द्वारा अपने-अपने हिस्से के मोटर मार्ग का निर्माण वे पूर्ण करने को तैयार हैं। डिप्टी कमिश्नर नैनीताल से भेंट करने पर डिप्टी कमिश्नर ने बिष्ट को विश्वास दिलाया कि वे नियोजन सहित समस्त अधिकारियों को आदेशित करेगें कि वे श्रमदान कार्य में बिष्ट को पूर्ण सहयोग देंगे।[3]

एक विशेष बैठक 21 जुलाई 1949 को रामगढ़ डांक बंगले में बिष्ट द्वारा बुलाई गई। जिसमें डिप्टी कमिश्नर नैनीताल, जिला योजना अधिकारी, लो.नि.वि. नैनीताल के अधिशासी अभियन्ता, रामगढ़-मुक्तेश्वर के मध्य फल बगीचे के लिंकन औचर्ड तथा राजा औचर्ड के प्रतिनिधि तथा क्षेत्र के ग्राम प्रधान व सरपंच आदि उपस्थित हुए। सभी

फल बगीचा मालिकों के प्रतिनिधियों ने लिखित आश्वासन दिया कि श्रमदान में आने वाली भूमि में वे न कोई आपत्ति करेंगे और न उसकी कभी कीमत देने को कहेगें। 1 अगस्त 1949 को संयुक्त प्रांत सरकार के आदेश के अंतर्गत डिप्टी कमिश्नर नैनीताल ने कानूनी श्रमदान कमेटी का गठन किया। सर्व सम्मिति से बिष्ट को श्रमदान कमेटी का सर्वाधिकार अध्यक्ष चुना गया। बिष्ट द्वारा श्रमदान के लिए सरहदों का निर्माण निम्न प्रकार किया गया।[4]

1. लिंकन फल बगीचा सरहद के बाद दो मील मोटर मार्ग का श्रमदान ग्राम सभा सूपी, सतबूंगा, लोद व गल्ला ग्रामवासी पूर्ण करेगें।
2. सूपी की सरहद समाप्त के बाद दो मील सड़क का श्रमदान ग्राम सभा बूढ़ीबना, कोकिलबना, हरीनगर व काफली ग्राम वाले करेंगे।
3. कसियालेख की सरहद से आगे दो मील का श्रमदान ग्राम सभा चौखूटा, परबड़ा, मझेड़ा व ग्राम सभा सुन्दरखाल वाले करके मोटर मार्ग निर्माण पूर्ण करेगें।
4. भटेलिया से मुक्ते'वर व सुरमाने में एक मील का श्रमदान मोटर मार्ग में ग्राम गहना, सौनेड़ा, पोखरी व सुरमाने वाले करेगें।

बिष्ट का मोटर मार्ग निर्माण श्रमदान कार्यक्रम सबने स्वीकार किया। उक्तानुसार सभी ने अपनी-अपनी सरहदों का श्रमदान पूर्ण किया। मोटर मार्ग के श्रमदान द्वारा निर्माण कार्य में एक लाख रूपया तीन बड़े बागवालों ने तथा डेढ़ लाख रूपया छोटे बाग बगीचे वालों ने श्रमदान कार्यो के लिए बिष्ट के पास जमा किए किन्तु बिष्ट द्वारा उक्त सारी धनराशि जिला नियोजन अधिकारी नैनीताल को सौंप दी गई। जिला नियोजन अधिकारी ने क्षेत्र पंचायत राज्य इंस्पेक्टर चन्दन सिंह क्वीरा द्वारा मजदूरों की गैंग द्वारा मोटर मार्ग निर्माण में अधूरा कार्य पूर्ण कराया तथा छोटी दिवालें आदि बनवाई। आमद खर्च का औडिट हिसाब की अंतिम रिपोर्ट की प्रतिलिपि बिष्ट को भी नियोजन अधिकारी नैनीताल द्वारा उपलब्ध कराई गई।[5]

डुंगर सिंह ने नैनीताल राजभवन में प्रांत के राज्यपाल के.एम. मुन्सी से भेंट करके उनसे रामगढ़ मुक्तेश्वर मोटर मार्ग के श्रमदान का उद्घाटन करने का अनुरोध किया। राज्यपाल दो दिन पूर्व ही 24 सितम्बर 1949 को मुक्तेश्वर पहुंच गए। बिष्ट ने श्रमदान का शुभारंभ उद्घाटन स्थल सुरमाने में बची सिंह मेहरा एजेंट मालिक गहना औचर्ड के बंगले में आयोजित किया था। शिविर कई महीनों तक वहां संचालित रहा। अर्थात मोटर मार्ग के श्रमदान पूर्ण होने तक शिविर संचालित रहा।

नैनीताल जिले के डिप्टी कमिश्नर तथा योजना अधिकारी आदि भी पहले दिन मुक्तेश्वर पहुंच गए थे। 26 सितम्बर 1949 को 11 बजे के भीतर ही आगर, मुक्तेश्वर चौभेंसी क्षेत्र के समस्त ग्राम प्रधान व सैकड़ों की संख्या में संभ्रांत लोग महरा के बंगले गहना (सुरमाने) में पहुंच चुके थे। श्रमदान के प्रति अति उत्साह लोगों में दिखाई देता था। डुंगर सिंह के प्रति सभी की हार्दिक श्रद्वा दिखाई दे रही थी। उनकी जै-जै भी जनता के द्वारा उत्साह में कर दी जा रही थी।[6]

महामहिम के.एम. मुन्सी आई.वी.आर.आई. मुक्तेश्वर से डांडी द्वारा ठीक 12 बजे मुक्तेश्वर के बड़े अधिकारियों के साथ-साथ सुरमाने में गन्तव्य स्थान पर बची सिंह

महरा के बंगले में श्रमदान स्थल तक डुंगर सिंह की अगुवानी में ले जाए गए। राज्यपाल ने सैकड़ों की उपस्थिति में बिष्ट के कार्यो की भूरी-भूरी प्रसंशा की। उसके बाद राज्यपाल महोदय ने गेंटी पकड़कर श्रमदान का शुभारंभ किया था। लोगों को लगातार जोर से के. एम. मुन्सी जिंदाबाद के नारे लगाकर अपने गेंटी, फावड़े मारकर मोटर मार्ग के निर्माण का श्रमदान आरंभ किया। बिष्ट ने श्रमदान उद्घाटन में भाग लेने वालों को धन्यवाद दिया।[7]

डुंगर सिंह ने 25 मई 1950 को नैनीताल पहुंचकर गोविन्द बल्लभ पंत से रामगढ़-मुक्तेश्वर श्रमदान से निर्मित मोटर मार्ग का उद्घाटन करने का अनुरोध किया। पंत ने 1 जून 1950 की तिथि प्रदान की। तदनुसार रामगढ़-मुक्तेश्वर मोटर मार्ग में आगर क्षेत्र की ग्राम सभाओं द्वारा सात मील (10 किमी) श्रमदान द्वारा निर्माण किए गए मोटर मार्ग का उद्घाटन 1 जून 1950 को संयुक्त प्रांत के प्रधानमंत्री गोविन्द बल्लभ पंत ने सर्गाखेत में किया। पंत ने बिष्ट की बड़ी प्रशंसा करते हुए कहा कि हमारे कुमाऊँ के कांग्रेस कार्यकर्ताओं में बिष्ट ही सबसे ज्यादा जनहित कार्यो में जुड़े रहने वाले अत्यंत सक्रिय और सक्षम कांग्रेसी है। मैंने इनके गुणों को देखते हुए 1941 में जिला कांग्रेस कमेटी नैनीताल का प्रथम मुख्य महामंत्री बनाया। भविष्य में भी इनसे कांग्रेस को बहुत आशाएं हैं। इस अवसर पर बिष्ट द्वारा पंत से भटेलिया से पहाड़पानी तक मोटर मार्ग की मांग करके तीन मील मोटर मार्ग का श्रमदान द्वारा निर्माण करने का वचन दिया।

पंत ने मोटरमार्ग निर्माण की स्वीकृति प्रदान कर दी। इसी दिन बिष्ट की मांग पर उन्होंने अपने उद्घाटन भाषण में घोषणा करते हुए सार्वजनिक निर्माण विभाग नैनीताल को आदेश दिया कि भटेलिया से पहाड़पानी तक मोटर मार्ग की जून माह में सर्वे कर दें और मोटर मार्ग को स्वीकृत करने की घोषणा भी की। डिप्टी कमिश्नर नैनीताल को आदेश दिया कि बिष्ट का सहयोग लेकर भटेलिया से पहाड़पानी श्रमदान द्वारा बनाए जाने वाली तीन मील सड़क की रामगढ़-पहाड़पानी मोटर मार्ग को भी पूर्ण करें।[8]

भटेलिया से पहाड़पानी तक मोटर मार्ग की सर्वे तो सार्वजनिक निर्माण विभाग ने 4 जून 1950 से शुरू कर दी थी। 15 जून 1950 को जिला नियोजन विभाग अधिकारी नैनीताल तथा अधिशासी अभियन्ता सा.नि.वि. नैनीताल आदि की मौजूदगी में श्रमदान कमेटी के अध्यक्ष बिष्ट को ही चुना गया उन्हीं के प्रयासों से भटेलिया-पहाड़पानी मोटर मार्ग का निर्माण भी श्रमदान के माध्यम से पूर्ण हो पाया।[9]

जिला नियोजन अधिकारी नैनीताल तथा पंचायत राज इन्सपेक्टर के सामने ही श्रमदान कमेटी के अध्यक्ष बिष्ट द्वारा श्रमदान कार्य के लिए निम्न प्रकार कार्यक्रम प्रस्तुत किया-

1. भटेलिया से सुंदरखाल के मध्य खसेरा से आगे कालापातल में 1 मील श्रमदान से मोटर मार्ग का निर्माण ग्राम शशबनी, ग्राम सुंदरखाल, सलियाकोट मल्ला व तल्ला तथा ग्राम पखड़ा वाले करेंगे।
2. सुंदरखाल से धानाचूली बैंड तक 1 मील सड़क का श्रमदान से निर्माण ग्राम धानाचूली, ग्राम रोलजांगल, अधरिया तथा राताक्वैदल तथा ग्राम मनाघेर वाले करेंगे।
3. चौरलेख से पहाड़पानी के मध्य 1 मील सड़क का श्रमदान से निर्माण ग्राम सभा

तल्ली दीनी, मल्ली दीनी, चौरलेख कनाला, ग्राम महतौलियागांव, मज्यूली, सेलालेख व मेलाडोव ग्राम वाले करेंगे।

4. क्षेत्र के उपस्थित जन प्रतिनिधियों ने बिष्ट द्वारा घोषित कार्यक्रम को सर्व सम्मति से स्वीकार किया। 29 जून 1950 को कमिश्नर कुमाऊँ ए.के. सिंह द्वारा बिष्ट के नेतृत्व में भटेलिया-पहाड़पानी मोटर मार्ग निर्माण हेतु श्रमदान कार्य का शुभारंभ किया गया था। एक फरवरी 1951 में श्रमदान निर्माण किए जा रहे तीन मील मोटर मार्ग का निर्माण कार्य पूर्ण हो गया।[10]

डुंगर सिंह मार्च 1951 में अपने साथ कुछ लोगों को लेकर लखनऊ पहुंचे। गोविन्द बल्लभ पंत से भेट कर उनसे श्रमदान द्वारा बनाए हुए भटेलिया-पहाड़पानी मोटर मार्ग का उद्घाटन करने का आग्रह किया। पंत ने अपने विशेष सहयोगी मंत्री जगमोहन सिंह नेगी से कहा कि डुंगर सिंह के नेतृत्व में वहां के लोगों ने तीन मील मोटर मार्ग का निर्माण श्रमदान से पूर्ण कर दिया है।

उक्त मोटर मार्ग का उद्घाटन अप्रैल 1951 को खाद्य एवं वन मंत्री जगमोहन सिंह नेगी ने किया। इस मोटर मार्ग निर्माण के पीछे भी मुख्य भूमिका बिष्ट की ही थी। स्वतंत्रता संग्राम के दौर में नेगी एवं बिष्ट बरेली जेल में साथ ही रह चुके थे। जगमोहन सिंह नेगी ने उद्घाटन भाषण में बिष्ट के साथ अपने जेल जीवन को याद करते कहा कि जेल में भी बिष्ट जनसेवा तथा सार्वजनिक हित के कार्यो में हर बार अपने क्षेत्र के विकास हेतु हम लोगों से वार्ता करते रहते थे। नेगी ने कहा कि श्रमदान द्वारा मोटर मार्ग के निर्माण में बिष्ट एक ऐतिहासिक युवक साबित हो गए हैं। इस तरह पर्वतीय क्षेत्रों में इतनी लम्बी सड़कों का श्रमदान द्वारा तैयार करना हमारे देश में एक विशेष उदाहरण बन गया है। नेगी ने अपने भाषण में कहा कि उनको पंत द्वारा अवगत कराया कि बिष्ट के उत्साहित नेतृत्व में इस क्षेत्र की जनता ने रामगढ़-मुक्तेश्वर में 10 किमी मोटर मार्ग का निर्माण श्रमदान से पूर्ण किया। उन्होनें कहा कि जिस क्षेत्र में डुंगर सिंह जैसे उत्साही नेता होंगे उस क्षेत्र का विकास दुगुनी गति से होगा। नेगी ने क्षेत्र की जनता को भी हार्दिक धन्यवाद दिया कि वे अपने विकास के प्रति बहुत उत्साहित रहते है।[11]

विधायक बिष्ट के क्षेत्र में विकास खंड ओखलकांडा सबसे पिछड़ा क्षेत्र जनपद नैनीताल में गिना जाता था। पूरे विकास खंड के दो तिहाई क्षेत्र में जंगल था। कुछ-कुछ स्थानों में वन विभाग द्वारा अपनी सुविधाओं के अनुसार पैदल मार्गो का निर्माण किया गया था। सन् 1969 में हल्द्वानी नैनीताल आने जाने के लिए लोक निर्माण विभाग की ओर से एक किमी भी मोटर मार्ग का निर्माण नहीं किया गया था। वन विभाग वालों ने विभाग की ओर से धानाचूली बैण्ड से मल्ला ओखलकांडा विकास खंड कार्यालय तथा वन विभाग के बंगले तक विभागीय हित में कच्चा मोटर मार्ग का निर्माण सन् 1962 में किया था। मोटर मार्ग के ठीक बने रहने के समय तो यातायात संभव हो जाता था। अपने विधायक काल में बिष्ट ने पदमपुरी से धानाचूली बैण्ड होकर पहाड़पानी तक के मोटर मार्ग निर्माण का कार्य शुरू कराया ताकि हल्द्वानी से ओखलकांडा विकास खंड को आने वाले यात्रियों को सुविधा प्राप्त हो सके। पदमपुरी से धानाचूली बैण्ड तक मोटर मार्ग निर्माण शुरू कराने के बाद उन्होनें पूर्व विधायक द्वारा स्वीकृत कराई हुई मोटर मार्ग को पदमपुरी से

गुनियालेख, च्यूरीगाढ़ तक पुनः अपनी ओर से स्वीकृत कराकर मोटर मार्ग निर्माण कराया था तथा विशाल गौला नदी पर खनस्यूं में मोटर मार्ग व पुल का निर्माण कार्य अप्रैल 1969 में शुरू करवाया। खनस्यूं में गौला नदी में पुल न होने से पुरानी पट्टी चौगढ़ और पट्टी बिसज्यूला के क्षेत्रवासी बारिश के चार माह शेष नैनीताल जनपद के बिल्कुल सम्पर्क में न रहकर कालापानी क्षेत्रवासियों की तरह हो जाते थे।

गोविन्द बल्लभ पंत अंग्रेजी राज्य के समय जिला बोर्ड नैनीताल के प्रथम सदस्य तत्कालीन पट्टी चौगढ़ व विसज्यूला तथा चौभेंसी तथा मल्ली रौ से सन् 1918 में चुने गए। जिला बोर्ड नैनीताल के चेयरमैन भी चुने गए। सदस्य होने के बाद पंत एक बार पैदल मार्ग से ओखलकांडा होकर खनस्यूं से गौला नदी पार करके घोड़े से गरगड़ी तक गए। खराब पैदल सड़कों से चलने में वे दो-तीन जगह घोड़े से गिर गए थे। गौला नदी पार करने में कठिनाई हुई तो नैनीताल लौटते समय चौगढ़ के लोगों से कह गए थे कि गौला में खनस्यूं पर पुल बनवाऊँगा किंतु पंत ने इस क्षेत्र में कोई कार्य नहीं किया। चौगढ़ क्षेत्र के बुजुर्गों ने बिष्ट को सन् 1969 में बताया कि पंत कह गये थे कि खनस्यूं में गौला नदी में पुल और एक अच्छी पैदल सड़क ओखलकांडा से पतलोट तक बनवा दूंगा। किंतु गोविन्द बल्लभ पंत अपना कहे शब्द स्वयं ही भूल गए। बिष्ट ने विधायक निर्वाचित होते ही खनस्यूं में गौला नदी में पुल का निर्माण कार्य 1969 के मई से शुरू करा दिया था। तीन वर्ष में पुल बनवा दिया। जिसका उद्घाटन उ.प्र. के वित्त मंत्री के रूप में 12 अक्टूबर 1972 को नारायण दत्त तिवारी ने किया। ओखलकांडा मल्ला से पतलोट तक मोटर मार्ग निर्माण किए जाने की योजना उ.प्र. के मुख्यमंत्री कमलापति त्रिपाठी द्वारा स्वीकृत करायी गई। बिष्ट के प्रयासों से ही धानाचूली बैण्ड से ओखलकांडा मल्ला तक वन विभाग द्वारा बनाई गई मोटर मार्ग का सरकारीकरण कराकर उ.प्र. सरकार के आदेशानुसार उ.प्र.लोनिवि द्वारा वन विभाग का कच्चा मोटर मार्ग अपना लिया गया। उसको लोक निर्माण विभाग द्वारा अच्छा मोटर मार्ग बनाया गया।[12]

डुंगर सिंह ने 15 नैनीताल खटीमा विधानसभा क्षेत्र से विधायक निर्वाचित होने के पश्चात् मतदाताओं को धन्यवाद देने को क्षेत्र का व्यापक भ्रमण किया तो चौगढ़, विसज्यूला, चौभेंसी तथा रौ पट्टियों के सभी मतदाताओं द्वारा जनहित कार्यों को पूर्ण करने के बारे में बिष्ट के सामने अपनी भावनाएं रखते हुए एक विशेष समस्या से डुंगर सिंह को अवगत किया कि क्षेत्रवासियों को हल्द्वानी मंडी पहुंचने के लिए सैकड़ों कि.मी. घूमकर धानाचूली बैण्ड से होकर या गुनियालेख पदमपुरी होकर हल्द्वानी मंडी जाना पड़ता है। उनके द्वारा दिए जाने वाले कई सुझावों में यह भी एक सरल सुझाव दिया कि पतलोट से दुर्गापीपल, मछली वन होकर चोरगलियां से हल्द्वानी मंडी जाने का मोटर मार्ग यदि बन जाये तो हल्द्वानी मंडी पहुंचने के लिए इस क्षेत्र की यातायात समस्या काफी हद तक सरल हो जाएगी। विशाल गौला नदी पर पुलों का निर्माण विशेषकर खनस्यूं में जल्दी किए जाने के बारे में भी सभी ने बिष्ट से कहा। बिष्ट ने आश्वस्त करते हुए सभी क्षेत्रवासियों यानि मतदाताओं को विश्वास दिलाया कि उनके द्वारा अत्यंत पिछड़े क्षेत्र ओखलकांडा विकास खंड के विकास के लिए सक्रियता पूर्वक कार्य किया जायेगा। ओखलकांडा क्षेत्र पट्टी चौगढ़, विसज्यूला रौ तथा चौभेंसी निवासियों को बिष्ट की सक्रियता पर विश्वास था कि वे

अवश्य उनके क्षेत्र का विकास करेंगे तथा यातायात की सुविधाएं सही करायेंगे।[13]

कुछ दिनों बाद बिष्ट तहसील खटीमा के मतदाताओं को धन्यवाद देने तहसील खटीमा में व्यापक भ्रमण में गए। खटीमा में मूल निवासी राणा थारू जनजाति के अलावा हजारों की संख्या में पंजाब से शरणार्थी सिख समुदाय वाले बसाए जा चुके थे। पूर्वी बंगाल से शक्तिफार्म क्षेत्र में हजारों की संख्या में बंगाली शरणार्थी बसाये गये थे। खटीमा तहसील के नानकमत्ता में लगभग पांच सौ साल पूर्व महान संत गुरूनानक देव कई माह रूककर वहां से चोरगलिया के पैदल रास्ते से चलकर मछली वन होते हुए दुर्गापीपल पहुंचे। वहां लधिया नदी पार कर मंगललेख ग्राम में पहुंचे। मंगललेख ग्राम की ऊँचाई पर पहुंचकर उनको उस ग्राम का प्राकृतिक दृश्य सुन्दर लगा। गुरूनानक देव ने ग्रामवासियों से अनुरोध किया कि वे अपनी कुछ भूमि उनको प्रदान करें तो वे यहां पर गुरूद्वारा स्थापित करेगें।

ग्राम मंगललेख वालों ने गुरूनानक देव को काफी भूमि प्रदान कर दी। उस भूमि पर गुरूनानक देव ने गुरूद्वारे के निर्माण का शिलान्यास किया एवं रीठे का पेड़ लगाया, तब रीठे के फल आने आरंभ हुए। उस मीठे रीठे के पेड़ के नाम से मंगललेख के गुरूद्वारा का नाम ही गुलिया रीठा गुरूद्वारा मंगललेख (रीठा साहब) हो गया है। आज सारे देश व विदेशों से सिख लोग गुलिया रीठा गुरूद्वारा मंगललेख (रीठा साहब) में अरदास के लिए पहुंचते हैं।[14]

बिष्ट जब मत्था टेकने नानकमत्ता अपने भ्रमण के समय पहुँचे तो वहां हजारों की संख्या में सिख परिवार उपस्थित थे। सबको बिष्ट के नानकमत्ता गुरूद्वारा में पहुंचने की सूचना पहले से थी। डुंगर सिंह को शत-प्रतिशत सिख भाइयों का मतदान प्राप्त हुआ था। सिख समुदाय ने बिष्ट से विशेष अनुरोध किया कि सितारगंज से चोरगलिया होते हुए मछली वन होकर दुर्गापीपल तक लधिया नदी के किनारे तक मोटर मार्ग बनवा दीजिए। इससे खटीमा तहसील के अलावा सारे देश व विदेश में बसे सिख समुदाय वाले महान संत गुरूनानक देव द्वारा सैकड़ों वर्ष पूर्व स्थापित गुलिया रीठा गुरूद्वारा मंगललेख (रीठा साहिब) तक सरलता से पहुंच सकेंगे। बिष्ट ने कहा कि वे इस सम्बन्ध में अवश्य प्रयास करेंगे।[15]

बिष्ट द्वारा ओखलकांडा क्षेत्र पट्टी चौगढ़, विसज्यूला, मल्ली रौ व पट्टी चौभेंसी के क्षेत्रवासियों को हल्द्वानी मंडी तक सरलता से पहुंचने तथा यातायात सुविधा होने की मांग तथा सिख भाइयों द्वारा गुलिया रीठा गुरूद्वारा तक पहुंचने के लिए दुर्गापीपल तक मोटर मार्ग बनाने हेतु मांग पर अपना ध्यान केन्द्रित कर 17 मार्च 1969 को बिष्ट ने मुख्यमंत्री चन्द्रभान गुप्ता के समक्ष प्रस्ताव प्रस्तुत करके उनसे विशेष अनुरोध किया कि मझौला से मोरनौला तक मोटर मार्ग के निर्माण की स्वीकृति प्रदान की जाए। मुख्यमंत्री गुप्ता ने उ.प्र. के मुख्य अभियन्ता लोनिवि को बुलाकर बिष्ट के सामने आदेश किया कि मझौला-मोरनौला मार्ग का आगणन चार माह के अंतर्गत बनाकर उनके सामने प्रस्तुत करें।[16]

लो.नि.वि. नैनीताल द्वारा आगणन का कार्य प्रारंभ भी हो गया। कांग्रेस राजनीति में उथल-पुथल होने के कारण चन्द्र भान गुप्ता ने अप्रैल 1969 में मुख्यमंत्री पद से त्यागपत्र दे दिया। उनके स्थान पर टी.एन. सिंह नए मुख्यमंत्री बने। आगणन भी बरसात के मौसम के कारण जुलाई से अक्टूबर तक बंद हो गया। किंतु बिष्ट के लगातार सक्रिय

रहने से आंगणन पांच जनवरी 1970 को प्रस्तुत हो गया। किंतु उ.प्र. प्रशासन का कार्य शिथिल होने से इसमें प्रगति नहीं हो सकी। अक्टूबर 1971 में कमलापति त्रिपाठी के मुख्यमंत्री बनने पर बिष्ट ने मोरनौला-मझोला मोटर मार्ग के बारे में मुख्यमंत्री त्रिपाठी को घटना की सारी जानकारी दी कि तराई तथा पिछड़े पर्वतीय क्षेत्र के व्यापक हित में 6 करोड़ रूपयों की लागत तथा 205 कि.मी. लम्बा मोटर मार्ग का निर्माण करना आवश्यक है। कमलापति त्रिपाठी मुख्यमंत्री पर्वतीय विकास के प्रति बहुत रूचि लेते थे। उन्होंने तत्कालीन वित्त मंत्री तिवारी को बुलाया। बिष्ट के सामने उनको सलाह दी कि वे तथा बिष्ट मोरनौला-मझोला मार्ग के निर्माण हेतु विचार-विमर्श कर मार्च, 1972 के बजट में समायोजित करने का प्रस्ताव तैयार करें। मुख्यमंत्री ने बिष्ट के प्रस्ताव पर अपनी सहमति वित्त मंत्री को देते हुए कहा कि इस मोटर मार्ग निर्माण से नैनीताल के तराई क्षेत्रवासियों, सिख भाइयों तथा अत्यंत पिछड़े पर्वतीय क्षेत्र के क्षेत्रवासियों को यातायात सुविधा मिलेगी। वित्त मंत्री तिवारी और बिष्ट ने विचार विमर्श किया। बिष्ट ने वित्त मंत्री तिवारी को एक विशेष सुझाव देते हुए कहा कि मोटर मार्ग का नाम वे अपने बजट भाषण में यह कहने की कृपा करें कि पीलीभीत, नैनीताल तथा अल्मोड़ा के पिछड़े क्षेत्रों को यातायात का भारी लाभ मिलेगा। जिले के मझोला से जिला अल्मोड़ा के मारेनौला तक बिष्ट ने वित्त मंत्री से कहा कि वे उक्तानुसार अपना बजट भाषण पढ़ेंगे तो विधानसभा में विरोध नहीं होगा। मोटर मार्ग की लम्बाई 205 किमी नैनीताल जिले की तराई तथा पर्वतीय क्षेत्र के बताने पर तो विधान सभा में भारी विरोध हो जाएगा। वित्त मंत्री तिवारी ने बिष्ट द्वारा सुझाव के अनुसार मोटर मार्ग का नाम जिला पीलीभीत के मझोला से जिला अल्मोड़ा के मोरनौला तक का नामकरण हंसते हुए पसंद किया। इस मोटर मार्ग में पीलीभीत, नैनीताल तथा अल्मोड़ा तीन जिलों के विकास की चर्चा आ गई।[17]

मुख्यमंत्री कमलापति त्रिपाठी के निर्देशन के अनुसार वित्त मंत्री तिवारी द्वारा 15 मार्च 1972 के बजट भाषण में विधानसभा को अवगत किया कि पीलीभीत जनपद के मझोला से अल्मोड़ा जनपद के मोरनौला तक छह करोड़ रूपयों (60000000) की लागत से तराई क्षेत्र तथा पर्वतीय क्षेत्र में यातायात की भारी सुविधा 205 कि.मी. मोटर मार्ग के निर्माण किए जाने से हो जायेगी। इससे पूर्व बिष्ट ने अपना प्रस्ताव विधानसभा में प्रस्तुत कर विधानसभा से मझोला-मोरनौला मोटर मार्ग के निर्माण योजना हर्ष ध्वनि से विधानसभा द्वारा स्वीकार कर दी गई।[18]

25 मई 1972 को मोरनौला-मझोला मोटर मार्ग का उद्घाटन मोरनौला में बिष्ट ने किया। मोटर मार्ग का निर्माण कार्य मझोला से प्रारंभ भी हो गया। बिष्ट ने सन् 1975 से विधायक न रहने के बाद कांग्रेस तथा भाजपा के विधायकों ने उक्त मोटर मार्ग निर्माण में प्रगति कराने में कोई दिलचस्पी नहीं रखी। नारायण दत्त तिवारी ने भी मोटर मार्ग के निर्माण को शीघ्र पूर्ण कराने में शिथिलता जैसी बनाए रखी। बिष्ट समय-समय पर नारायण दत्त तिवारी को स्मरण कराते रहते थे कि उनके वित्त मंत्री के रूप में मोटरमार्ग उनके द्वारा विधायक के रूप में स्वीकृत करवाई गई थी। बिष्ट बताते थे कि 40 वर्ष से कछुवा गति से मोरनौला-मझोला मोटर मार्ग निर्माण होने से डुंगर सिंह बहुत दुःखी रहते थे किंतु बिष्ट को यह एहसास होता ही रहता था कि उनके विधायक काल में

मोरनौला-मझोला ऐतिहासिक मोटर मार्ग का निर्माण संभव हो सका। उनका विश्वास है कि मोटर मार्ग निर्माण पूर्ण हो जाएगा।[19]

बिष्ट के जीवन को देखा जाए तो वे एक मध्यम परिवार से आते थे तथा पर्वतीय क्षेत्र होने के कारण उनका जीवन काफी संघर्षपूर्ण रहा। पर्वतीय क्षत्रों में किसी भी प्रकार के आवागमन की सुविधा नहीं थी। एकाध सड़के या परिवहन के साधन थे भी तो केवल अंग्रेज अफसरों के लिए होते थे। आजादी के बाद भी पर्वतीय क्षेत्रों की उपेक्षा होती रही चाहे यातायात के साधन हो या सड़कों का निर्माण, विद्यालय या स्वास्थ केन्द्र इसलिए बिष्ट अपने कार्यकाल में सड़कों के निर्माण में मुख्य भूमिका निभाई । उन्होंने श्रमदान के द्वारा ही कई किलोमीटर तक सड़कों का निर्माण करवाया। स्थानीय जनता के सहयोग से ही वे इस कार्य में सफल हो सके।

1949 में प्रदेश सरकार द्वारा मोटर मार्ग निर्माण को स्वीकृत दे दी गयी। जब यह बात बिष्ट को पता चली कि संयुक्त प्रांत की सरकार द्वारा नैनीताल के लोक निर्माण विभाग को मल्ला रामगढ़ से तल्ला रामगढ़ तक के मोटर मार्ग का अतिशीघ्र इस्टीमेट बनाकर लखनऊ भेजने के आदेश हुए हैं, तो बिष्ट आगर चौभेंसी के लोगों को अपने साथ लेकर 1 मई, 1949 को नैनीताल पहुँच गये थे। चूंकि ग्रीष्मकालीन राजधानी नैनीताल होने के कारण संयुक्त प्रांत की सरकार इस समय नैनीताल पहुॅच जाती थी। अत: डुंगर सिंह बिष्ट ने संयुक्त प्रांत के प्रधानमंत्री गोविन्द बल्लभ पंत से नैनीताल पहुँच कर भेंट करी तथा उन्हें अवगत कराया कि आगर चौभेंसी में लाखों कुंतल आलू व फल की खेती होती है किंतु केवल मोटर मार्ग न होने से मंडी हल्द्वानी पहुँचकर आलू व फल की कीमत किराए में चली जाती है। काश्तकारों को कुछ भी लाभ नहीं मिलता है। यदि रामगढ़ से मुक्तेश्वर तक मोटर मार्ग का निर्माण हो जाए तो आगर चौभेंसी क्षेत्र वालों को काफी लाभ मिलेगा।

अपने अथक प्रयासों के फलस्वरूप तथा स्थानीय जनता के सहयोग व श्रमदान से वे 10 कि.मी. रामगढ़-मुक्तेश्वर मोटर मार्ग का निर्माण सम्पन्न करवा सके। इस मोटर मार्ग के श्रमदान का शुभारंभ उन्होनें महामहिम के.एम.मुन्सी से करवाया तथा 25 मई 1950 को मोटर मार्ग का उद्घाटन गोबिन्द बल्लभ पंत द्वारा करवाया गया था। इसी प्रकार अपने अथक प्रयासों से वे भटेलिया, पहाड़पानी मोटर मार्ग को भी श्रमदान से पूरा करवा सके तथा खन्स्यूं मोटर मार्ग व गौला पुल का निर्माण भी उन्होंने करवाया मोरनौला मझोला मोटर मार्ग का निर्माण भी उन्होंने स्थानीय जनता के सहयोग से किया वे सदैव अपने क्षेत्रों का भ्रमण करते रहते थे तथा स्थानीय जनता से अवगत होते व उन्हें आश्वस्त भी करते रहते थे तथा लोगों को उनपर तथा उनकी सक्रियता पर विश्वास था कि वे उनके क्षेत्र का विकास अवश्य करेगें क्योंकि बिष्ट सदैव स्थानीय जनता के सहयोग के लिए तत्पर रहते थे।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. भाकुनी ,हीरा सिंह, पूर्वोक्त 231
2. चंद, एस., आधुनिक भारत का इतिहास, पृष्ठ 431
3. चन्द्र , विपिन, आधुनिक भारत का इतिहास , पृष्ठ 331
4. अहीर, राजीव, स्पेकट्रम आधुनिक भारत का इतिहास, पृष्ठ 239

5. चन्द्र , विपिन, इंडिया स्ट्रगल फॉर इंडिपेन्डेन्स, पृष्ठ 43
6. बोस , सुभाष चन्द्र आजाद हिंद : राइंटिगं एंड स्पीच (1941-43), पृष्ठ 102
7. चन्द्र , विपिन, इंडिया स्ट्रगल फॉर इंडिपेनडेन्स, पृष्ठ 436
8. अहीर, राजीव, स्पेकट्रम, पूर्वोक्त, पृष्ठ 246
9. भाकुनी, हीरा सिंह, पूर्वोक्त, पृष्ठ 321
10. चंद , एस., पूर्वोक्त, पृष्ठ 450
11. भाकुनी, हीरा सिंह, पूर्वोक्त 250
12. साक्षात्कार, गंगा सिंह बिष्ट, दिनांक 26.7.2018
13. साक्षात्कार, भागीरथी बिष्ट, दिनांक 25.4.2018
14. साक्षात्कार, सुषमा बिष्ट, दिनांक 20.5.2018
15. उत्तर प्रदेश विधान सभा कार्यवाही के दस्तावेज, दिनांक 5.6.1970
16. भाकुनी, हीरा सिंह, पूर्वोक्त, पृष्ठ 227
17. भाकुनी, हीरा सिंह, पूर्वोक्त, पृष्ठ 329
18. साक्षात्कार, भागीरथी बिष्ट, दिनांक 27.8.2018
19. साक्षात्कार, सुषमा बिष्ट, दिनांक 26.09.20182.

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

राजा की नियुक्ति के सिद्धान्त एवं शिक्षा संबंधी शुक्रनीतिसार के राजनीतिक विचारों का अध्ययन

• अमरजीत सिंह
•• महेन्द्र कुमार द्विवेदी

सारांश- शुक्र नीतिशास्त्र में प्राप्त शिक्षा संबंधी तथ्य मौलिक है तथा गुणों की दृष्टि से प्रशंसा योग्य है। शुक्र की शिक्षा व्यवस्था उदार, नैतिक, तथा मानवीय गुणों से परिपूर्ण है तथा युवराज व राजा को मानसिक, शारीरिक, सैनिक तथा आध्यात्मिक गुणों से पूर्ण बनाने में सहायक हैं। हम कह सकते है कि शुक्र ने राज्य व्यवस्था के सफल संचालन हेतु राजा एवं युवराज की शिक्षा को आवश्यक एवं उत्तम साधन मान्य किया है।

मुख्य शब्द- राजा, नियुक्ति, सिद्धान्त, शिक्षा संबंधी, राजनीतिक विचार

शुक्रनीतिसार में शुक्र ने अनेक स्थलों पर उत्कृष्ट मौलिकता का परिचय दिया है। शुक्रनीतिसार में अनेक महत्वपूर्ण विषय हैं, जैसे राजा के कर्तव्य, राज्य की उत्पत्ति का सिद्धान्त, कर्म, राजा की सुरक्षा, राज्य उत्तराधिकारी, मन्त्रिपरिषद के निर्माण के सिद्धान्त एवं अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों पर व्यक्त विचार आदि में शुक्र की विशेषता परिलक्षित होती है। आचार्य शुक्र ने अपने ग्रन्थ में राजनीतिक समाज की स्थिरता के लिये प्रत्येक व्यक्ति को स्वधर्म में स्थिर रखने की प्राथमिकता दिया है, जिससे स्पष्ट होता है कि आचार्य ने राजनीति के साथ ही समाज संगठन संबंधी मत को भी बड़ी गंभीरता के साथ प्रतिपादित किया है।

शुक्रनीतिसार के अनुसार राजा को राज्य के सात अंगों में से प्रमुख स्थान प्राप्त होता है। राज्य के सभी अंगों में प्रधान होने के कारण राजा का सर्वोच्च्य स्थान होता है। शुक्र ने राजा को राज्य रूपी वृक्षी की जड़ एवं राज्य रूपी शरीर के सिर की संज्ञा दी है। राजा में देवताओं के अंश सन्निहत होते हैं। राज्य की सम्बृद्धि एवं विकास का प्रमुख स्रोत राजा ही होता है। जिस प्रकार चन्द्रमा समुद्र को आनन्द प्रदान करता है उसी प्रकार राजा सम्पूर्ण राज्य की प्रजा के नेत्रों को आनन्द प्रदान करता है। शुक्र की मान्यता है कि उत्तम एवं नीतिवान राजा के अभाव में प्रजा समुद्र में तैरती हुई उस नाव के समान होती है जिस नाव में नाविक या मल्लाह न हो।

राजा इन्द्र की भांति लोकरक्षक, वरूण की तरह सबको पुष्ट करने वाला और चन्द्रमा की तरह सभी को आनंदित करने वाला, वायु के समान अच्छे कर्मों की प्रेरणा प्रदान करने वाला, कर एकत्र करने वाला होता है। राजा अधर्म का नाश करने वाला तथा धर्म का प्रवर्तक होता है। राजा अग्नि की भांति शुद्ध होता है। जल के समान सबका भरण-पोषण करने वाला होता है। वरूण के समान अपने धन से सभी को पुष्टता प्रदान

• संकायाध्यक्ष, ग्रामीण विकास एवं व्यवसाय प्रबन्धन संकाय, म.गाँ.चि.ग्रा.वि.वि., चित्रकूट, सतना, म.प्र.
•• शोध छात्र, राजनीति विज्ञान, म.गाँ.चि.ग्रा.वि.वि., चित्रकूट, सतना, म.प्र.

करने वाला होता है। चन्द्र की किरण की तरह अपने कर्मों एवं गुणों से सभी को आह्लादित करने वाला होता है।[1]

शुक्र के अनुसार राजा में निम्नलिखित को प्रतिप्रबंधित किया गया है तथा अवगुण के रूप में देखा जाता है यथा– मदिरापान करना, जुआँ खेलना अवगुण माना जाता है। राजा को सुख प्राप्त करने के लिये काम, क्रोध, लोभ, मान और मद को त्याग करना चाहिए। राजा को सदैव प्रजा के सुख समृद्धि का ध्यान रखना चाहिए। अत: जिस राजा में प्रजा का अनुराग होता है और राजा प्रजा के पालन में तत्पर रहता है तथा विनीत है, वह राजा अत्यन्त सुख को प्राप्त करता है तथा उसका उपभोग करता है। शुक्र ने राजा को निर्देशित किया है कि धन विषयरूपी वन में मद से दोड़ते हुए इन्द्रिय रूपी हाथी को राजा ज्ञान रूपी अंकुश से वश में करना चाहिये।

प्राचीन भारतीय राजीनति पर मूलत: इतिहास और इस प्रकार के अन्य विषयों से सम्बद्ध विद्वानों ने जो काम किया है उससे शोधकर्ता को दिशा प्राप्त हुई है। लेकिन राजनीतिशास्त्र की परिधि में रहकर विषय का अध्ययन अनिवार्यता बन गया है। इसी अनिवार्य की पहल में गवेषक ने शुक्रनीतिसार पर शोध करने का निर्णय लिया। प्राचीन भारतीय संदर्भ ग्रन्थों का अध्ययन व्यापक रूप से अछूता पड़ा है। अध्ययन से ज्ञात होता है कि अभी तक शुक्र जैसे विख्यात, लोकप्रिय एवं महत्वपूर्ण राजनीतिक विचारक की ओर शोधकर्ताओं का ध्यान आकृष्ट नहीं हुआ है। परिणामस्वरूप शुक्र पर मौलिक एवं ठोस कार्य नही हो सका। अत: इस अध्ययन का उद्देश्य इस अभाव की पूर्ति करना था।

शोध पद्धति- प्रस्तुत अध्ययन अपने स्वभाव में एक मौलिक शोध से संबंधित अध्ययन है। प्रस्तुत शोध विषय का अध्ययन विश्लेषणात्मक, तुलनात्मक एवं वर्णनात्मक पद्धति द्वारा किया गया है। अध्ययन में शुक्र द्वारा प्रणीत पुस्तक शुक्रनीतिसार का गहन अध्ययन ही मूलाधार है। हिन्दू काल के राजनीतिक इतिहास पर लिखे गये अनेक ग्रन्थों, ग्रीक लेखकों के वर्णन तथा विख्यात विद्वानों के अभिमतों आदि से भी विषय से संबंधित उपलब्धर जानकारी का उपयोग किया गया है। शोध के तथ्यों के संकलन के लिए ऐतिहासिक प्रणाली का उपयोग किया गया है।

शुक्रनीतिसार ने राजा की नियुक्ति के सम्बन्ध में प्राचीन भारतीय परम्परा का अनुकरण करते हुए अनुवांशिक राजतांत्रिक व्यवस्था स्वीकार किया है तथा उसी के अनुसार ही राजा की नियुक्ति के सिद्धान्त का उल्लेख किया है। शुक्र द्वारा इंगित प्रमुख सिद्धान्तों निम्नानुसार हैं –

1. **पैतृत सिद्धान्त-** शुक्र के अनुसार राजा सदैव राजकुल से संबंधित होना चाहिये, जिसका जन्म राज घराने में हुआ हो तथा लालन पालन भी राज घराने में हुआ हो।

2. **ज्येष्ठता का सिद्धान्त-** शुक्र ने राज्य में व्यवस्था बनाये रखने के उद्देश्य से यह स्वीकार करते हैं कि राजकुल में राजा के ज्येष्ठपुत्र को ही उत्तराधिकारी/ राजा नियुक्त किया जाना चाहिये। शुक्र ने राजा की नियुक्ति हेतु ज्येष्ठता के सिद्धान्त को भी मान्यता दी है तथा कहा है कि यदि राजकुल में अनेक पुरूष हो तो उनमें से सर्वाधिक ज्येष्ठ राजा बनाने के योग्य होता है तथा शेष सभी राजा के सहायक होंगे। राज्य की वृद्धि में ऐसे सहायक अन्य प्रकार के सहायकों की तुलना में अधिक मददगार होते हैं। ज्येष्ठ पुत्र की

उत्तराधिकारी बनाने की परम्परा भारतीय इतिहास की एक वास्तविकता है और इस सिद्धान्त का समर्थन अनेकानेक ग्रन्थों में उपलब्ध है – यथा रामायण, महाभारत, अर्थशास्त्र आदि।

3. **शारीरिक परिपूर्णता का सिद्धान्त-** शुक्र ने राजा की नियुक्ति हेतु शारीरिक परिपूर्णता सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है, जिसके अनुसार राजा की नियुक्ति हेतु ज्येष्ठता के साथ शारीरिक पूर्णता का होना आवश्यक है। यदि ज्येष्ठ पुत्र शारीरिक रूप से स्वस्थ नहीं है तो छोटे पुत्रों को चुना जाना चाहिये। यदि ज्येष्ठ पुत्र, अंधा, नपुंसक, कोढ़ी, गूँगा हो तो वह राजा की नियुक्ति हेतु उपयुक्त नहीं माना जाता है। शुक्र के अनुसार अन्य भारतीय ग्रन्थों में भी इस सिद्धान्त को स्वीकार किया गया। महाभारत में भी शारीरिक परिपूर्णता के सिद्धान्त को स्वीकार किया गया है।

4. **चारित्रिक योग्यता का सिद्धान्त**– शुक्र द्वारा प्रतिपादित राजा की नियुक्ति के सिद्धान्त में चारित्रिक योग्यता का भाव सम्मिलित है। शुक्र के अनुसार राजा में योग्यता सिद्धान्त में कर्मकौशल के साथ चारित्रिक योग्यता का होना आवश्यक है। चारित्रिक योग्यता के सिद्धान्त को शुक्र से पूर्व भी भारतीय चिन्तकों ने स्वीकार किया है।

महाभारत में इस सिद्धान्त को स्पष्ट रूप से स्वीकार किया गया। राजा अयाति ने पुत्र तथा उसका समर्थन करने वाले अन्य दुर्गुणीपुत्रों को चारित्रिक योग्यता के अभाव में राजा की नियुक्ति से वंचित कर दिया गया था।[2]

डॉ. श्याम लाल पाण्डेय के अनुसार बैदिक साहित्य में भी राज्याधिकार हेतु इस सिद्धान्त पर विशेष बल दिया गया है।[3] अर्थशास्त्र का भी सिद्धान्त है कि जो पुत्र उचित गुणों से परिपूर्ण हो उसे राजा बनाया जाये।

शुक्र के बाद के आचार्य सोमदेव सूरि के अनुसार असंस्कारी राजपुत्र, राजा के पद पर नियुक्ति करने के योग्य नहीं होते हैं।[4]

5. **राज्याभिषेक का सिद्धान्त**– राज्याभिषेक के बाद ही राजा को वैधानिक मान्यता प्राप्त होती है अर्थात राजा अपने राज्य सत्ता को उपभोग कर सकता है। शुक्र नीतिसार में उस सिद्धान्त का उल्लेख स्पष्ट रूप से नहीं किया गया है। इस ग्रन्थ के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि शुक्र ने अभिषेक द्वारा या इसके अभाव में भी राजपद के प्राप्ति को मान्यता प्रदान किया है।

शुक्र ने यथार्थवादी दृष्टिकोण अपनाते हुये जन अभिषेक को भी मान्ता प्रदान की है। प्राचीन वैदिक काल से लेकर मध्य काल तक के ग्रन्थों में राजा के अभिषेक सिद्धान्त को मान्यता दी गई है।

शुक्र ने अपने ग्रन्थ में राज्याभिषेक सिद्धान्त का वर्णन नहीं किया है परन्तु इस सिद्धान्त में निहित वैधानिक उद्देश्य को अवश्यक स्वीकार किया है। इस सिद्धान्त के साथ कि राजा बनने वाला राज पुरूष अपने राजनीतिक कर्तव्यों व दायित्वों के पालन की प्रतिज्ञा करे।

राजा अथवा युवराज की शिक्षा- शुक्र ने उत्तम शासक के निर्माण हेतु राजा या युवराज की शिक्षा को स्वीकार किया है। शुक्र एवं कौटिल्य यह मानते हैं कि राजकुल के स्थायित्व के लिये युवराज या राजा की शिक्षा आवश्यक है। शुक्र का मत है युवराज या

राजा को सभासदों या मंत्रियों से शिक्षित कराया जाना आवश्यक है। उन्हें सभी विधाओं में पारंगत किया जाना चाहिये तथा विनम्र बनाया जाना चाहिये। राजा को क्लेषों, कठोर बचनों व दण्ड सहन करने में सक्षम होना चाहिये।

शुक्र की शिक्षा प्रणाली में इस प्रकार के पर्यावरण एवं भौतिक वातावरण की विशेष महत्व स्वीकार किया गया है। जो राजपुत्रों को जीवन के प्रति उदारवादी, आशावादी के साथ उनको विचारों, शिष्टाचार एवं भावनात्मक रूप से राजकीय संस्कार प्रदान करता है।[5]

मनु, कौटिल्य एवं शांतिपर्व, याज्ञवल्क्य, अग्नि पुराण तथा कामन्दक में विद्या के चार विभाग को मान्य किया है। शुक्र ने भी इन चारो विद्याओं को स्वीकार किया है। कौटिल्य ने आन्वीक्षकी के अन्तर्गत नास्तिक दर्शन, योग दर्शन, साख्यदर्शन को प्रतिपादित किया है। जबकि शुक्र ने आन्वीक्षकी में वेदान्त आत्मविद्या तथा तर्क शास्त्र को स्वीकार किया है।

शुक्र ने त्रयी में 14 विद्याओं को मान्यता प्रदान की है। जिनमें चार वेद, वेदांग, न्याय, मीमांशा, पुराण तथा धर्मशास्त्र सम्मिलित है। जबकि कौटिल्य अर्थशास्त्र में 11 विद्याओं एवं याज्ञवल्क्य स्मृति में त्रयी में 14 विद्याओं को स्वीकार किया गया है।

शुक्र ने तृतीय मुख्य विद्या विभाग वार्ता के अन्तर्गत कृषि, व्याज, वाणिज्य तथा गो पालन नाम के चार विषय को समाहित किया है। जबकि कौटिल्य ने इस विभाग में ब्याज को छोड़कर शेष तीन का वर्णन किया है।

शुक्र ने चतुर्थ विद्या विभाग दण्डनीति का वर्णन करते हुये बताया है कि दमन को दण्ड कहते है तथा उसकी नीति को दण्डनीति। शुक्रनीतिसार ने विविध प्रसंगों में दण्ड तथा नीति का जो महत्व प्रतिपादित किया है वह दण्डनीति विद्या का ही महत्व है। शुक्र ने तत्कालीन समाज में चल रही कलाओं एवं विद्याओं की संख्या 64 व 32 बताई है। वस्तुत: शुक्र ने विद्याओं के प्रमुख प्रतिभागों को मान्यता दी है परन्तु उनका मानना है कि विद्यायें व कलाये अनंत हैं। शुक्र का दर्शन है कि बुद्धिमत्ता पर अनुवाक अर्थात वेद का ज्ञान को विजयी नहीं होना चाहिये बल्कि लोक व्यवहार में इसकी उपयोगिता होना चाहिये।

प्रो. सरकार के अनुसार 'मानव जीवन की कला अनेक सामाजिक विज्ञानों से निर्मित है। अत: चाहे राज्यों के संस्थाओं के लिये हो अथवा साधारण विद्यार्थियों के लिये पाठ्यक्रम में अनेकानेक विषयों की जरूरत एवं उपयोगिता होती है।'[6]

शुक्र ने लौकिक ज्ञान एवं व्यावहारिक ज्ञान को दृष्टिगत रखते हुये विभिन्न विषयों पर जोर दिया है। परन्तु राजा की दृष्टि से नीतिशास्त्र को दूसरे शास्त्रों की तुलना में श्रेष्टतम स्वीकार किया है।

उपरोक्त अध्ययन एवं शुक्र नीतिशास्त्र में प्राप्त शिक्षा संबंधी तथ्य मौलिक हैं तथा गुणों की दृष्टि से प्रशंसा योग्य है। शुक्र की शिक्षा व्यवस्था उदार, नैतिक, तथा मानवीय गुणों से परिपूर्ण है तथा युवराज व राजा को मानसिक, शारीरिक, सैनिक तथा आध्यात्मिक गुणों से पूर्ण बनाने में सहायक हैं। निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि शुक्र ने राज्य व्यवस्था के सफल संचालन हेतु राजा एवं युवराज की शिक्षा को आवश्यक एवं उत्तम साधन मान्य किया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. ऋचा वडियार, कौटिलीय अर्थशास्त्र परम्परा में शुक्रनीतिसार का स्थान, शो.प्र. 2014, पृ. 141
2. उद्योग 149/7-8, 10
3. डॉ. श्यामलाल पाण्डे , जनतंत्रवाद, रामायण व महाभारत कालीन पृ. 50-51
4. रामायण बालकाण्ड, 38/20-21, अयोध्याकाण्ड 38/23
5. प्रो. सरकार, शुक्रनीति, टि.3, पृ. 59
6. सरकार, शुक्रनीति, दि. 2, पृ. 113

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

जोधपुर राज व्यवस्था में धार्मिक प्रतीक का महत्वः विशेष सन्दर्भ- कुल देवी नागणेचियाँ माँ

• अर्चना शर्मा

सारांश- राजस्थान के राजपूत राज्यों में प्रमुख जोधपुर राज्य, जो राठौड़ राजवंश से सम्बन्धित है वस्तुतः शुद्ध आर्य माने जाते है। राजस्थान के राठौड़ राजवंश स्वयं को सूर्यवंशी मानते है तथा स्वयं को भगवान श्री रामचन्द्र के पुत्र कुश से अपनी उत्पत्ति बतलाते है। राठौड़ राजवंश आदिकाल से ही शक्ति-पूजा के अनन्य उपासक रहे तथा शक्ति की उपासना एवं स्तुति करते आये है। इस प्रतापी राठौड़ राजवंश की कुलदेवी नागणेचियाँ माँ है, जिनकी पूजा-अर्चना राठौड़ अपने सर्वांगीण विकास एवं वृद्धि हेतु कालान्तर से अब तक करते आ रहे है। शक्ति की प्रतीक देवी या कुलदेवी की अराधना राठौड़ राजवंश को मारवाड़ में स्वंतत्र एवं सम्प्रभु राजनैतिक इकाई के रूप में स्थापित करने का मूलाधार रही है। राठौड़ शासकों के द्वारा अपने शासक पद की वैधता एवं प्रतिष्ठा के लिए कुलदेवी की उपसना को स्वीकार किया। राठौड़ शासकों ने अपने राजकीय ध्वज पर कुलदेवी नागणेचियाँ माँ के दूसरे रूप अर्थात् श्येन पक्षी के चिह्न को अंकित किया गया है जो इसका प्रतीक है कि कुलदेवी राठौड़ वंश एवं शासक पद की वैधता एवं प्रतिष्ठा की सदैव रक्षा करती हैं राठौड़ राजवंश ने अपने वंश की प्रतिष्ठा एवं राजपद की वैधता के साथ-साथ शक्ति के नवसंचार, नई सोच, नव जागरण तथा सद्बुद्धि, सही सीख हेतु कुलदेवी की पूजा-वंदना को विशेष महत्व दिया है।

मुख्य शब्द- राजवंश, कुलदेवी, वैधता, प्रतिष्ठा, सम्प्रभुता, पूजा-वंदना, धार्मिक प्रतीक, उपासक

धार्मिक प्रतीक एवं दैवीय सम्बन्ध तथा संरक्षण का सिद्धान्त राजनैतिक संस्कृति में विशेषकर राजतंत्र में उपयुक्त होता आया है। राज्य निर्माण की प्रक्रिया, राजतत्व की अवधारणा एवं प्रभुसत्ता की स्थापना में इन प्रतीकों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। यही मान्यता रही है कि जब कोई शासक या राजवंश वैधता एवं सम्प्रभुता के लक्ष्य को प्राप्त करना चाहता है तो वे अनेक प्रकार के दैवीय प्रतीकों से स्वंय को सम्बद्ध करता है।

राजपूताना के राजपूत राज्यों में धार्मिक प्रतीक एवं दैवीय सम्बन्ध तथा संरक्षण को स्वीकार करने की परम्परा आदिकाल से प्रचलित रही है। राजपूत शासक स्वयं को सूर्यवंशी एवं चंद्रवंशी स्वीकार करते हैं[1] एवं स्वयं को अपने ईष्ट देवता या कुल देवी का सेवक या भक्त या दीवान स्वीकार करते हुए राज-पाट संभालते हैं। उदहराणार्थ मेवाड़ के महाराणा अपने ईष्ट देव एकलिंग जी को राज्य का 'अधिष्ठाता' एवं स्वयं को उनका 'दीवान' मानते हैं[2] एवं जयपुर के शासक भी ईष्टदेव श्री गोविन्द देव जी को जयपुर का वास्तविक शासक और स्वयं को उनका दीवान मानकर ही शासन चलाते है।[3]

जोधपुर का सूर्यवंशी राठौड़ राजवंश आदिकाल से शक्ति के अनन्य उपासक रहे

•सहायक आचार्य, इतिहास एवं भारतीय संस्कृति विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

एवं शक्ति की उपासना एवं स्तुति करते आये है। राठौड़ राजवंश के शासकों ने अनेक धार्मिक प्रतीक अपनायें जिसमें प्रमुख "कुल देवी श्री नागणेचियाँ माँ" है। राठौड़ शासक ईष्ट देवता की अपेक्षा कुल देवी को अपने राज्य का संरक्षक मानकर कुल देवी का सानिध्य स्वीकार करते हैं। राठौड़ों ने युद्धभूमि में शक्ति का आह्वान करके अपने विरद 'रणबंका राठौड़' को फलीभूत किया। राठौड़ों को 'कमधज' उपाधि से भी विभूषित किया गया जिन्होंने रणक्षेत्र में धड़ से सिर अलग हो जाने पर भी जूझते हुए 'जूंझार' बनकर अनुपम ख्याति अर्जित की।[4] इसी प्रतापी राठौड़ राजवंश की कुलदेवी नागणेचियाँ माँ है, जिनकी पूजा-अर्चना राठौड़ अपने सर्वांगीण विकास एवं वंश विस्तार हेतु कालान्तर से अब तक करते आ रहे है।

राठौड़ वंश की कुल देवी नागणेचियाँ माँ का इतिहास, कर्नाटक में चक्रेश्वरी देवी से आरम्भ होकर मारवाड़ के नागाणा गांव में नागणेचियाँ देवी के रूप में मिलता है।

सर्वमंगलमांगल्यै शिवे सर्वार्थसाधिके।
शरण्ये त्रयम्बके गौरी चक्रेश्वरी नमोस्तुते।।

सत् युग में ब्रह्माणी, त्रेतायुग में राठेश्वरी, द्वापर में पंखणी तथा कलयुग में चक्रेश्वरी के नाम से पूजी जाने वाली नागणेचियाँ माँ राठौड़ वंश की कुलदेवी है। इनका दक्षिण का नाम चक्रेश्वरी देवी था और नागाण गाँव में नीम के पेड़ के नीचे स्थापित करने के पश्चात् नागणेचियाँ जी का नाम प्रसिद्ध हुआ।[5]

नागणेचियाँ जी राठौड़ों की कुलदेवी है, इस मत से सभी इतिहासकार सहमत है, परन्तु माताजी की मूर्ति कहां से आई? कौन लाया, कब लाया इत्यादि प्रश्नों पर मतभेद है। यह मतभेद आज से नहीं पहले से ही रहा है, क्योंकि ख्यात साहित्य, इतिहासकार एवं लोक मान्यताओं में विभिन्न मत इस सम्बन्ध में व्यक्त किये गये है। ख्यात साहित्य विशेषकर राठौड़ वंश री विगत, मूदियाड़ री ख्यात में यह मत व्यक्त है कि राव धूहड़ ने करणाटक की यात्रा कर वहां प्रतिष्ठापित चक्रेश्वरी देवी की प्रतिमा, जो कि सोने की थी, उसे लेकर नागाणा गाँव में स्थापित की, लेकिन मन्दिर के आगे अपवित्रता होने से देवी ने अपना मूल स्वरूप बदल दिया और वह सोने से पत्थर में परिवर्तित हो गई।[6]

प्रमुख इतिहासकार जैसे पं. विश्वेशवरनाथ, रेउ, पं. गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, बी. एल. पानगड़िया, कर्नल जेम्स टॉड ने राव धुहड़ के लाने का हवाला दिया है। पं. विश्वेशवनाथ रेउ ने मारवाड़ का इतिहास भाग-1 में लिखा है कि राव धुहड़ यह मूर्ति कन्नौज से लाए थे। राव सीहा की मृत्यु के बाद 'गोयदाने' (कन्नौज के पास) राज्य पर बड़ी रानी के पुत्रों का अधिकार हो गया था और आसनाथ जी को पाली कि तरफ आना पड़ा। अपने पिता के अपमान का बदला लेने के लिए राव धूहड़ ने गोयदाने पर हमला किया पर विफल रहे और वापस आते वक्त 'कर्नाटक' से अपनी कुलदेवी की मूर्ति लाये और नागाणा नामक ग्राम में नीम के पेड़ के नीचे स्थापित किया।[7]

उपर्युक्त ख्यातों एवं इतिहासकारों के विवरणों से हट कर लोक मान्यताओं से ज्ञात होता है कि नागणा गाँव में नागणेचियाँ देवी शिला रूप में स्वत: प्रकट हुई थी। इस सन्दर्भ में अनेक मत-मतान्तर प्रचलित है परन्तु यह सर्वाधिक प्रचलित अवधारणा है। एक बार राव धूहड़ जी को नागाणा की पहाड़ी के निकट स्थित नीम के पेड़ में नाग के

दर्शन हुए और अचानक कुलदेवी की आकाशवाणी सुनाई दी कि यहाँ तुम्हारी कुलदेवी प्रकट होगी परन्तु राव धूहड़ जी को इस बात पर विश्वास नहीं हुआ कि यहाँ पर मेरे कुल की कोई देवी प्रकट होगी? उन्होंने सोचा कि नीम के पेड़ में तो अधिकतर नाग रहते आये है। इसी कारण अपनी कुलदेवी का यहाँ प्रकट होने का उन्हें आभास नहीं हुआ परन्तु रात्रि के समय उनको स्वप्न में एक अद्‌भुत स्थिति का आभास हुआ। दृष्टान्त में देवी ने कहा कि प्रातः काल के समय एक ग्वाला इस पहाड़ के पास गायों को चराते हुए नजर आयेगा ताकि इसी नीम के वृक्ष के पास चरती हुई गायें अचानक विदक जाएगी और धरती हिलती हुई प्रतीत होगी, तब यह समझना कि यहाँ राठौड़ों की कुलदेवी प्रकट हुई है। प्रातः काल के समय ऐसा ही संयोग हुआ कि धरती काँपने लगी और धरती के गर्भ में से एक मूर्ति बाहर आने लगी। देवी ने प्रकट होने से पूर्व कहा था कि "हुंकारो (ध्वनि) मत करना" परन्तु इस कुदरती संयोग से गड़गड़ाहट के कारण एक गवाला भौंचका होकर इधर-उधर दौड़ने लगा तो किसी व्यक्ति ने टिचकारा (पशु रोकने की ध्वनि विशेष) कर दिया, इसलिए देवी लगभग 2 फुट शिला रूप में प्रकट होकर रह गई।[8]

वस्तुतः ऐसा ही देखने में आया है कि निज मूर्ति आधी तो भूमि के बाहर है तथा शेष भूमि के अन्दर ही है। आज यही मूर्ति निज मन्दिर में विराजमान है। इस घटना के बाद राव धूहड़ जी ने नागणा गाँव में माताजी का मन्दिर बनवाया जो नागणेचियाँ माताजी के नाम से प्रसिद्ध है।

उपलब्ध प्रमाणों के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि नागाणा में नागणेचियां की स्थापना राव धूहड़ के समय में हुई थी परन्तु निश्चित रूप से किस दिन हुई थी, बताना संभव नहीं है। यों नागणेचियाँ जी पूजा संवत 1366 से पूर्व मारवाड़ में आरम्भ हो गई थी। नागाणा में जो राठौड़ उक्त कुलदेवी की पूजा करते हैं, वे पुजारी नागणेचियां राठौड़ कहलाते हैं। उन्हें पीढ़ियों से माताजी की पूजा का अधिकार प्राप्त है ताकि वंशानुगत रूप से यह परम्परा चलती आई है।

(ब) कुल देवी नागणेचियाँ माँ- राजनैतिक प्रतीक के रूप में- राजस्थान के राठौड़ राजवंश की कुलदेवी चक्रेश्वरी, नागणेची या नागणेचियाँ के नाम से प्रसिद्ध है। लोक में इनकी बहुत मान्यता है। प्राचीन ख्यातों और इतिहास ग्रन्थों के अनुसार मारवाड़ के राठौड़ राज्य के संस्थापक राव सीहा के पौत्र राव धूहड़ (विक्रम संवत् 1349-1366) ने सर्वप्रथम इस देवी की मूर्ति स्थापित कर मन्दिर बनवाया।[9] रिर्पोट मर्दुमशुमारी राज मारवाड़ 1894 ई. के अनुसार भी राठौड़ वंश की कुल देवी नागणेचियाँ के नाम से पूजी जाती है। पहले इसका नाम राठेश्वरी या चक्रेश्वरी था। नागणेचियाँ माता राठौड़ राजपूतों की कुलदेवी होने के साथ-साथ यह सम्पूर्ण राठौड़ वंश जैसे - जैन, मुहणौत, घांची, सीखी, प्रजापत एवं अन्य जातियाँ जो राठौड़ वंश से निकली हैं, उन सभी की कुलदेवी है और उनमें सम्पूजित रही है। राठौड़ राजपूतों से निसृत ओस वंश की निम्नलिखित गौत्रों की यह कुलदेवी रही है - चोरडिया, गुलगुलिया, रामपुरिया, भटनेरा, चौधरी, गधैया, गोलेच्छा, सावरणसुखाशामसुखा, गुगलिया, नदिचा, बुच्चा, पारख, साधु, आसाणी, ओस्तवाल, सराफ, मुहणौत, पीचा, छाजेड़ा, भड़गतिया, गड़वाणी, मुरड़िया धूलण्डिया, पोकरणा, घेमावत।[10]

मारवाड़ की राठौड़- राजपूत संस्कृति में कुलदेवी को विशेष मान्यता प्राप्त है। राठौड़ राजवंश अपने राजनैतिक प्रतीक के रूप में अपनी कुलदेवी नागणेचियाँ माँ के प्रति विशेष आस्था एवं सम्मान प्रदर्शन करता है जिसका कारण राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक तीनों है। राजनैतिक दृष्टिकोण से स्पष्ट है कि मारवाड़ में राठौड़ों की सत्ता की स्थापना मध्यकाल में उस समय हुई जब भारत के राजनैतिक क्षितिज पर राजपूतों का सम्प्रभु शासकों के रूप में पराभव हो गया था और तुर्कों ने दिल्ली पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया था। वे भारत के अन्य सभी क्षेत्रों पर अपना आधिपत्य स्थापित करने के लिए प्रयत्नशील थे। विशेषकर तुर्कों ने राजस्थान के राजपूत राज्यों को अपने अधीन करने का प्रयत्न किया क्योंकि ये राजपूत राज्य सामरिक, आर्थिक एवं राजनैतिक दृष्टिकोण से अत्यन्त महत्वपूर्ण थे और तुर्कों द्वारा समस्त भारत पर अधिकार करने का स्वप्न तभी पूर्ण हो सकता था जब तुर्क सम्पूर्ण राजपूत राज्यों को अपने अधीन कर ले जो कि भारत का एक अभिन्न अंग था। ऐसे समय में राजपूत राज्यों के लिए शक्ति ही राज्य व समाज का मूलाधार था। मारवाड़ के राठौड़ वंश के द्वारा स्वयं को स्वतंत्र सत्ता के रूप में स्थापित करने हेतु शक्ति एवं शौर्य पर बल देना आवश्यक था ताकि स्वयं को स्वतंत्र एवं सुदृढ़ राजपूत राज्य के रूप में स्थापित कर भारत की स्वतंत्र राजनैतिक इकाई बन सके तथा तुर्कों का दृढ़ता से सामना किया जा सके। निष्कर्षत: यही कारण कि स्वयं को सम्प्रभु एवं स्वतंत्र शासक के रूप में प्रतिष्ठित करने के लिए धार्मिक प्रतीक स्वरूप राठौड़ राजवंश के द्वारा शक्ति की प्रतीक देवी उपास्य रही।

शक्ति की प्रतीक देवी या कुलदेवी की अराधना राठौड़ राजवंश को एक स्वतंत्र राजनैतिक इकाई के रूप में स्थापित करने का मूलाधार रही है। राठौड़ राजवंश के द्वारा केवल कुल वंश की रक्षा और धन-यश के लिए ही नहीं बल्कि मध्यकाल में सामरिक परिस्थितियों में शक्ति का नवसंचार, सदबुद्धि और सही सीख के लिए कुलदेवी की पूजन-वंदन का महत्त्व बड़ा उल्लेखनीय रहा है। कुलदेवी नागणेचियाँ माँ की अराधना राठौड़ राजवंश के द्वारा अपने वंश की वैधता एवं राठौड़ शासकों के द्वारा अपने शासक पद की वैधता के लिए आवश्यक थी क्योंकि पूर्व-मध्यकाल में जब राठौड़ राजवंश अपने प्रादुर्भाव के प्रारम्भिक चरण में था उस समय समाज एवं समकालीन राजनैतिक परिस्थितियों में अपने वंश की वैधता के लिए राठौड़ शासकों ने स्वयं को शक्ति की देवी नागणेचियाँ माँ के परम भक्त या उपासक के रूप में स्वयं को प्रस्तुत किया एवं साथ ही प्रजा के मध्य भी एवं समकालीन राजनीतिक शक्तियों के मध्य भी अपनी वैधता के लिए राठौड़ शासकों ने नागणेचियाँ माँ को धार्मिक प्रतीक के रूप में अपनाया।

राठौड़ राजवंश के द्वारा माता नागणेचियाँ को कुलदेवी स्वीकार करना राजनीतिक-सामाजिक दृष्टिकोण से भी सरोकार था क्योंकि पूर्व-मध्यकाल में मारवाड़ में राठौड़ वंश की स्थापना से पूर्व राठौड़ वंश एक सामन्ती या जागीरदार के रूप में स्थापित थे लेकिन राठौड़ राजवंश द्वारा स्वयं को शक्ति सम्पन्न स्वंतत्र शासक के रूप में स्थापित करने के लिए स्वयं को कुलदेवी या कुलदेवता के साथ सम्बन्ध स्थापित करना उनकी राजनैतिक व सामाजिक आवश्यकता थी क्योंकि राठौड़ राजवंश के द्वारा स्वयं को अन्य सामन्तों व जागीरदारों से श्रेष्ठ स्थान समाज में प्राप्त करना था इसलिए इन्होंने माँ

नागणेचियाँ को अपनी कुलदेवी के रूप प्रतिष्ठापित किया एवं स्वयं को कुलदेवी का अनन्य भक्त बताया। राठौड़ राजवंश अपनी कुलदेवी के प्रत्येक उत्सव में बड़े गर्मजोशी के साथ शामिल होते हैं और माँ की भक्ति का परम आनन्द उठाते हैं।

नागणेचियाँ देवी का दूसरा रूप श्येन पक्षी है और ऐसी मान्यता है कि देवी माँ श्येन पक्षी का रूप धारण करके राठौड़ शासकों एवं राठौड़ राज्य की रक्षा करती है इस कारण शासकों द्वारा राजकीय ध्वज पर देवी के प्रतीक रूप श्येन पक्षी का चिन्ह अंकित किया गया है[11] जो इसका प्रतीक है कि कुल देवी नागणेचियाँ माँ के द्वारा राठौड़ वंश एवं शासक के पद की वैधता एवं गरिमा की सदैव रक्षा की जाती है। जोधपुर के राठौड़ राजवंश द्वारा अपनी शादी-ब्याह, पुत्र जन्म, गृहप्रवेश आदि शुभ-मांगलिक अवसर पर कुलदेवी का रातिजगा (रात्रि जागरण) किया जाता है जिसमें देवी के पूजन की विशेष व्यवस्था की जाती है। राठौड़ राजवंश परिवार के प्रत्येक सदस्य का इस रातिजगा में उपस्थित होना अनिवार्य होता है। राजवंश के मुखिया द्वारा विशेष पूजा-अर्चना महंत के निर्देशन में सम्पन्न की जाती है।[12] ऐसी मान्यता है कि इस रातिजगा में कुलदेवी की विशेष कृपा राठौड़ राजवंश को प्राप्त होती है, राजपरिवार द्वारा कुलदेवी को प्रसन्न करने का विशेष यत्न किये जाते हैं ताकि कुलदेवी राजपरिवार के कुल वंश की रक्षा, धन-यश एवं प्रत्येक मनोकामनाओं को पूर्ण कर सके।

नागणा स्थित की नागणेचियाँ माता के निज मन्दिर में प्रतिवर्ष चैत्र व आसोज माह के शुक्ल पक्ष में राज्य में प्रश्रय में भव्य मेले का आयोजन किया जाता है, जहाँ विभिन्न वर्ग के लोग अपनी मनोकामना पूर्ण होने के उद्येश्य से आते हैं। चैत्र व आसोज के शुक्ल पक्ष के नवरात्रा में होने वाली कुल देवी की पूजा-अर्चना में राठौड़ राजवंश विशेष रूप से उपस्थित होकर पूजा-वंदन करता है। राजपरिवार पारम्परिक राजसी पौशाक में माँ नागणेचियाँ के मन्दिर में हाजरी में रहते हैं। राजपरिवार की तरफ से पुजारी को पीताम्बर, बगलवंदी और पाग भेंट की जाती है। चैत्र व आसोज की शुक्ल पक्ष की सप्तमी के दिन मन्दिर में विशेष उत्सव मनाया जाता है उस दिन जोधपुर महाराजा अपने हाथ से पुष्पमाला, प्रसाद माँ को अर्पित करके आरती करते हैं। महाराजा स्वयं अपने हाथों से वहाँ उपस्थित दर्शनार्थियों को प्रसाद वितरित करते हैं।[13]

ऐसी मान्यता है कि राठौड़ राजपरिवार द्वारा कुलदेवी की विशेष पूजा-अर्चना करने का उद्देश्य प्रजा के मन में आस्था का दीपक जलाने के लिए किया जाता है तथा प्रजा के मध्य राजपरिवार के प्रति विशेष सम्मान बढ़ाने के लिए ताकि प्रजा राजवंश को कुलदेवी का संरक्षित वंश के रूप में देखे ताकि राठौड़ राजवंश की वैधता को मान्यता प्राप्त हो सके। और जनसाधारण में यह विश्वास पैदा हो सके कि जिस प्रकार कुलदेवी की विशेष कृपा दृष्टि राजवंश पर है वैसी ही कृपा दृष्टि जनसाधारण पर भी हो सके।

नागणेचियाँ माँ की विशेष पूजा-अर्चना के दिन मन्दिर में लापसी एवं खाजा का भोग देकर माता जी की पूजा की जाती है। पूजापा सेवक को दिया जाता है। माताजी की विशेष प्रसादी में कच्चे सूत के सात धागों को बाँटकर उसमें सात गांठे लगाकर कुमकुम में रंगा जाता है और यह राखड़ी विशेष रूप से 'श्री श्री' (राजा) को भेजी जाती है। इस प्रकार की गाँठों वाली राखड़ियाँ महाराज कुमार, महारानी, रानियाँ, पड़दायतों, गायणियों,

भाभाओं इत्यादि को प्रसाद स्वरूप बाँधी जाती थी। जनाना में सेतगानीजी तथा मरदाना में सेवक राखड़ी भेंट करके दस्तूर लेते थे। महाराजा की ओर से सेवक पड़दायते एवं गयणिये को मोहर एवं दान दिये जाते थे।[14] इस धार्मिक परम्परा के पीछे ऐसी मान्यता है कि राजपरिवार के द्वारा स्वयं को जनसाधारण के मध्य विशेष दर्जा प्राप्त हो सके तथा शासक व् शासित के मध्य भी भेद स्पष्ट करने के लिए इन मान्यताओं को अपनाया गया।

वस्तुत: नागणेचियाँ जी आध्य शक्ति है जिनका विवेचन सतयुग से लेकर आज तक भिन्न-भिन्न नामों से किया जाता है। आज राठौड़ राजवंश के अतिरिक्त नागणेचियाँ माता जन-जन का उद्धार करने वाली शक्तिदायिनी देवी मानी जाती है। ऐसा माना जाता है कि जो भक्तजन सच्चे हृदय से माँ की अराधना करते हैं उनका कल्याण करने वाली है माँ श्री नागणेचियाँ जी-

नागणेचियाँ जी की स्तुति।
''नागणेची जी सहाय छै
नवण्याम्बुधिसम्भवेदुववदंना
विधाधरीवन्दिताम्,
भाले कुंकुममण्डितां श्रुतियुगे
गंगेयमुक्तान्विताम,
है मी दधानां पटीम्
रत्नशोभित कंचुकीमनुपमाम्
श्री नागणेची श्रये :।।''

अनुवाद- ''सौन्दर्य समुन्द्र से उत्पन्न चन्द्रमा की तरह मुखवाली, विद्याधरों से नमस्कृत, कुमकुम से अर्चित ललाट से शोभित, अपने दोनों कानों में मोतियों की लड़ियाँ धारण किये हुए, नाक के अग्रभाग में मोती की लटकन से युक्त, सुवर्णमय वस्त्रों से अलंकृत रत्नमय कंकुची (कांचली) को धारण किये हुए अनुपम रूपवाली देवी नागणेची के आश्रय का मैं सदा प्रार्थी हूँ।''[15]

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. ओझा, रायबहादुर गौरीशंकर हीराचन्द, उदयपुर राज्य का इतिहास (प्रथम, द्वितीय खण्ड), आदित्य ऑफसेट, दिल्ली, 1928, पृ. 65, 66
2. राणावत, डॉ. मनोहर सिंह, मेवाड़ का सामाजिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, प्रताप शोध प्रतिष्ठान, उदयपुर, 2006, पृ. 1-7, ओझा, रायबहादुर गौरीशंकर हीराचन्द्र, पू. उ., पृ. 32-34
3. पारीक, नन्दकिशोर, श्री गोविन्द-गाथा, सुबोध साहित्य सदन, जयपुर, 2003 पृ।
4. शर्मा, कालूराम, राजस्थान का इतिहास, गोपाल प्रिन्टर्स, जयपुर, 1998, पृ. 329-320
5. नागर, कुं. महेन्द्र सिंह, श्री नागणेचियाँ माता: ऐतिहासिक विवेचन, महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश शोधकेन्द्र, जोधपुर, पृ. स. 15
6. भाटी, डॉ. हुकम सिंह, राठौड़ री ख्यात (जोधपुर राज्य का इतिहास-सीहा से महाराजा मानसिंह), राजस्थानी ग्रन्थाग्रार, जोधपुर, 1996
7. रेउ, पं. विश्वेशवरनाथ, मारवाड़ का इतिहास, आर्कियोलॉजिकल डिपार्टमेन्ट, जोधपुर, पृ. 46
8. भाटी, डॉ. विक्रम सिंह, राजस्थान की कुलदेवियाँ, इतिहास अनुसंधान संस्थान, चौपसनी,

जोधपुर, 2010 पृ. 73
9. ओझा, रायबहादुर गौरीशंकर हीराचन्द, जोधपुर राज्य का इतिहास, महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश शोध केन्द्र, मेहरानगढ़ दुर्ग, जोधपुर, 2010, पृ. 109-110
10. वंदना पत्रिका, 2004
11. मनोहर, डॉ. राधवेन्द सिंह, राजस्थान के प्रमुख शक्ति पीठ, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 2010, पृ. 43-44
12. मंहत नन्दकिशोर, जोधपुर से लिया गया साक्षात्कार
13. उपरिवत्
14. नगर. डॉ. कुँ. महेन्द्र सिंह, राजस्थान इतिहास एवं संस्कृति की झलकियाँ, महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश शोध केन्द्र, जोधपुर, 2007 पृ. 24
15. भाटी, डॉ. विक्रम सिंह, पू. उ., पृ. 75, डॉ. नगर, कुं. महेन्द्र सिंह, पू. उ., पृ. 25

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में पं. दीन दयाल उपाध्याय के आर्थिक विचारों की प्रासंगिकता

• सिद्धार्थ मिश्र

सारांश- पं. दीनदयाल उपाध्याय जी का कहना था कि उपभोग की ओर पश्चिम के विद्वानों का ध्यान नहीं गया, यद्यपि उपभोग ही उत्पादन तथा वितरण दोनों की धुरी है। पश्चिम ने अधिकाधिक उपभोग के अपने पुराने सिद्धान्त को ही चलने दिया और संशोधन की जरूरत नहीं समझी। स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व हम हर प्रश्न की ओर केवल आर्थिक दृष्टिकोण से देखने लगे है। पं. दीनदयाल जी ने भारत को केवल राजनैतिक दिशा ही नहीं दी, विश्व को एकात्ममानववाद का नितान्त नया और अभूतपूर्व दर्शन भी दिया। पं. दीनदयाल उपाध्याय जी का कहना है कि, हम पूंजीवाद व समाजवाद के चक्कर से मुक्त होकर मानववाद का विचार करे। मानव जीवन के समस्त पहलुओं का विचार कर आर्थिक क्षेत्र में उत्पादन, वितरण और उपभोग के साधन तथा व्यवस्था बनायें। फिर उसके लिए विज्ञान का उपभोग करे। पं. दीनदयाल जी का कहना है कि, व्यावहारिक दृष्टि से हमारी योजनाएं श्रम प्रधान होनी चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति को काम मिलना चाहिए। आज की परिस्थिति में यदि किन्हीं दो शब्दों का प्रयोग कर अपनी अर्थव्यवस्था की दिशा के परिवर्तन को बताना हो तो वे हैं, विकेन्द्रीकरण व स्वदेशी।

मुख्य शब्द- उपभोग, उत्पादन, एकात्ममानववाद, पूंजीवाद, समाजवाद, श्रमप्रधान, विकेन्द्रीकरण, स्वदेशी

पं. दीन दयाल उपाध्याय जी का कहना था कि "उपभोग की ओर पश्चिम के विद्वानों का ध्यान नहीं गया, यद्यपि उपभोग ही उत्पादन तथा वितरण दोनों की धुरी है। पश्चिम ने अधिकाधिक उपभोग के अपने पुराने सिद्धान्त को ही चलने दिया और संशोधन की जरूरत नहीं समझी। वास्तविकता यह है कि अधिकाधिक उपभोग का सिद्धान्त ही मनुष्य के दुखों का कारण है। उपभोग की लालसा यदि पूरी की जाए तो वह बढ़ती जाती है। वर्ग संघर्ष, जिसके ऊपर समूचा साम्यवाद खड़ा है। ऐसे उपभोग के कारण ही उत्पन्न होता है। भारतीय मतवाद जबकि संघर्ष का खण्डन करता है, तब इसका, तात्पर्य यही होता है कि उसने उपभोग को नियंत्रित कर लिया है तथा अधिकाधिक उपभोग बजाय न्यूनतम उपभोग को आदर्श बनाया है। मनुष्य की प्रकृति भावनाओं का संस्कार करके उसमें अधिकाधिक उत्पादन समान वितरण तथा संयमित उपभोग की प्रवृत्ति पैदा करना ही आर्थिक क्षेत्र में संस्कृति का कार्य है। इसमें ही तीनों का सन्तुलन है।[1]

अर्थ का अभाव समष्टिगत हो तो समाज के सद्‌गुणों का धीरे-धीरे लोप हो जाता

• **अयोध्या, उत्तर प्रदेश**

है। समाज के बलदण्ड लोग बलहीनों का शोषण करने लगते है। ऐसे समाजों या देशों को अन्य सम्पन्न देशों के सामने विवशता स्वीकार करनी पड़ती है। इसी में से आगे चलकर आर्थिक एवं उसके पीछे-पीछे राजनीतिक दासता भी आती है।

स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व हम हर प्रश्न की ओर राष्ट्रीय दृष्टिकोण से देखा करते थे। अब हम प्रत्येक प्रश्न की ओर केवल आर्थिक दृष्टिकोण से देखने लगे है। कारण, साध्य और साधन का विवेक ही शेष नहीं रहा है। पैसा अर्जित करना जीवन की एक महत्वपूर्ण बात न रहकर उस प्रश्न ने हमारा सारा जीवन व्याप लिया है। पैसा प्राप्त करने के परे भी जीवन में अधिक महत्वपूर्ण कुछ होता है, इसका बोध ही हमारे मानस से लगभग समूल नष्ट हो गया है। मनुष्य का विकास, केवल आर्थिक विकास नहीं, अपितु सर्वांगीण विकास है। आर्थिक विकास के कारण मन की शांति नष्ट होती है, बुद्धि विकृत होती हो तो ऐसा विकास किसी काम का नहीं।[2]

पं. दीनदयाल जी ने भारत को केवल राजनैतिक दिशा ही नहीं दी, विश्व को एकात्ममानववाद का नितान्त नया और अभूतपूर्व दर्शन भी दिया, जिसका सार तत्व है कि यदि हम मानव का चिन्तन और विकास, अध्याय और भौतिक सुख जैसी इकाइयों में अलग-अलग न करके सम्पूर्ण मनुष्य का, उसकी समस्त आवश्यकताओं जैसे शारीरिक, भौतिक एवं आध्यात्मिक का चिन्तन केवल एक इकाई के रूप में करें, तभी मानव का सही विकास सम्भव होकर विश्व में शान्ति स्थापित हो सकती है और मानव समाज वास्तविक सुख, समृद्धि और शान्ति की ओर अग्रसर हो सकता है। इस समय तक केवल दो ही दर्शन प्रचलित थे पूंजीवाद ओर समाजवाद, जो मनुष्य की केवल भौतिक और आध्यात्मिक विकास का चिन्तन करते थे। पं. दीनदयाल जी ने दोनों को मिलाकर मनुष्य का एकात्म चिन्तन करने का नया दर्शन विश्व को दिया।[3]

विगत वर्षों में भारत सरकार ने जनता को जिन मोहकनारों से सम्मोहित करने की कोशिश की है, उनमें 'विकेन्द्रीकरण' का नारा विशेष महत्व रखता है। राजनीतिक अधिकारों का विकेन्द्रीकरण व आर्थिक, विकेन्द्रीकरण के साथ ही साथ औद्योगिक क्षेत्र भी एकाधिकार की स्थिति को समाप्त करने के लिए औद्योगिक विकेन्द्रीकरण का नारा बार-बार दोहराया गया है।

पं. दीनदयाल उपाध्याय जी का कहना है कि ''पश्चिम ने औद्योगिक क्षेत्र में अपनी परिस्थिति एवं आवश्यकतानुसार जिन भारी उद्योगों का आश्रय लिया उनमें मानव एक बड़ी मशीन का एक दयहीन समृष्टि का पुर्जामात्र बनकर रह गया। भारत में हम उस प्रकार के निर्जीव मशीन का पुर्जा मान बनकर अपने व्यक्तित्व का उज्जवलतम एकात्म प्रकट नहीं कर सकते। इस दृष्टि से विचार करने पर हमें औद्योगिक क्षेत्र में वहीं प्रणाली स्वीकार करनी होगी जिसमें कौटुम्बिक आधार पर काम को जीवन का अंग बनाकर चला जा सके। इसी में मालिक, मजदूर, उत्पादन, उपभोक्ता आदि के पारस्परिक सम्बन्धों का ठीक-ठीक निर्धारण हो सकेगा।[4]

आज पूरे देश में विकास की अवधारणा का विविधांगी विश्लेषण हो रहा है। अर्थव्यवस्था की सुदृढता यह विकास का लक्षण माना जाता है। विकास की इस प्रक्रिया में समाज जीवन के घटकों का समावेश होना स्वाभाविक है। कृषि, उद्योग, व्यापार,

रोजगार आदि घटकों का संतुलित विकास ही पूर्ण और धारणक्षम सतत् विकास को साकार कर सकता है। 'भारतीय दर्शन के अनुसार अर्थ यह एक पुरूषार्थ है।'[5] अतः पं. दीनदयाल उपाध्याय जी का कहना है कि 'हम पूंजीवाद और समाजवाद के चक्कर से मुक्त होकर मानववाद का विचार सके। मानव जीवन के समस्त पहलुओं का विचार कर आर्थिक क्षेत्र में उत्पादन, वितरण और उपयोग के साधन तथा व्यवस्था बनाये। फिर उसके लिए विज्ञान का उपयोग करे। यह आवश्यक नहीं कि हम विज्ञान के पुराने प्रयोगों को ज्यों का त्यों अपना ले। आज हम पश्चिम की टैक्नोलॉजी की आंख मूदकर नकल कर रहे है। इसे बन्द करना होगा और टेक्नालोजी का प्रयोग मानवता के विकास के लिए करना होगा।'[6]

इसके लिए विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था चाहिए। स्वयंसेवी क्षेत्र को खड़ा करना होगा। यह क्षेत्र जितना बड़ा होगा, उतना ही मनुष्य आगे बढ़ सकेगा, मनुष्यता का विकास हो सकेगा, एक मनुष्य दूसरे मनुष्य का विचार कर सकेगा। प्रत्येक मनुष्य की व्यक्ति आवष्यकताओं और विशेषताओं का विचार करके उसे काम देने पर उसके गुणों का विकास हो सकता है। पं. दीनदयाल उपाध्याय जी के अनुसार, विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था भारत ही संसार को दे सकता है। हम नये सिरे से आर्थिक निर्माण कार्य शुरू कर रहे है। अतः हमें यह विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था खड़ी करने में सुविधा हो सकती है जबकि शायद यह बात आसानी से न कर पाये। सच्चे प्रजातंत्र का आधार आर्थिक विकेन्द्रीकरण ही हो सकता है। अतः सिद्धान्तः हमें छोटे-छोटे उद्योगों को ही अपनाना चाहिए।

पं. दीनदयाल उपाध्याय जी का कहना है कि, 'व्यावहारिक दृष्टि से हमारी योजनाएं श्रम प्रधान होनी चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति को काम मिलना चाहिए। उनका कहना था कि योजनाएं बनाने से पहले हमें 'प्रत्येक व्यक्ति को काम', के सिद्धान्त को मान्यता देनी पड़ेगी। यदि इसे मान लिया गया तो योजनाओं की दिशा एवं स्वरूप बदल जायेगा भले ही बेकारी धीरे-धीरे दूर हो। इसलिए उन्होंने उचित तकनीक अपनाने पर जोर दिये। पंडित दीनदयाल उपाध्याय की दृष्टि आदर्श हिन्दू समाज के निर्माण की थी, जिसे उन्होंने एकात्म मानववाद कहा।[7]

अर्थव्यवस्था का यह मानवीय उद्देश्य रहा तो आर्थिक प्रश्नों की ओर देखने की हमारी दृष्टि बदल जाएगी। पं. दीनदयाल उपाध्याय जी कहते है कि आजकल नारा लगाया जाता है, 'कमाने वाला खायेगा।' सामान्यतया यह नारा कम्युनिस्ट लगाते है, किन्तु पूंजीवादी भी इस नारे के मूल में निहित सिद्धान्त से असहमत नहीं। यदि दोनों में झगड़ा है तो इसी बात था कि कौन कितना कमाता है। पूंजीवादी साहस और पूंजी को महत्व देते है और इसलिए खाने में उनका प्रमुख भाग रहा तो उसे वे उचित ही मानते है। दूसरी ओर कम्युनिस्ट श्रम को ही निर्माण मानते है, इसलिए वे श्रमिक को ही खाने का अधिकार देते है। ये दोनों ही विचार ठीक नही है। वास्तव में तो हमारा नारा होना चाहिए, 'कमाने वाला खिलायेगा' तथा जन्मा सो खायेगा।' खाने का अधिकार जन्म से प्राप्त होता है। कमाने की पात्रता शिक्षा से आती है। समाज में जो कमाते नहीं वे भी खाते है। बच्चे, बूढ़ों, रोगी, अपाहिज सबकी चिन्ता समाज को करनी पड़ती है।[8] भूख लगना प्रकृति है, छीनकर खाना विकृति है एवं मिल- बांट कर खाना हमारी संस्कृति है।

पं. दीनदयाल जी के अनुसार खाली मशीन केवल पुरानी पूंजी खाती है, नया कुछ नहीं, पर बेकार मनुष्य तो आज भी खाता है। अतः आज तो 'कमाने वाला खायेगा' के स्थान पर 'खाने वाला कमाएगा' यह लक्ष्य रखकर हमें भारत की अर्थव्यवस्था करनी होगी। चर्खे की जगह कताई की मशीने तो चाहिए परन्तु सब कार्यों के लिए स्वचालित मशीनें नही। पूर्ण रोजगार का लक्ष्य सामने रखकर ही हमें अन्य उत्पादों का विचार करना चाहिए। आज की परिस्थिति में यदि किन्ही दो शब्दों का प्रयोग कर अपनी अर्थव्यवस्था की दिशा के परिवर्तन को बताना हो तो वे है, 'विकेन्द्रीकरण' और स्वदेशी।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि पं. दीनदयाल उपाध्याय जी के आर्थिक विचारों की प्रासंगिकता जैसे, एकात्म मानववाद विकेन्द्रीकरण अर्थव्यवस्था, स्वदेशी का विचार आदि वर्तमान परिप्रेक्ष्य के साथ-साथ नित्य-नूतन, चिर-पुरातन भी है।

अतः देश व समाज के नवोत्थान का स्वप्न मात्र कुछ व्यक्तियों के अथवा संगठनों की गुणवत्ता तथा उद्यम से साकार होने वाला नहीं है, अपितु संपूर्ण समाज को ही स्पष्ट राष्ट्रीय दृष्टि सम्पन्न, अनुशासित तथ गुण सम्पन्न बनकर राष्ट्र की बल वैभव सम्पन्न, समतायुक्त, शोषणमुक्त, स्थिति को अपने निःस्वार्थ प्रमाणिक, सतत व सामूहिक तपस्या से साकार करना पड़ेगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. उपाध्याय पं. दीन दयाल, 'राष्ट्र चिन्तन', लोकहित प्रकाशन, लखनऊ, पृ. 72
2. उपाध्याय पं. दीनदयाल, विचार दर्शन, एकात्म मानव, मदन मोहन ध्वन, कानपुर, पृ. 6,7
3. पं. दीनदयाल उपाध्याय 'एकात्म मानव दर्शन के प्रणेता', दीनदयाल शोध संस्थान, नई दिल्ली, पृ. 7
4. उपाध्याय पं. दीनदयाल, 'राष्ट्र जीवन की दिशा', लोकहित प्रकाशन, लखनऊ, पृ. 125-126
5. कृतिरूप संघ दर्शन, 'अर्थ आयाम' श्री भारती प्रकाशन, नागपुर, पृ. 11
6. उपाध्याय पं. दीनदयाल, 'राष्ट्र चिन्तन', लोकहित प्रकाशन लखनऊ, पृ. 74-80
7. जैन, प्रो. उदय 'हिन्दू अर्थशास्त्र', अर्चना प्रकाशन, भोपाल, पृ. 91।
8. उपाध्याय, दीनदयाल, 'एकात्म मानववाद', जागृति प्रकाशन, नोएडा, पृ. 71

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

उत्तर प्रदेश राज्य ललित कला अकादमी की संकल्पना को लेकर अवध प्रान्त के कानपुर की प्रथम बहुआयामी कला शिविर

• राज कुमार सिंह

सारांश- राज्य ललित कला अकादमी के स्थापना से लेकर कला के विकास व प्रोत्साहन करने के साथ ही एक मंच पर विभिन्न क्षेत्रों में रह रहे कलाकारों को एकत्रित करने का कार्य किया जिसमे यदि अवध प्रान्त के कानपुर क्षेत्र पर ध्यान दिया जाये तो राज्य ललित कला अकादमी प्रारम्भ से कानपुर के कलाकारों को अपने साथ जोड़कर कला के विकास व प्रोत्साहन के लिए कार्य किया है। जिसके कारण नये कलाकारों व कला गुरूओं को एक साथ कार्य करने का अवसर प्राप्त हुआ और सभी क्षेत्रों के कलाकारों को अलग- अलग विधाओं, रंग संगति रूपकारों को देखने समझने व सीखने का मौका मिला जिसके सहयोग के द्वारा नये युवा कलाकारों को चित्रकला के क्षेत्र में नये- नये माध्यमों, तकनीकों में कार्य करने का अवसर प्राप्त हुआ जिनके मार्गदर्शन में 20वीं सदी के उत्तरार्द्ध व 21वीं सदी के प्रारम्भ की कला को और ऊचाईयों तक ले जाने का अवसर ललित कला अकादमी व कला संस्थाओं को प्राप्त हुआ जिसमें कलाकार विभिन्न आयामों में कार्य करते हुए कला को बढ़ावा दे रहे है।

मुख्य शब्द- कला, विकास, अकादमी, चित्रकला, आयाम

उत्तर प्रदेश में राज्य ललित कला की स्थापना 8 फरवरी 1962 ई0 में उत्तर प्रदेश सरकार के संस्कृति विभाग की पूर्णत: वित पोषित स्वायत शासी इकाई के रूप में हुई थी जिसका कार्य उत्तर प्रदेश के कलाकारों की प्रोन्नति एवं प्रोत्साहन के ध्येय को आगे बढ़ाने तथा उत्तर प्रदेश के सभी कलाकारों को एक मंच पर लाने व सहयोग करने के प्रयत्नो को लेकर लखनऊ के छतरपुर मंजिल और इलाहाबाद उच्चन्यायालय के लखनऊ पीठ के मध्य लाल बारादरी (लखौड़ी ईट और गुलाबी गारे के द्वारा सुर्ख लाल रंग की बनी होने के कारण लालबारादरी पड़ा) भवन में स्थापित किया गया। यह भवन एक पुरातात्विक ईमारत थी, जिसका निर्माण 1778-1814 ई. के मध्य हुआ था जो लखनऊ के नवाबों द्वारा बनवाया गया था और वस्तुकला का महत्वपूर्ण नमूना है साथ ही इस ईमारत में सआदत अली खान से लेकर वाजिद अली शाह तक का इस महल में दरबारे-ए-हाल सजता था और इन बादशाहो की ताजपोशी भी इसी भवन में हुई थी। इसी कारण इस महल को कम्र-उल-स आदत अर्थात् सुल्तानों का महल कहा जाता था। इस महल की तुलना अंग्रजों ने अपने दरबारे-ए-हाल से की थी। इस भवन में स्वतन्त्रता के पश्चात राजकीय संग्रहालय स्थापित हुआ और बाद में यह अपने भवन में स्थापित हो गया तथा यहाँ पर राज्य ललित कला

• शोध छात्र, कला संकाय, महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय, विश्वविद्यालय, चित्रकूट सतना, मध्य प्रदेश

अकादमी की स्थापना की गयी, जिसका उद्देश्य दृश्यकला एवं व्यावहारिक कला की गतिविधियों एवं कलाकारों को प्रोत्साहन व सहयोग प्रदान करने के लिये किया गया। जिसके अन्तर्गत कलाकार सामूहिक रूप से एकत्रित होकर अपने सृजनात्मक कार्यो को नया आयाम प्रदान करते व चर्चा करते जिससे जन सामान्य कलाकारों को एक मंच प्रदान हुआ और उनके अन्दर एक सहज जिज्ञासा उत्पन्न हुई कि यह कलाकार किस प्रकार का सृजन कार्य कर रहे है। इन सभी बातों की ध्यान में रखते हुए ललित कला अकादमी ने नवोदित व जन-सामान्य लोगों तक कला को पहुँचाने के उद्देश्य से राज्य स्तरीय कला शिविरों का आयोजन प्रारम्भ किया जिससे विभिन्न क्षेत्रों से आकर कलाकार एक स्थान पर अपनी कला का प्रदर्शन करें।

उत्तर प्रदेश में राज्य ललित कला अकादमी की स्थापना होने से पूर्व उत्तर प्रदेश सरकार ने संस्कृति, वैज्ञानिक अनुसंधान तथा ललित कला सम्बन्धी विविध गतिविधियों के संवर्धन एवं सम्यक समन्वय हेतु स्वतन्त्रता के पश्चात् 1957 ई. में इन्डोलाजी, संस्कृति एवं साइन्टिफिक रिसर्च की स्थापना की थी जिसके अन्तर्गत संग्रहालय पुरातत्व, भू-विज्ञान-खनन, राजकीय वेधशाला-नैनीताल, गवर्नमेंट कालेज ऑफ फाईन आर्टस एण्ड क्राफ्ट, भात खण्डे कालेज आफ हिन्दुस्तानी म्यूजिक आदि अनेक विभागो को सम्मिलित किया और सन् 1959 ई. में इसे सांस्कृतिक कार्य एवं वैज्ञानिक अनुसंधान की संज्ञा दी किन्तु सन् 1961 ई0 में भू-विज्ञान एवं खनन व उद्योग विभाग को और नैलीताल की वेधशाला को इससे अलग करके सन् 1975 ई. में इस विभाग का नाम सांस्कृतिक कार्य विभाग रख दिया जिसे बाद में सांस्कृतिक, विभाग की संज्ञा दी गई जो आज वर्तमान समय में भी इसी नाम से कार्य कर रही है और इसके अन्तर्गत ललित कला अकादमी विभिन्न कला शिविरो, प्रतियोगिताएँ प्रकाशन व चित्र प्रदर्शनी का आयोजन कर रही है, जिसके अन्तर्गत विभिन्न प्रतिष्ठित कलाकारों के साथ- साथ ग्रामीण व शहरी क्षेत्रों के नवोदित कलाकारों को आगे बढ़ने व वर्तमान समय की मांग के अनुसार कार्य करने का मार्ग प्रसस्त हो रहा है।

राज्य ललित कला अकादमी कलाकारों के प्रोत्साहन व क्रियान्वयन के उद्देश्य से अवधप्रान्त के कानपुर में 1 जून से 17 जून 1978 ई. में आई.आई.टी. कानपुर के साथ मिलकर एक कार्यक्रम का आयोजन किया। जिसमें कला शिविर व भाषण का कार्यक्रम आयोजित हुआ जो आई.आई.टी. के हयुमैनिटीज तथा समाज विज्ञान विभाग के सहयोग से हुआ जहाँ पर फाईन आर्ट विभाग के गोपाल कृष्ण भी उपस्थित थे। यह कार्यक्रम अकादमी द्वारा चलाया गया पहला कार्यक्रम था, जिसको दो भागो में बाटा गया। एक भाग में कलाकार सृजनात्मक कार्य कर रहे थे[1] और दूसरे भाग में निबन्ध पढ़े जा रहे थे। जिससे यह ज्ञात हुआ कि भारत के विभिन्न क्षेत्रों में ऐसे वैज्ञानिक मिले है जो किसी न किसी प्रकार की ललित कलाओं में रूचि लेते रहे है। ललित कला अकादमी का यह पहला प्रयास था कि कलाकार और वैज्ञानिक एक स्थान (मंच) पर मिले और मानवीय अनुभवो की साझेदारी करें क्योंकि विज्ञान वस्तुओं तथा पदार्थो का अन्वेषण करता है। और उसके माध्यम से सत्य का उद्घाटन करता है जिसका सम्बन्ध कलाकार से भी यही है जिसके साथ सौन्दर्य शास्त्रीय रचनात्मकला के तत्व जोड़ देते है तो यह एक बहुआयामी कला हो जाती है।

वैज्ञानिक तार्किक दुनिया में रहता है। लेकिन मानवीय मन में बहुत सी ऐसी चीजें भी होती है जो उसके बाहर की होती है और उसी गहराई में कलाकार प्रवेश करने की कोशिश करता है। एक भू-विज्ञान शास्त्री अपनी उच्चतम पराकाष्ठा में ही कलाकार होता है। क्योंकि वह भी तर्क और वस्तुपरक अनुभवजन्य पदार्थो से ऊपर उठने का प्रयत्न करता है।[2] क्योंकि कलाकार भी समाज के संतुलित विकास में उसी प्रकार योगदान देता है। जिस प्रकार अन्य मानवीय संयमी के लिये अन्य लोग लड़ाई लेते है। कला में प्रमाणिकता का प्रश्न व्यापक मानवीय संर्दभो में स्वायत्त की खोज है क्योंकि इससे आधुनिकता उत्पन्न होती है मानव जीवन के केन्द्रित सिद्धांतों से और 19वीं तथा 20वीं शताब्दी के बहुत से विचारकों तथा दार्शनिकों ने इस पर बल दिया है।

आई.आई.टी. कानपुर में कला संगोष्ठी व चित्रकार शिविर में सहभागी कलाकार गोपाल कृष्ण (पूनो) ने कहा कि इन वैज्ञानिक अविष्कारों का लाभ उठाना चाहिए क्योंकि यह शिविर कला और विज्ञान के अर्न्तसम्बन्धों का ज्ञान देता है। यह भी बतलाता है कि कला में कही विराम नही होता।

इसके साथ ही लखनऊ के लक्ष्मीशंकर शुक्ल विद्यार्थी, चित्रकार सी.के. पालीवाल, उमेश कुमार श्रीवास्तव, वाराणसी से कु. प्रेम कुमारी श्रीवास्तव, श्री विजय सिंह, कानपुर से मकबूल अंसारी का मत था कि यदि कला शिक्षा पद्धति में इस प्रकार के उपयोगी शिविरों को अनिवार्य मान लिया जाये तो लोगों की नई और पुरानी कला के भेद एवं अन्तर सम्बन्ध को आसानी से समझा जा सकता है। कानपुर के श्री कामता प्रसाद का मत था कि कलाकार में बदलाव उसके माहौल से होता है।

इन कलाकारों के साथ लखनऊ के ग्राफिक कला के श्री गोपाल दत्त शर्मा, मनोहर लाल आदि कलाकरों ने अपने सृजनात्मक कार्य किए व साहित्यकारों व वैज्ञानिकों ने अपने-अपने निबन्ध पढ़े।

जून 1 से लेकर 17 जून 1978 के मध्य अकादमी ने कला का विज्ञान एवं शिल्प विज्ञान के साथ प्रयोगिक सम्बन्ध को लेकर आई.आई.टी. कानपुर में बहु आयामी कला शिविर के अयोजन का उद्देश्य मात्र चित्र, मूर्ति निर्माण ही नहीं बल्कि उनमे कुछ ऐसी कल्पनाओं का समावेश किया जाना था जिससे नई दिशा का बोध हो सके जिसके हेतु अकादमी ने अपनी सामान्य सभा के प्रत्येक सदस्य से एक-एक कलाकार के नाम की संस्तुति के लिए निवेदन किया साथ ही, जिन विश्वविद्यालय में कला शिक्षा दी जाती थी वहाँ से भी एक-एक कलाकार भेजने की स्वीकृति भेजी जिससे आई.आई.टी. के कार्यक्रम में लखनऊ से सर्वश्री असद अली, एन. खन्ना, मनोहर लाल, गोपाल दत्त शर्मा, लक्ष्मी शंकर शुक्ला, सी.के. पालीवाल, उमेश कुमार श्रीवास्तव, राधवेन्द्र प्रताप सिंह, वाराणसी से श्री मदन लाल, विजय सिंह, कु. प्रेम कुमारी श्रीवास्तव व कानपुर से सर्वश्री मकबूल अंसारी, कामता प्रसाद, देहरादून से श्री तारा सिंह, पूना से श्री गोपाल कृष्ण आदि कलाकार उपस्थित हुए। जिसमें दो दिन पहले गोष्ठी का आयोजन हुआ उसके पश्चात् कला शिविर का आयोजन हुआ, जहाँ पर कलाकारों को आई.आई.टी. की विभिन्न कार्य शालाओं एवं प्रयोगशालाओं का भी अध्ययन करने को मिला जो कलाकारों के लिए कला और विज्ञान के मिलन का सुनहरा अवसर था।

राज्य ललित कला अकादमी द्वारा 10 कलाकारों के अपने चित्रों की प्रदर्शनियाँ लगाने के लिए सहायता राशि दी गयी जिसमें लखनऊ से कु. अनीता मैसी, श्री चन्द्र कान्त पालीवाल, मेरठ से गोपाल दत्त शर्मा, कानपुर से श्री के. शंकर व श्री कामता प्रसाद, खजुराहो से नानक वर्मा आदि थे जिनको कला के प्रदर्शन हेतु अकादमी ने सहायता राशि प्रदान की इसके साथ ही वार्षिक कला प्रदर्शनी का आयोजन भी किया था।

इस प्रकार राज्य ललित कला अकादमी के स्थापना से लेकर कला के विकास व प्रोत्साहन करने के साथ ही एक मंच पर विभिन्न क्षेत्रों में रह रहे कलाकारों को एकत्रित करने का कार्य किया जिसमे यदि अवध प्रान्त के कानपुर क्षेत्र पर ध्यान दिया जाये तो राज्य ललित कला अकादमी प्रारम्भ से कानपुर के कलाकारों को अपने साथ जोड़कर कला के विकास व प्रोत्साहन के लिए कार्य किया है। जिसके कारण नये कलाकारों व कला गुरूओं को एक साथ कार्य करने का अवसर प्राप्त हुआ और सभी क्षेत्रों के कलाकारों को अलग- अलग विधाओं, रंग संगति रूपकारों को देखने समझने व सीखने का मौका मिला जिसके सहयोग के द्वारा नये युवा कलाकारों को चित्रकला के क्षेत्र में नये- नय माध्यमों, तकनीकों में कार्य करने का अवसर प्राप्त हुआ जिनके मार्गदर्शन में 20वीं सदी के उत्तरार्द्ध व 21वीं सदी के प्रारम्भ की कला को और ऊचाईयों तक ले जाने का अवसर ललित कला अकादमी व कला संस्थाओं को प्राप्त हुआ जिसमें कलाकार विभिन्न आयामों में कार्य करते हुए कला को बढ़ावा दे रहे है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. प्रो. के.एस. कुलकर्णी- पृष्ठ 16 कला त्रैमासिक, ल.क.अ. लखनऊ
2. प्रो. ज्ञान मोहन-पृष्ठ-17-कला त्रैमासिक अंक-8-9

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

भारतीय कला में मानवाकृतियों का पुर्नजन्म बंगाल शैली (बंगाल शैली)

• यतीन्द्र महोबे

सारांश- **उन्नीसवी सदी के अंतिम चरण में भारत के अधिकांश चित्रकार जब विदेशी शैली को अपनी कलाकृति में आत्मसात करते जा रहे थे। तब ऐसे समय में भारतीय संस्कृति एवं परम्परा को कला क्षेत्र में जिंदा रखने के लिए कलकत्ता स्कूल ऑफ आर्टस के प्रधानाचार्य के पद पर कार्य करते हुए अवनीन्द्रनाथ ठाकुर ने भारतीय कला को विदेशी दासता से मुक्त कराने का भागीरथ प्रयास किया, और एक नवीनतम शैली को जन्म दिया, जिसे बंगाल शैली या पुर्नरूत्थान शैली के नाम से पहचाना गया। अवनीन्द्र नाथ ठाकुर ने अपने शिष्य तथा परिचय क्षेत्र के सभी कलाकार जो विदेशी शैली के पीछे भाग रहे थे, उनसे आग्रह किया कि वे हमारी परम्परागत भारतीय चित्र पद्धतियाँ जैसे अजंता, पहाड़ी, राजपूत आदि कला शैलियों तथा सिद्धांतों का अध्ययन करें, उनमें चित्रित मानवाकृतियों को ध्यानपूर्वक देखें, उन्हें समझे, उनमें व्याप्त भावनात्मक पक्ष एवं सौंदर्यात्मक पक्ष का अध्ययन कर अपने चित्रों में रचनात्मक शैली का प्रयोग करते हुए मानवाकृतियों को नया रूप प्रदान करें, जिससे वे कला क्षेत्र में पहचाने जा सके और साथ ही साथ भारतीयता की झलक भी उन मानवाकृतियों में दिखाई दे।**

मुख्य शब्द- चित्रकार, विदेशी शैली, कलाकृति, आत्मसात, पुर्नरूत्थान शैली

उन्नीसवी सदी के अंतिम चरण में भारत के अधिकांश चित्रकार जब विदेशी शैली को अपनी कलाकृति में आत्मसात करते जा रहे थे। तब ऐसे समय में भारतीय संस्कृति एवं परम्परा को कला क्षेत्र में जिंदा रखने के लिए कलकत्ता स्कूल ऑफ आर्टस के प्रधानाचार्य के पद पर कार्य करते हुए अवनीन्द्रनाथ ठाकुर ने भारतीय कला को विदेशी दास्ता से मुक्त कराने का भागीरथ प्रयास किया, और एक नवीनतम शैली को जन्म दिया, जिसे बंगाल शैली या पुर्नरूत्थान शैली के नाम से पहचाना गया।

अवनीन्द्र नाथ ठाकुर ने अपने शिष्य तथा परिचय क्षेत्र के सभी कलाकार जो विदेशी शैली के पीछे भाग रहे थे, उनसे आग्रह किया कि वे हमारी परम्परागत भारतीय चित्र पद्धतियाँ जैसे अजंता, पहाड़ी, राजपूत आदि कला शैलियों तथा सिद्धांतों का अध्ययन करें, उनमें चित्रित मानवाकृतियों को ध्यानपूर्वक देखें, उन्हें समझे, उनमें व्याप्त भावनात्मक पक्ष एवं सौंदर्यात्मक पक्ष का अध्ययन कर अपने चित्रों में रचनात्मक शैली का प्रयोग करते हुए मानवाकृतियों को नया रूप प्रदान करें, जिससे वे कला क्षेत्र में पहचाने जा सके और साथ ही साथ भारतीयता की झलक भी उन मानवाकृतियों में दिखाई दे।

• **सहायक प्राध्यापक चित्रकला, शासकीय महिला महाविद्यालय नरसिंहपुर**

स्वयं अवनीन्द्र नाथ टैगोर (1871 ई.) ने अपनी कलाकृतियों में भारतीय कला परम्परा को जीवित रखते हुए मानवाकृतियों की रचना की। अवनीन्द्र बाबू ने अनेक कला शैलियों में चित्रो की रचना की। उनके बहुत से चित्रों में जो मानवाकृतियाँ अंकित की गई हैं, उनमें मुगल एवं राजस्थानी शैली का प्रभाव दिखाई देता है। ''अवनीन्द्र बाबू द्वारा बनाई गई मानवाकृतियों में सदैव कल्पनाशीलता का मिश्रण रहा है। सौंदर्य तथा सत्य सादृश्य उनकी मानवाकृतियों में कभी लुप्त नहीं हुआ। ये यथार्थ से कभी भी बहुत दूर नहीं गये सूक्ष्म से सूक्ष्म (डिटेल्स) आकृतियों को चित्रित करने में इनकी कलम कमाल दिखाई थी। उनकी मानव आकृतियों की रेखायें स्वाभाविक घुमाव तथा रंगों में गति एवं ताजगी प्रदर्शित करती थी। वे दर्शक की आंखों को भाने वाले सुहाने तथा धुसर रंग तथा छाया-प्रकाश के माध्यम से आकृतियों को उभारते थे।" इनका बनाया हुआ रेखाचित्र 'रवीन्द्र नाथ डोलती कुर्सी पर' श्रेष्ठ कृतियों में एक है। अवनीन्द्र बाबू ने जापानी कला एवं विदेशी शैली से समन्वय स्थापित कर एक नई शैली को जन्म दिया तथा जल रंग एवं वाश पद्धति के प्रयोग से मानवाकृतियों की सौंदर्यता में चार चाँद लगा दिये।

अवनीन्द्र नाथ टैगोर की मानव आकृतियों में जापानी प्रभाव भी दिखाई पड़ता हैं पेस्टल रंगों का प्रयोग भी बड़ी दक्षता के साथ किया है। मानव त्वचा पर पेस्टल रंगों का प्रभाव देखते ही बनता है। कलाकृतियों में जल रंगों के साथ-साथ पेस्टल रंगों का प्रयोग भी बड़ी सफलता से किया है। 'जमुना' नामक व्यक्ति चित्र भावाभिव्यक्ति से पूरिपूर्ण है।

''मेरे जीवन का प्रभात गीतों भरा था, अब शाम रंग भरी हो जाये'' महाकवि रविन्द्रनाथ टैगोर (1861) का यह कथन उन्हें अपने जीवन के अंतिम पड़ाव पर अपनी स्वाभाविक शैली में चित्र रचना करने वाले चित्रकार के रूप में सामने लाता है। रविन्द्र बाबू अपनी आयु के 67 वे साल के पश्चात् कविता लिखते-लिखते हाशिये में अपनी कलम से आड़ी-तेड़ी रेखायें खींचते। इसके पश्चात् शब्दों या पंक्तियों को रेखाओं से मिटाने पर अकल्पित आकृतियाँ अंकित हो जाती और इन्हीं अकल्पित आकृतियों ने रविन्द्र बाबू का ध्यान आकृष्ट किया, फलस्वरूप उन्हें उसमें अनेक आकृतियाँ दिखाई देने लगीं। इसी को आधार मानकर रविन्द्रनाथ ने अनेक अजीबो-गरीब एवं भद्दी मानवाकृतियों की रचना की। फलस्वरूप इन्हें अति यथार्थवादी कलाकार के रूप में भी स्थापित किया गया । अपनी इस चित्र रचना के संबंध में इन्होंने कहा-''चित्रकला के क्षेत्र में मात्र रंग और रेखायें ही कोई संदेश नहीं देती अपितु उनमें ध्वनि होती है, लय होती है जिनका अंतिम उद्देश्य कलाकार की आंतरिक और बाह्रय कल्पना का सम्प्रेषण एवं एक समानुपातिक समग्रता का विकास करना होता है।''

रवीन्द्र बाबू ने अपनी कलाकृति में जिन मानव आकृतियों का अंकन किया है, वह मौलिक रूप में प्रदर्शित हैं। इन्होंने अपने आकृति अंकन में विदेशी कला की अनुकृति नहीं की, बल्कि ये आकृतियाँ इनकी अपनी आत्म अभिव्यक्ति है। ''उनकी आकृतियाँ चाहे ज्यामितीय हो अथवा किसी सर्प की भांति लयात्मक हो सभी में लय होता था। टैगोर ने जो व्यक्ति चित्र बनाये हैं, वे चित्रकला के सिंद्धांतों पर भले ही खरे न उतरे हों किन्तु भाव प्रदर्शन में वे समालोचना के योग्य हैं। उनका बनाया एक चित्र 'फूल के साथ युवती' भाव प्रदर्शन में श्रेष्ठ है । उनके द्वारा बनाया माँ और बच्चा चित्र में एक बालक को

समेटे एक स्त्री में ममता के समस्त भाव प्रदर्शित होते हैं।''

अपने चित्रों के माध्यम से रविन्द्र बाबू ने एक नई शैली को जन्म दिया। चित्रांकन करने के लिए इन्होंने ऐसे माध्यम का प्रयोग किया जो उन्हें सरलता से उपलब्ध थे यह माध्यम वही होता जो (स्याही) उनकी कविता लिखने हेतु प्रयोग होता, और तुलिका के रूप में कपड़े के टुकड़े को कलम में बांधकर या स्याही में अंगुलियों को डुबोकर प्रयोग करते थे। इन्होंने मानवाकृति अंकन में विकर्षक शरीर, बदसूरत मुख, अस्वस्थ ओर गंदगी भरे दृश्यों को चित्रित किया है। रवीन्द्र नाथ टैगोर के अधिकतर चित्र ऐसे प्रतीत होते हैं जैसे बिना सोचे समझे बनाये गये हों। उन्होंने आम चेतना से ऊपर उठकर इन भयावह मानवाकृतियों एवं बदसूरत व्यक्ति चित्रों में सौंदर्य को तलाशा। चित्र रचना करते समय तूलिका को अपने मन तथा इच्छानुसार चलाया। अपने चित्रों के माध्यम से जितने व्यक्ति चित्र एवं मानवाकृतियाँ रवीन्द्र बाबू ने चित्रित किये, उनमें जीवन के गहन अनुभव तथा प्रत्यक्ष ज्ञान की झलक स्पष्ट दिखाई पड़ती है। इन मानवाकृतियों में जहाँ हम यथार्थवादी प्रभाव देखते हैं, वहीं इन्हें 'चाइल्ड आर्ट' के समीप भी पाते हैं। आनंद कुमार स्वामी ने इनके चित्रों को 'नॉट चाइल्ड बट् चाइल्ड लाइक' कहा है।

मानवाकृति अंकन के अंतर्गत रवीन्द्र बाबू का प्रमुख विषय 'भारतीय नारी' था। उन्होंने चित्रों में बड़े ही सरल एवं सहज भाव से नारी को चित्रित किया है। चेहरों में भावों का निरूपण दिखाई देता है। थके हुए यात्री, माँ और बच्चा, सफेद धागे जैसे चित्रों में मानव जीवन का व्यापक दार्शनिक विचार है, तो वहीं अण्डाकृति मानव शीर्षों में (अधिकतर स्त्रियों) जीवन की गहरी अनुभूतियों से निर्मित अंतर्मुखवृत्ति का दर्शन है। ''इन्होंने मानवाकृतियों की अपेक्षा व्यक्ति चित्रों का अंकन अधिक मात्रा में किया है। ये व्यक्ति चित्र स्त्री एवं पुरूष दोनों के हैं। रवीन्द्र नाथ की नारियाँ अधिकतर भारतीय नारी की भांति सिर ढांके, खोये हुए नेत्रों वाली और गंभीर भाव वाली दिखाई देती हैं, इसी प्रकार पुरूषाकृति भी। किन्तु वे उनकी नारियों की भांति अपने नेत्रों में अवसाद लिये हुए प्रदर्शित नहीं होते। उनकी नारियों में उत्सुकता की अपेक्षा गंभीरता अधिक दिखाई देती है।''

अवनीन्द्र बाबू के परम शिष्य नंदलाल बसु (1882 ई.) पूर्व भारतीय कला को नवीन पद्धतियों से विकसित करने में सफल हुए। इन्हें आकृति मूलक चित्र-रचना करने का बड़ा शौक था। इन्होंने मानवाकृतियों को अपने चित्रों में प्रमुखता से चित्रित किया है। इनके द्वारा बनाई गई मानव आकृतियाँ रवीन्द्रनाथ टैगोर की मानव आकृतियों से बिल्कुल भिन्न थी। नंदलाल बसु की आकृतियों में रस, सौंदर्य एवं भाव-अभिव्यंजना कूट-कूट कर भरी हुई थी। अर्थात सामाजिक तौर पर जन-सामान्य को ध्यान में रखते हुए चित्रित की गई थी।

चूंकि बंगाल शैली के कोई विशेष नियम नहीं थे, न ही अवनीन्द्र नाथ ने अपने शिष्यों को किसी खास पद्धति में चित्रण करने हेतु बाध्य किया था। फलस्वरूप नंदलाल बोस ने आकृति मूलक चित्रण कार्य से ही अपनी भावनाओं को उजागर किया। दरअसल बचपन से ही उन्हें मानवाकृतियाँ बनाने का शौक था। अपने कम उम्र में ही

उनके द्वारा बनाया गया चित्र ''सती'' (1907) में बहुत प्रसिद्ध हुआ। जिसमें नारी आकृति को अग्नि की भेंट चढ़ते प्रदर्शित किया है। भावना प्रधान यह चित्र दिल को छू जाता है (देखिए चित्र फलक - 33)।

नंदलाल बसु ने अपनी मानवाकृतियों को प्रखरता प्रदान करने के लिए विदेशी एवं भारतीय कलाकारों के चित्रों की प्रतिकृतियाँ तैयार की। राजा रवि वर्मा की मानवाकृतियों ने भी उन्हें आकर्षित किया। इन्होंने विभिन्न शैलियों में कलाकृति का निर्माण कर अपनी मानवाकृतियों को साकार किया है। महात्मा गाँधी एवं जवाहरलाल नेहरू जैसी महान हस्तियाँ इनसे काफी प्रभावित थी। ''नंद बाबू ने गांधीजी के आग्रह पर हरिपुरा ग्राम पर पोस्टर भी तैयार कराया जैसे ग्रामीणवासियों, मोची, दर्जी, डुगडुगी बजाने वाला, वीणावादन, भोजन बनाती स्त्री आदि ग्रामीण परिवेश संबंधी विषयों पर सुंदर मानवाकृतियों का अंकन किया।''

नंदलाल बसु ने अपनी मानवाकृतियों को भित्ति (दीवारों) पर भी उकेरा। इनका एक विशाल भित्ति चित्र 'हल-कृष्ण-उत्सव' शांति निकेतन में सन् 1928 में चित्रित है। इस चित्र की मानवाकृतियों में श्रद्धा उत्साह और भारतीय ग्रामीण संस्कृति की छाप स्पष्ट रूप से झलकती है। इसके अलावा उमा-प्रायश्चिते, वीणा वादनी आदि भित्ति-चित्रों में भाव-प्रधान मानवाकृतियाँ देखने मिलती है। इनके आकृति मूलक प्रख्यात चित्रों में शिव-शक्ति, अर्धनारिश्वर, सन्थाल कन्या आदि प्रमुख हैं। नंद बाबू ने हास्य प्रधान मानव आकृतियों की भी रचना की है, जैसे एक रेखा चित्र में दो लड़कियों को मुड़कर देखते छात्र पेड़ से टकरा गये। रेखाचित्रों के माध्यम से भी मानवाकृतियों को उभारा है। इन सजीव रेखांकनों में 'किसान एवं मछली वाला' विशेष है।

आधुनिक कला के क्षेत्र में अपनी मानवाकृतियों को नवीन पद्धतियों से विकसित करने के लिए नंदलाल बसु सदा अविस्मरणीय रहेंगे। आपके चित्रों में जलरंग और वाश पद्धति का सुंदर संगम परिलक्षित होता है, जिसके माध्यम से आपकी मानवाकृतियों की भाव अभिव्यंजना को विशेष बल मिला।

अपनी मानवाकृतियों को लोक कला का पहनावा पहनाने वाले विश्व प्रसिद्ध कलाकार यामिनी राय का जन्म सन् 1887 ई. में पश्चिम बंगाल में हुआ। इन्होंने अपनी कलाकृतियों की मानव आकृतियों में लोक कला का पुट देते हुए उसमें आधुनिकता की सांस फूंक दी। इन मानव आकृतियों में सौंदर्य के साथ-साथ भाव-अभिव्यंजना का पूर्ण समावेश दिखाई पड़ता है।

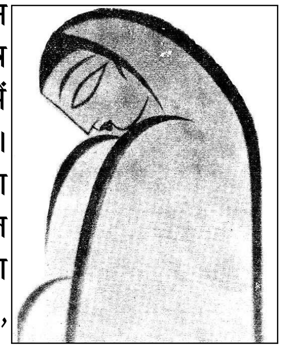

व्यक्ति चित्रों (पोर्ट्रेट पेंटिंग) से अपने कला जीवन की शुरूआत करने वाले यामिनी राय व्यक्ति चित्रों से ऊब गये। अनुकरण करने की रूचि उनमें समाप्त हो गई। चित्रों में मानव आकृतियों का अंकन करना उनको अच्छा लगता था। वह अपने कला जीवन में कुछ ऐसा करना चाहते थे जो नया हो और संतुष्टि प्रदान करने वाला हो। यामिनी राय को बंगाल की लोक कला से काफी लगाव था। उन्हें काली घाट के पटुआ कलाकारों द्वारा बनाये चित्र, लोक जीवन के विषय,

देवी-देवताओं पर आधारित पौराणिक प्रसंग अधिक प्रभावित करते थे। उनहोंने बाजारू कही जाने वाली लोक कला एवं उनके जीवन शैली पर व्यापक अध्ययन किया। वहाँ के संथाल परिवारों के संवेदनशील जीवन को करीब से देखा। परिणामस्वरूप बंगाल की लोककला को अपने नई चित्र शैली के रूप में विकसित किया।

यामिनी राय ने बंगाल की लोककला की मानव आकृतियों को ग्रहण कर उसे नवीन चित्रात्मक शैली में पिरोया। अपने चित्रों के आकारों की खोज में उन्होंने देहाती गुड़ियों, खिलौना, रासलीला के पात्रों की भंगिमाओं और उनकी वेशभूषा की ओर ध्यान आकर्षित किया और अपनी मानव आकृतियों को लोक कला का पहनावा पहनाते हुए सरलीकृत रूप में प्रस्तुत किया। विषय भी पौराणिक व धार्मिक गाथाओं तथा लोक जीवन से जुड़े हुए रखे। मोटी-पतली प्रवाहमान रेखायें इन मानव आकृतियों में जीवंतता की झलक दिखाती है। रंगों के चयन में भी लाल, पीले, नीले, काले, भूरे आदि चटखीले रंग शामिल हैं, जो लयात्मक रेखाओं के भीतर भरे हुए बड़े आकर्षक दिखाई पड़ते हैं। यामिनी राय के चित्रों की मानव आकृतियाँ बड़ी सरल एवं सहज रूप में प्रदर्शित हैं। ये मानव आकृतियाँ यामिनी राय के आदर्श चिंतन व लोक जीवन से सराबोर हैं। आम जनता के दृष्टिकोण से भी ये आकृतियाँ सहज हैं, इनमें किसी प्रकार की अमूर्तता की झलक नहीं दिखाई पड़ती । दर्शक इन सहज मानवाकृतियों के सहारे चित्र के संपूर्ण विषय का आनंद ले सकता है।

यामिनी राय ऐसे शुद्ध भारतीय चित्रकार हैं जिन्होंने अपनी मिट्टी की सुगंध को महसूस किया और किसी कलाकार एवं प्राचीन शैली को आधार न बनाकर अपने चित्रों में मानवाकृतियों को नया रूप प्रदान किया। अपने चित्रों में यामिनी राय ने जिस तरह से मानव आकृति का अंकन किया तथा उसमें सौंदर्य भाव को शामिल किया, ऐसा इनसे पहले किसी बंगाल शैली के कलाकार ने नहीं किया। उनके बहुमूल्य आकृति मूलक चित्रों में ईसामसीह के जीवन से संबंधित चित्र, राम-लक्ष्मण और सीता, माँ और शिशु, संथाल मल्लाह, पूजारत स्त्री, बहनें, बढ़ई, भिखारी, तुलसी पूजन, ढोलक वादन, भेंट, टैगोर और बापू, सीता की अग्नि परीक्षा आदि प्रमुख हैं।

विदेशी कला के पीछे पागल चित्रकारों को अपनी कला, संस्कृति एवं परम्परा का पुन:बोध कराने का श्रेय अंग्रेजी कला समीक्षक ई.वी. हैवल को भी जाता है। इन्होंने अंग्रेज होने के बावजूद प्राचीन भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का कलात्मक अवलोकन किया। परिणामस्वरूप ई.वी.हैवल को अजंता, एलोरा, मुगल, राजस्थानी, पहाड़ी आदि भारतीय शैली में बनने वाली मानवाकृतियाँ उनका सरलीकरण, भाव अभिव्यंजना तथा सौंदर्यात्मकता जो भारतीय कला को जीवंत रूप प्रदान करती है अत्याधिक पसंद आई और वह प्राचीन भारतीय मानव आकृतियों के कायल हो गये। ई. वी. हैवल ने अवनीन्द्र बाबू के साथ इन विषयों पर गंभीरता से चर्चा कर भावी कलाकारों को यह संदेश पहुँचवाया कि वे विदेशी मानवाकृतियों का अंधानुकरण करना छोड़ अपनी संस्कृति एवं प्राचीन कला का अध्ययन करे एवं उनके सौंदर्यात्मक, भावनात्मक एवं सहजात्मकता को ग्रहण कर अपनी कलाकृतियों में ऐसी मानवाकृतियों को अंकित करें जिसमें भारतीय कला आईने जैसी प्रतिबिम्बित हो।

संदर्भ ग्रंथ सूची -

1. डॉ. प्रेमचन्द्र गोस्वामी - आधुनिक भारतीय चित्रकला के आधार स्तम्भ, पृ. 15
2. डॉ. प्रेमचन्द्र गोस्वामी - आधुनिक भारतीय चित्रकला के आधार स्तम्भ, पृ. 38
3. डॉ. संध्या पाण्डे/ डॉ.आर.पी. पाण्डे - भारतीय कला, पुनर्जागरण एवं चित्रकार, पृ. 10
4. डॉ. संध्या पाण्डे/ डॉ.आर.पी. पाण्डे - भारतीय कला, पुनर्जागरण एवं चित्रकार, पृ. 52
5. डॉ. संध्या पाण्डे/ डॉ.आर.पी. पाण्डे - भारतीय कला, पुनर्जागरण एवं चित्रकार, पृ. 26

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

बंगाल स्कूल के प्रसिद्ध चित्रकार अवनीन्द्र नाथ टैगोर

• निशा गुप्ता

सारांश- बीसवीं सदी के कला आंदोलन को एक नयी दिशा देने वाले कलाकार अवनीन्द्र नाथ टैगोर ने कला के क्षेत्र में अपना विशिष्ट स्थान बनाया हुआ है। इन्होने बंगाल स्कूल को नई दिशा प्रदान की। इनका जन्म जन्माष्टमी के दिन हुआ था। एक महान चित्रकार के रूप में जाने वाले अवनीन्द्र नाथ टैगोर बंगाल स्कूल के नायक माने जाते हैं। भारतीय कला में स्वदेशी मूल्यों के वें पहले चित्रकार थे। इन्होने भौतिकवादी कला को छोड़ भारत की परम्परागत कलाओं को अपनाने पर जोर दिया। ये प्रसिद्ध चित्रकार के साथ-साथ प्रसिद्ध साहित्यकार भी थे। इन्होने अनेकों पुस्तकों के साथ अनेकों लेख भी लिखकर प्रकाशित करायें, जिससे इनकी ख्याति देश-विदेश तक फैल गयी।

मुख्य शब्द- मुखरित, अमररूप, अन्त:दृष्टि, कलासाधक, नायक

बंगाल स्कूल के प्रर्वतक अवनीन्द्र नाथ टैगोर ने अपनी प्रतिभा तथा साधना के बल पर जिस शैली का विकास किया वहीं चित्र शैली बंगाल-स्कूल का आधार बनी।

आधुनिक भारतीय चित्रकला के लिए बंगाल स्कूल का बड़ा महत्व है। आधुनिक चित्रकला की वह आधार भूमि है, जिसको हम बंगाल स्कूल कहते है। वह वस्तुत: परम्परागत भारतीय चित्रकला का पुर्नजागरण था, एक नवीनीकरण था।

-वाचस्पति गैरोला

अवनीन्द्र नाथ टैगोर ने विविध कला-धाराओं का अनुगमन कर आत्म चिन्तन परिश्रम से सृजन का नवीन मार्ग खोजा इसके लिए उन्होने कला सृजना को किसी संकीर्ण परिधि में नहीं बांटा। भारतीय प्रविधियों का उन्होने जो अनूठा समन्वय प्रस्तुत किया है उससे कला जगत में बंगाल शैली या ठाकुर शैली की नींव रखकर अन्य कलाकारों का मार्गदर्शन किया।

बंगाल शैली का प्रादुर्भाव एक आन्दोलन के रूप में हुआ था। इस आन्दोलन का उद्देश्य भारतीय कला की प्राचीन परम्परा को जागृत करना था। इसमें कोई सन्देह नहीं कि कला-आन्दोलन से प्रचलित कला-परम्परा को पाश्चात्य शैली से मुक्त कर भारतीय परिधान में ही प्रस्तुत नहीं किया वरन् विश्वकला में अपनी निजी शैली भी स्थापित की। कलाकार इस आन्दोलन से प्रेरित होकर नित्य नवीन प्रयोग और विषय के मौलिक के प्रस्तुतिकरण में रम गये। अवनीन्द्र नाथ के मार्गदर्शन ने कला के सौन्दर्यात्मक और भावात्मक पहलुओं के साथ-साथ कलाकारों की काल्पनिक अनुभूतियों को नवीन परिवेश में प्रस्तुत कर एक निश्चित दिशा की ओर मोड़ दिया। साथ

• एसोसिएट प्रोफेसर, जे.के.पी. पी.जी. कॉलेज, मुजफ्फरनगर

ही साथ कला के इसी दौर में 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में मद्रास कला के प्रिन्सिपल इ.वी. हैवल की प्रेरणा एवं सहयोग से अवनीन्द्र नाथ ने भारतीय कला को पूर्णतः सर्वव्यापी और अमर रूप प्रदान किया।

अवनीन्द्र नाथ ने कलकत्ता आर्ट स्कूल के प्रिन्सिपल पद पर कार्य करते हुए 1907 ई0 में 'इण्डियन सोसाईटी ऑफ ओरियेन्टल आर्ट' की स्थापना की। 1908 ई. में अवनीन्द्र नाथ टैगोर ने गगनेन्द्र नाथ, नन्दलाल बोस, शैलेन्द्र नाथ आदि के साथ कला प्रदर्शनी आयोजित की ओर अपने शिष्यों को भारतीय शैली से प्रेरणा लेकर नयी शैलियों की रचना करने के लिए प्रेरित किया। 1919 ई. में उन्होने शोध-पत्रिका निकाली, भारत-भवन की नींव रखी और स्वयं को कला प्रचार-प्रसार में पूर्णतः अर्पित कर दिया।

कला की तत्कालीन प्रचलित धाराओं को प्रकाश प्रदान करने वाले इस महान कलाकार का जन्म 07 अगस्त 1871 ई. को जोडासॉको में साहित्यक परिवार में हुआ। इनके घर पर देशी-विदेशी कलाकारों के विचारकों की बैठक होती रहती थी और साहित्य संस्कृति जैसे विषयों पर गूढ़ वार्तालाप भी होता रहा था। इस कलात्मक वातावरण का अवनीन्द्र नाथ टैगोर पर गहरा प्रभाव पड़ा। इसके अतिरिक्त इन्होने भ्राता गगनेन्द्र नाथ और चाचा रविन्द्र नाथ टैगोर से सर्जन की आरम्भिक प्रेरणा ग्रहण की। गुरूदेव के कहने पर इन्होने चित्रांगदा एवं विद्यापति और चण्डीदास के गीतों को चित्रित किया और इस क्षेत्र में नवीन प्रयोग भी किये। इस समय इन्होने कलकत्ता के आस-पास के प्राकृतिक दृश्यों को भी पट पर साकार किया। इन प्राकृतिक दृश्यों में भी जिन रंगों का प्रयोग किया वह यूरोपियन है, किन्तु भावों के प्रस्तुतिकरण में वे पूर्णतः भारतीय वर्णनात्मक शैली पर आधारित है। इन चित्रों में बंगाल की विशाल नदियॉ, घने वृक्ष, नौका आदि का समन्वय रमणीय लोक की सृष्टि करते है।

इस समय के अनुभव को उन्होने इस प्रकार लिखा, 'मै उस समय क्या अनुभव करता था, इसे किन शब्दों में प्रकट करूँ, लेकिन इतना अवश्य था कि मै रात-दिन चित्रों के बारे में सोचता रहता था।' वह आगे लिखते है 'जोडासॉको के भवन में अन्तःपुर में प्रसाधन के समय जो सुन्दर मुख दिखाई देते थे, मन में उनका संग्रह कर लिया। तुम उनमें से कईयों को मेरे 'दुल्हन का श्रंगार' चित्र में पाओगे। सुख-स्वप्न को तोडने वाली जो पीड़ा है उसे भी मेरे मन के संचय को मेरे 'शाहजहॉ की मृत्यु शय्या' में उडेल दिया।

अवनीन्द्र नाथ टैगोर कभी कला विद्यालय नहीं गये, वरन् कला का प्रारम्भिक अध्ययन इन्होने विदेशी कलाकारों की सानिध्य में किया। इटैलियन कलाकार ओ. गिलहार्डी से पेस्टल व ऑयल रंगो का आभास प्रस्तुत करना तथा ब्रिटिश कलाकार सी. एल. पालमर से पाश्चात्य यथार्थ शैली, परिप्रेक्ष्य, स्कैच आदि की शिक्षा ग्रहण की। 1895 ई. में एक यूरोपियन महिला से ब्रिटिश पुस्तकें प्राप्त करके तथा एक सम्बन्धी से लखनऊ शैली के चित्रों को लेकर स्वयं अध्ययन किया। पाश्चात्य शैली का अध्ययन करने पर भी इनके चित्रों पर प्रत्यक्षतः विदेश प्रभाव दिखाई नहीं देता क्योंकि उन्होने सोचा कि भारतीय चित्रकार पाश्चात्य कला का अनुकरण करते रहे तो भारतीय कला की उन्नति नहीं हो सकती।

रामायण, महाभारत, दर्शन, पुराण, ऐतिहासिक आख्यानों आदि से भी इन्होने

अनेक विषय चुने जो उनकी तुलिका का सरल स्पर्श पाकर पट पर ऐसे सजीव होकर ऐसे मुखरित हुए है, मानों आकृतियों का प्रत्यक्ष सौन्दर्य पट पर क्रीड़ा कर रहा हो। इन सब विषयों को चित्रित करने के पीछे जहॉ एक ओर लघु-चित्रों की प्रेरणा रही वहीं दूसरी ओर कलाकारों की अभिव्यक्ति महत्वपूर्ण रही, जो इनके व्यक्तित्व के साथ-साथ कला में भी निहित थी। साहित्यिक विषयों के साथ-साथ इन्होने देवदासी, कजरी, कथ्थक, ठाकुर जैसे चित्रों में समाज के अन्य पहलुओं को भी तुलिका से सम्पादित किया। इन चित्रों की प्रेरणा एवं आधार पर उनका उड़ीसा भ्रमण रहा आकृतियों का सौन्दर्य तथा पशु-पक्षियों का अंकन मुगल कलम पर आधारित है किन्तु स्वाभाविकता के आधार पर कहीं-कहीं जुड़ता दिखाई देती है। इसके अतिरिक्त अन्य बहुत से चित्रों में उनकी शैली की विशिष्टता स्पष्ट देखी जा सकती है। 1930 ई. में उन्होने अरेबियन नाईट्स की जो श्रंखला चित्रित की है उसमें इनकी शैली पूर्ण उत्थान पर दिखाई देती है। इन चित्रों में सत्य-असत्य का काल्पनिक वातावरण दर्शक को मुग्ध किये बिना नहीं रहता। इसके अतिरिक्त अभिसारिका, देवदासी, सान्थाल युवती, थैला लिये महिला, नवाज, बुद्ध और सुजाता, उमा, भारत माता, शकुन्तला आदि बहुत से चित्र न केवल उनकी भावना के चित्र बने वरन् चित्रकार की शैली का सही निर्धारण करने में सफल रहें, जहॉ मानव मन की गहराई भी है और सूक्ष्म से सूक्ष्म भावनाओं की अभिव्यंजना भी, रस भी है और आत्मा का प्रत्येक भाव भी, प्रत्येक कोमल रंगो का स्पर्श भी है और प्रविधि का कौशल भी जो सहज ही दर्शक को कहीं रूमानी, कहीं विचित्र, कहीं रहस्यात्मक अवसाद की उच्चवसित तरंगो में डुबोता रहता है।

पाश्चात्य कलाकारों से तुलना करने पर इनकी शैली की विशिष्टता सहज की दृष्टिगोचर होती है। अन्य परम्परागत शैलियों से प्रेरणा होने पर भी इनकी शैली इन्हें वर्तमान से जोड़ती है। इसी सन्दर्भ में अवनीन्द्र नाथ टैगोर का वक्तव्य उल्लेखनीय है 'यह सत्य है कि अपने विगत काल की परम्परा के बिना कोई कला नहीं हो सकती लेकिन यह भी समान रूप से सत्य है कि कोई कला अपने वर्तमान से सम्पर्क किये बिना नहीं रह सकती। कला के इतिहास में हम यह देखते है कि जब कुछ कलाकार या कलाकारों का एक वर्ग जिस किसी वस्तु को एक पारम्परिक आदर्श के रूप में ग्रहण करते हुए उसी तक सीमित रहना है तो उनका सौन्दर्यात्मक अनुभव विकृत अथवा कम हो जाता है और कला का स्तर गिर जाता है।' अवनीन्द्र नाथ ने समाज के बुराई का पर्दाफाश करने के लिए मुखौटो को भी चित्रित किया। विषयवस्तु तथा उसके प्रस्तुतीकरण में उनका यह नवीन प्रयोग था। धीरे-धीरे चित्रण से इनकी रूचि खिलौने बनाने पर केन्द्रित हो गयी, जिसे काटुम-कुटुम कहा गया। फलों के बीज, छोटे-छोटे टुकड़ों, पेड़ की छाल आदि से भी इन्होने कलाकृतियॉ बनायी। यह सत्य ही है कि अवनीन्द्र नाथ टैगोर न केवल भारत ही के महान कलाकार थे, वरन् विश्व के प्रमुख कलाकारों में से एक थे। उन्होने न केवल भारतीय कला के स्वरूप निर्धारण में सहयोग दिया, वरन् अन्य देशों की प्रविधियों को भारतीय कलाकारों से परिचित कराकर कला के क्षेत्र में नवीन प्रयोग किया। वास्तव में वे महान गुरू थे, एक सच्चे कलासाधक थे।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. आर.ए. अग्रवाल, कला विलास
2. डॉ. गिरिराज किशोर अग्रवाल, भारतीय आधुनिक चित्रकला
3. रं. वि. साखलकर, आधुनिक चित्रकला का इतिहास
4. डॉ. ममता चतुर्वेदी, समकालीन भारतीय कला
5. डॉ. रीता प्रताप, भारतीय मूर्तिकला व चित्रकला का इतिहास
6. डॉ. अविनाश बहादुर वर्मा, भारतीय चित्रकला का इतिहास

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

एच आई व्ही संक्रमितों पर शासन की विभिन्न योजनाओं का प्रभाव

• कल्पना वर्मा
••अखिलेश शुक्ल

सारांश- एच आई व्ही की महामारी अन्य महामारियों से भिन्न है। एच आई व्ही की आरंभिक अवस्था तथा चिकित्सीय जांच में एड्स तक रोगी सामान्य स्थिति में रहता है। लाखों लोगों को असामान्य मृत्यु से बचाने के लिए जागरूकता कार्यक्रम को चलाना आवश्यक होता है। एच आई व्ही के लिए वर्तमान सरकार एवं स्वयंसेवी संस्थाएं प्रयासरत है, स्वास्थ्य सेवायें जो कि पहले से अधिक दबाव में है और अधिक प्रभावित हो रही है वर्तमान में एड्स के जितने भी प्रकरण सामने आए हैं, उनमें संक्रमण के 75 प्रतिशत मामले पुरूषों में पाये गये हैं और उनमें से 83 प्रतिशत पुरूषों में यह संक्रमण यौन कारणों से हुआ है। देश में एच.आई.वी. प्रसार के प्रमुख कारण हैं-यौन संचारी रोगों में अत्यधिक वृद्धि, वेश्यावृत्ति और गांवों से शहरों की ओर तीव्र पलायन। एड्स से जुड़ी बदनामी और भेदभाव देश में एड्स के बचाव और नियंत्रण की दिशा में सबसे बड़ी चुनौती है।

मुख्य शब्द-एच आई व्ही , भेदभाव, नियंत्रण, संक्रमित

राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम दिसंबर, 1999 में 1425 करोड़ रू. के परिव्यय से शुरू किया गया था। मौजूदा चरण में इस कार्यक्रम का विकेन्द्रीकरण कर दिया गया है और अब इसके कार्यान्वयन की मुख्य जिम्मेदारी राज्य सरकारों की है। राज्य में राज्य एड्स नियंत्रण समितियों की स्थापना की गई है, जिनके ढांचे में लचीलापन है। इन समितियों के पास राज्य स्तर पर कार्यक्रम प्रबंधन की सुदृढ़ व्यवस्था है। इसके तहत, गैर-सरकारी संगठनों की सहायता ली जाती है और सामुदायिक जागरूकता तथा यौन संचारी रोगों/जननांग संक्रमणों के उपचार हेतु प्रयास किये जाते हैं। चौकसी का दायरा विस्तृत व सुदृढ़ किया गया है। सरकार, अंतर्राष्ट्रीय विकास एजेंसी, मुख्य द्विपक्षीय दाताओं तथा संयुक्त राष्ट्र से प्राप्त ताजा सहयोग के कारण यह कार्यक्रम, कार्यान्वयन के महत्वपूर्ण चरण में प्रवेश कर रहा है। एड्स एक अंतर्राष्ट्रीय सामाजिक समस्या है, एक आंकलन के अनुसार भारत में 5.7 मिलियन लोग एच आई व्ही/एड्स के साथ जी रहे हैं। यू.एन.ए.आई.डी.एस. के अनुसार विश्व में भारत की एच आई व्ही/एड्स व्यापकता सबसे अधिक है। भारत में राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण संगठन (नाको) के अनुसार 15 से 49 वर्ष के आयु के लोगों में एक आंकलन के अनुसार 5.2 मिलियन लोग इस रोग के साथ जी रहे हैं। भारत को

• शोधार्थी, समाजशास्त्र, शोध केंद्र- शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा (म.प्र.)
•• प्राध्यापक, समाजशास्त्र, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

अगली पीढ़ी का देश माना जा रहा है। इसका अर्थ यह है, कि भारत में एच आई व्ही का फैलाव संकटकालीन बिन्दु पर है। लेकिन आज अधिक पैमाने पर निवारण और दूसरे तरह के हस्तक्षेपों से इस महामारी को भविष्य में और अधिक गंभीर होने से रोका जा सकेगा।

शोध के उद्देश्य-

1. एच आई व्ही संक्रमितों को शासन की विभिन्न योजनाओं का मिल रहे लाभ का अध्ययन करना।

शोध परिकल्पना-

1. शोध क्षेत्र में एच आई व्ही संक्रमितों को शासन की विभिन्न योजनाओं का लाभ मिल रहा है।

अध्ययन पद्धति- शोधार्थी ने अपने शोध अध्ययन "एच आई व्ही संक्रमितों पर शासन की योजनाओं का प्रभाव के अंतर्गत अपने गृह प्रदेश मध्य प्रदेश का चयन किया जिसके अंतर्गत प्रदेश के सभी दसों संभागों इंदौर, उज्जैन, भोपाल, ग्वालियर, चम्बल, जबलपुर, नर्मदापुरम्, रीवा, शहडोल एवं सागर में से प्रत्येक संभाग से 30-30 एच आई व्ही संक्रमितों कुल मिलाकर 300 एच आई व्ही संक्रमितों को शोध सर्वेक्षण हेतु न्यादर्श में चयनित किया है। प्रस्तुत शोध में एच आई व्ही संक्रमितों पर शासन की विभिन्न योजनाओं का प्रभाव से संबंधित जानकारी का पता लगाने के लिए शोधार्थी ने शोध उपकरण के रूप में साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया और इसके द्वारा एकत्रित जानकारी का सारणीयन कर विश्लेषण द्वारा वस्तु स्थिति की जानकारी प्राप्त की। शोधार्थी ने एच आई व्ही संक्रमितों से उनको शासन की योजनाओं का लाभ प्राप्त होने की जानकारी के लिए प्रश्न पूछा आपको शासन की किसी योजना का लाभ प्राप्त हो रहा है? प्राप्त उत्तरों को तालिका क्रमांक-1 में दर्शाया गया है-

तालिका क्रमांक-01

एच आई व्ही संक्रमितों को शासन की योजनाओं का लाभ मिलने की जानकारी

क्र.	संभागों के नाम	न्यादर्श में चयनित एड्स रोगियों की संख्या	शासन की किसी योजना का लाभ आप तक पहुंच रहा है?			
			संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1.	इंदौर	30	25	83.33	05	16.66
2.	उज्जैन	30	23	76.66	07	23.33
3.	भोपाल	30	25	83.33	05	16.66
4.	चंबंल	30	22	73.33	08	26.66
5.	ग्वालियर	30	26	86.66	04	13.33
6.	जबलपुर	30	25	83.33	05	16.66
7.	नर्मदापुरम	30	24	80.00	06	20.00
8.	रीवा	30	25	83.33	05	16.66
9.	सागर	30	23	76.66	07	23.33
10.	शहडोल	30	22	73.33	08	26.66
	योग	**300**	**230**	**76.66**	**70**	**23.33**

प्राप्त उत्तरों के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है, कि 76.66 प्रतिशत एड्स रोगियों के अनुसार शासन की योजना का लाभ उन तक पहुंच रहा है, जबकि 23.33 प्रतिशत एड्स रोगियों का कहना था कि शासन की किसी योजना का लाभ उन तक नहीं पहुंच रहा है।

जानकारी को और विशिष्ट करते हुए मैने न्यादर्श में चयनित एच आई व्ही संक्रमितों से प्रश्न पूछा कि क्या आपको पोषण सहायता मिल रही है? इसके उत्तर में प्राप्त आंकड़ों को तालिका क्रमांक-2 में दिखाया गया है।

तालिका क्रमांक-02

एच आई व्ही संक्रमितों को पोषण सहायता मिलने संबंधी जानकारी

क्र.	संभागों के नाम	न्यादर्श में चयनित एड्स रोगियों की संख्या	क्या आपको पोषण सहायता मिल रही है?			
			संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1.	इंदौर	30	20	66.66	10	33.33
2.	उज्जैन	30	18	60.00	12	40.00
3.	भोपाल	30	21	70.00	09	30.00
4.	चंबंल	30	19	63.33	11	36.66
5.	ग्वालियर	30	20	66.66	10	33.33
6.	जबलपुर	30	21	70.00	09	30.00
7.	नर्मदापुरम	30	18	60.00	12	40.00
8.	रीवा	30	20	66.66	10	33.33
9.	सागर	30	19	63.33	11	36.66
10.	शहडोल	30	19	63.33	11	36.66
	योग	**300**	**195**	**65.00**	**105**	**35.00**

प्राप्त उत्तरों से यह स्पष्ट होता है, कि 65.00 प्रतिशत एड्स रोगियों के अनुसार उन्हें पोषण सहायता मिल रही है, जबकि 35.00 प्रतिशत एड्स रोगियों का कहना था कि पोषण सहायता उन्हें नहीं मिल रही है।

जानकारी को और आधार प्रदान करने के लिए न्यादर्श में चयनित एच आई व्ही संक्रमितों से प्रश्न पूछा गया कि क्या आपको एड्स नियंत्रण कार्यक्रम का सहयोग मिल रहा है, प्राप्त उत्तरों के आधार पर ऑकड़ों को तालिका क्रमांक-3 में दर्शाया गया है।

तालिका क्रमांक-03

एच आई व्ही संक्रमितों को एड्स नियंत्रण कार्यक्रम का सहयोग मिलने की जानकारी

क्र.	संभागों के नाम	न्यादर्श में चयनित एड्स रोगियों की संख्या	आपको एड्स नियंत्रण कार्यक्रम का सहयोग मिल रहा है?			
			हाँ		नहीं	
			संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1ण	इंदौर	30	25	83.33	05	16.66
2ण	उज्जैन	30	24	80.00	06	20.00
3ण	भोपाल	30	25	83.33	05	16.66
4ण	चंबंल	30	23	76.66	07	23.33
5ण	ग्वालियर	30	25	83.33	05	16.66
6ण	जबलपुर	30	24	80.00	06	20.00
7ण	नर्मदापुरम	30	22	73.33	08	26.66
8ण	रीवा	30	25	83.33	05	16.66
9ण	सागर	30	24	80.00	06	20.00
10ण	शहडोल	30	23	76.66	07	23.33
	योग	300	240	80.00	60	20.00

उपरोक्त तालिका के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है, कि 80.00 प्रतिशत एड्स

रोगियों के अनुसार एड्स नियंत्रण कार्यक्रम का सहयोग उन्हें मिल रहा है, जबकि 20.00 प्रतिशत एड्स रोगियों का कहना था कि उन्हें एड्स नियंत्रण कार्यक्रम का सहयोग नहीं मिल रहा है।

निष्कर्ष- राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम के लागू होने के बाद प्रारंभिक कुछ वर्षों को छोड़ दें तो वर्तमान समय में उत्तरदाताओं के उत्तर से भी स्पष्ट होता है कि एच आई व्ही संक्रमितों के लिए शासन स्तर पर चलाई जा रही विभिन्न योजनाओं का लाभ उन्हें प्राप्त हो रहा है जिसके सार्थक परिणाम भी प्राप्त हो रहे है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. Barre-Sinoussi F, et al. Isolation of a T-lymphotropic retrovirus from a patient at risk for acquired immunodeficiency syndrome (AIDS). Science 1983; 220: 868-71.
2. Braveman, B., Kielhofner, G., Albrecht, G. & Helfrich, C. (2006). Occupational identity, occupational competence and occupational behavior settings: Influences on return to work in men living with HIV/AIDS. WORK: A JOURNAL OF PREVENTION, ASSESSMENT & REHABILITATION, 27 (3), 267-276
3. Braveman, B., Levin, M., & Kielhofner, G. (2006). HIV/AIDS and return to work: A literature review one decade post-introduction of combination therapy. WORK: A JOURNAL OF PREVENTION, ASSESSMENT & REHABILITATION, 27 (3), 295-204.
4. Breuer, N. L. (2004). Teaching HIV-positive client how to manage the workplace. JOURNAL OF VOCATIONAL REHABILITATION, 22, 163-169
5. Chaisson RE. Living with AIDS (editorial). JAMA 1990; 263 : 434-5.
6. Ciasullo, E. C. & Escovitz, K. (2005). Positive futures: The need for paradigm shift in HIV/AIDS services. JOURNAL OF VOCATIONAL REHABILITATION, 22, 125-128.

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

पारिवारिक विघटन का परिवार व समाज पर प्रभाव (रीवा नगर के विशेष संदर्भ में)

• मधुलिका श्रीवास्तव
•• उमेश सिंह

सारांश- प्रत्येक परिवार में सहयोग, संघर्ष, संगठन तथा तनाव उत्पन्ने करने वाली प्रतिक्रियाएं साथ-साथ क्रियाशील रहती है। पारिवारिक संरचना के निर्माण करने वाले सदस्य जहां अपनी लम्बी सेवाओं तथा अनुभवों द्वारा पारिवारिक जीवन को व्यवस्थित बनाने का प्रयत्न करते है वहीं अन्य सदस्य अपने निजी स्वार्थ अथवा दोषपूर्ण मनोवृत्तियों के कारण परिवार की व्यवस्था को भिन्न-भिन्न करने में तनिक भी संकोच नहीं करते। समाज में जिन नियमों, सामाजिक मूल्यों तथा सांस्कृतिक प्रतिमानों को एक अनुशाशित और व्यवस्थित जीवन के लिये आवश्यक समझा जाता है, वह व्यक्ति इसके प्रतिकूल आचरण करके पारिवारिक व्यवस्था के लिये गंभीर खतरा उत्पन्न कर देते है। साधारण भाषा में इन्हीं परिवार विरोधी तथा जन कल्याण के विरूद्ध किए जाने वाले आचरण से घर में तनाव, झगड़े, विघटन तथा सामाजिक तौर पर अकार्य करते है। पारिवारिक तनाव तथा विघटन व्यक्ति की सामाजिक प्रस्थति को भी प्रभावित करते है। व्यक्ति की प्रस्थिति तो अन्य परिवार के व्यक्तियों की भांति समान होती है, परन्तु कुछ सदस्यों को आय, शिक्षा तथा घर का कर्ता-धर्ता होने के कारण पृथक-पृथक प्रतिष्ठा तथा सम्मान होता है। जब परिवार का कोई सदस्य घर में कलह, झगड़े, गाली गलौज तथा मारपीट जैसी क्रियाएं करता है तो परिवार के अन्य सदस्यों की नजर में उसकी पूर्व प्रतिष्ठा तथा सम्मान की छावि धूमिल हो जाती है, जिसे पुनः स्थापित करना कठिन होता है क्यों सम्मान सदस्य को उसी मात्रा में मिलता है जिस मात्रा में वह अपने उत्तरदायित्वों को सही ढ़ंग से पूरा करते है।

मुख्य शब्द-पारिवारिक विघटन, अत्याचार, इन्टरनेट, पारिवारिक संबंध।

अवधारणात्मक विवेचन- समाज में पारिवारिक विघटन के लिये मुख्य रूप से पारिवारिक कलह बेरोजगारी अशिक्षा मुख्य रूप से जिम्मेवार है। पारिवारिक विघटन एक सामाजिक समस्या है। पारिवारिक विघटन के कारण आज समाज में कई परिवर्तन आ रहे हैं। समाज में संयुक्त परिवार से एकाकी परिवार का उदय हो रहा है। पारिवारिक कलह से आज परिवार के सदस्यों में प्रायः आपसी मन-मुटाव जैसी धारणाएँ आ जाती है। जिस कारण से परिवार में टूटन आ जाता है और परिवार विघटित हो जाता है। इसके अलावा बेरोजगारी भी विघटन के लिये मुख्य रूप से जिम्मेवार है, क्योंकि बेरोजगारी की दशाओं में

• प्राध्यापक, समाजशास्त्र, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)
•• शोधार्थी, समाजशास्त्र, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)

व्यक्ति के लिये आर्थिक संसाधनों को जुटाना कठिन हो जाता है। इसके लिये व्यक्तियों को रोजगार की तलाश में अपने परिवार से दूर जाना पड़ता है और इस तरह से व्यक्ति के दूर जाने के कारण परिवार में आपसी सहयोग और प्रेम की भावना का ह्रास हो जाता है और इस कारण से पारिवारिक विघटन हो जाता है। इसके अलावा अशिक्षा भी पारिवारिक विघटन को बढ़ावा देती है। शिक्षा के अभाव के कारण परिवार के सदस्यों में प्रायः यह देखा जाता है कि वे कोई भी ऐसा निर्णय नहीं ले पाते जो परिवार के हित में हो और वे ऐसे निर्णय ले लेते हैं, जो कि परिवार के लिये एक समस्या उत्पन्न करती है। इस कारण परिवार के सदस्य आपस में झगड़ते रहते हैं और इसका परिणाम पारिवारिक विघटन के रूप में सामने आता है। परिवारिक विघटन आज समाज के सबसे बड़ी समस्या के रूप में सामने आ रही है। इससे समाज में अव्यवस्था व पारस्परिक असहयोग की भावना का जन्म होता है।

आज पारिवारिक विघटन के कारण समाज में संयुक्त परिवारों की संख्या में कमी आ रही है और एकांकी परिवारों की संख्या बढ़ रही है। आज परिवार के सदस्य संयुक्त परिवार में रहना पसन्द नहीं करते और वे संयुक्त परिवार से अलग होकर एकांकी परिवार में रहना पसन्द करते हैं। परिवार प्रायः देखा जाता है कि परिवार के सदस्यों में परस्पर सहयोग की कमी आ रही है। क्योंकि परिवारों के सदस्य प्रायः अपने कार्यो में भी व्यस्त रहते हैं। उन्हें परिवार और समाज से कोई लगाव नही रह जाता और वे समाज के लिये समय नहीं दे पाते। इसके अलावा यह देखा जाता है कि समाज में रह रहे परिवारों के सदस्य एक दूसरे को संदेह व अविश्वास की भावना रखते हैं। उन्हें दूसरे की बातों पर विश्वास नहीं रह जाता वे प्रायः यही सोचते रहते हैं कि कोई दूसरे व्यक्ति हमारे अहित के लिये तो नही सोच रहे हैं और इन्हीं सब कारणों से परिवार के सदस्यों में मन-मुटाव व आपसी प्रेम की कमी दिखने लगती है। और इस कारण से परिवारों में टूटने की प्रक्रिया शुरू हो जाती है। और अंत में परिवारों का विघटन शुरू हो जाता है। सरकारी प्रयासों के माध्यम से पारिवारिक विघटन को रोंका जा सकता है। निम्न वर्ग में पारिवारिक विघटन के लिये आर्थिक कारण जिम्मेवार है। आर्थिक रूप से कमजोर परिवारों में प्रायः यह देखने को मिलता है कि वे कार्य करने के लिये परिवार से दूर जाना पड़ता है। एवं एक ही व्यक्ति के ऊपर परिवार का अत्यधिक भार आ जाने के कारण वे इसको सहन नही कर पाते और वे परिवार से अलग हो जाते है।

परिवार के विघटन के कारण- भारत में संयुक्त परिवार प्रणाली का तीव्रता से ह्रास हो रहा है। भारत के सामाजिक संगठन की यह एक विशेषता थी। संयुक्त परिवार-प्रणाली हिन्दुओं की मूल देन है, परन्तु आज के युग में इसका भी ह्रास हो रहा है, जिसका मुख्य कारण औद्योगीकरण है। इसकी पुष्टि जनगणना रिपोर्ट में की गयी है-''गाँवों में प्रत्येक तीसरा परिवार ऐसा होता है जिसकी संख्या तीन या उससे कम होती है। छोटे घरों का इतने अधिक अनुपात में बढ़ना इस बात का सूचक है कि अब परिवार देश की परम्परागत व्यवस्था के अनुसार संयुक्त नहीं रहता। संयुक्त परिवार से अलग होने तथा पृथक घर बनाने की प्रवृत्ति प्रबल है।'' इस प्रकार हम देखते हैं कि भारतीय समाज में संयुक्त परिवार का विघटन हो रहा है जिसके निम्न कारण हैं-

1. **पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति प्रभाव-** आज के भारतीय समाज पर

पाश्चात सभ्यता का अत्यधिक प्रभाव पड़ा है। इसका कारण ब्रिटिश सरकार का भारत में अधिक दिन तक कायम रहना तथा औद्योगीकरण का पाश्चात देशों में अत्यधिक विकास होना है। हमें औद्योगिक विकास के लिये पाश्चात देशों में अत्यधिक विकास होना है। हमें औद्योगिक विकास के लिये पाश्चात्य देशों का सहारा लेना पड़ता है और इस प्रकार उसका प्रभाव पड़े बिना नहीं रह सकता। हमारे रहन-सहन तथा जीवन-यापन की विधियाँ पाश्चात्य विचारों से प्रभावित हो रही है। इसके फलस्वरूप संयुक्त परिवार का विघटन हो रहा है।

2. **सामाजिक संरचना में परिवर्तन-** आज के परिवार के ढ़ाँचे में मुख्यत: स्त्री वर्ग में अत्यधिक परिवर्तन हुआ है। उसे अयोग्य पति को तलाक देने का अधिकार प्राप्त है। परिवार के सदस्यों को अपनी इच्छानुसार का कार्य का अधिकार है। परिवार के सदस्य अलग-अलग स्थानों में रहने लगे हैं। फलस्वरूप संयुक्त परिवार का विघटन हो रहा है।
3. **अन्तर्जातीय व प्रेम विवाह-** अन्तर्जातीय विवाह से नव-दम्पत्ति का संयुक्त परिवार में रहना कठिन हो जाता है। उनको अलग रहना पड़ता है। जो संयुक्त परिवार के ह्रास में सहायक होता है। इस प्रकार के विवाह मान्य हैं जो आज के नवयुवकों को प्रोत्साहित करते हैं। अत: संयुक्त परिवार प्रथा उत्तरोत्तर विघटित होती जा रही है।
4. **पारिवारिक समूह-**आज के व्यक्तिवादी युग में सदस्यों पर पारिवारिक सत्ता का प्रभाव और नियन्त्रण कम होता जा रहा है। व्यक्तिवादी विचारों के कारण नित्य कलह होते हैं। जब बच्चों में झगड़ा होता है तो वह कलह का कारण हो सकता है और संयुक्त परिवार में बच्चों का अधिक संख्या में पाया जाना स्वाभाविक ही है। संयुक्त परिवार में स्त्रियों को स्वतंत्रता बहुत कम मिलती है। आज के युग में स्त्री में स्त्री भी स्वतंत्र रहना चाहती है, इस कारण भी कलह होता है। अनेक सदस्यों को अपनी रूचि अनुसार खाने तथा पहनने को नहीं मिलता है। इसके कारण भी कलह होता है तथा संयुक्त का ह्रास होता है।
5. **कार्य तथा पद में अन्तर-** व्यक्ति का स्वभाव होता है कि वह अपने श्रम तथा कार्य के अनुसार पद प्राप्त करे। परन्तु संयुक्त परिवार में ऐसा देखा जाता है कि कुछ व्यक्ति अधिक कार्य करते हैं उसके बावजूद फिर भी उनको उपयुक्त पद नहीं मिलता और कुछ व्यक्ति बिना कुछ काम किये भी अच्छे पद प्राप्त कर लेते हैं, जो मनमुटाव का कारण हो सकता है तथा जिसके कारण बँटवारे की नौबत आ सकती है।
6. **आर्थिक दशायें-** आज के भारत तथा प्राचीन भारत की आर्थिक व्यवस्था में अन्तर आ गया है। पहले कृषि और गृह-उद्योग अर्थव्यवस्था के प्रमुख आधार हैं। परिवार कृषि के द्वारा अपने भोजन आदि का प्रबंध करता था। कपड़े आदि का प्रबन्ध गृह-उद्योग द्वारा होता था। इस प्रकार परिवार एक आत्म-निर्भर इकाई थी। परन्तु ज्यों-ज्यों जनसंख्या बढ़ती गई और औद्योगीकरण का प्रसार हुआ, त्यों-त्यों पुरानी आर्थिक व्यवस्था टूटती गई। लोग नगरों व औद्योगिक केन्द्रों में बसने लगे।

उन पर संयुक्त परिवार का अंकुश कम होता गया। इस प्रकार औद्योगीकरण ने संयुक्त परिवार की संरचना को प्रभावित किया।

7. **विज्ञान की प्रगति-** औद्योगिक क्रान्ति के बाद विज्ञान की अत्यधिक प्रगति हुई। अनेक प्रकार की मशीनों का आविष्कार हुआ। विज्ञान की प्रगति के कारण आवागमन के साधनों का अत्यधिक विकास हुआ जिसके कारण गाँव से नगरों में आने-जाने की सुविधा बढ़ गई। लोग नगरीय संस्कृति से प्रभावित होने लगे।

8. **व्यक्तिवाद का विकास-** आज का युग व्यक्तिवादी विचारों का युग है। पुराने समय में जब मनुष्य को खेती-बारी द्वारा जीवन व्यतीत करना पड़ता था, तब अनेक प्रकार की ऐसी परिस्थितियों का सामना करना पड़ता था जिनका अकेले सामना करना कठिन सा हो जाता था। उस समय संयुक्त रूप से रहना आवश्यक था। परन्तु आज के युग के कारण औद्योगीकरण में व्यक्तिगत जीवन बिताना है। साथ ही साथ राज्य से सुरक्षा का सारा काम अपने हाथ में ले लिया।

9. **नये सामाजिक अधिनियम-** ब्रिटिश शासन-काल में अनेक कानून पास किये गये, जिसके द्वारा संयुक्त सम्पत्ति का बँटवारा सम्भव हो गया। इससे संयुक्त परिवार के सदस्यों को पृथक होने की विधिक सुविधा प्राप्त हो गई। स्वाधीनता के बाद अनेक सामाजिक अधिनियम पारित हुए जिनमें हिन्दू विवाह अधिनियम 1955, विशेष विवाह अधिनियम 1954, हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम 1956 मुख्य हैं। इन अधिनियमों के फलस्वरूप हिन्दू परिवार व्यवस्था अत्यधिक प्रभावित हुई है।

10. **संदेह व पारिवारिक कलह-** समाज में विघटन के लिये संदेह व पारिवारिक कलह मुख्य रूप से जिम्मेदवार है, जिसके द्वारा समाज में लोग एक-दूसरे को संदेह की दृष्टि से देखते हैं कि, वह हमारा अहित तो नहीं कर रहा है और इसके अलावा परिवार में प्रतिदिन किसी भी बात को लेकर आपस में झगड़े होते रहते हैं और जिसका परिणाम पारिवारिक विघटन के रूप में सामने आता है।

11. **पारिवारिक कारण -** जिन परिवारों में कार्य करने वाला कोई एक व्यक्ति होता है और खाने वाले कई व्यक्ति होते है। जिससे एक व्यक्ति के ऊपर अत्यधिक परिवार का भार आ जाने के कारण उनमें आपसी विवाद जैसी स्थिति पनपने लगती है और इसका परिणाम पारिवारिक विघटन के रूप में सामने आता है।

12. **आर्थिक कारण -** आर्थिक कारण भी पारिवारिक विघटन के लिये मुख्य रूप से जिम्मेवार है। प्रायः देखा जाता है कि जिन परिवारो में आर्थिक संसाधनों की कमी होती है। और पारिवार में दो वक्त का भोजन भी नहीं जुटाया जा सकता और इससे परिवार में असंतुलन की स्थिति उत्पन्न हो जाती है और इसका परिणाम पारिवारिक विघटन के रूप में सामने आता है।

13. **शिक्षात्मक कारण -** आज समाज में बहुत से परिवार ऐसे है जो कि पूर्णतः अशिक्षित है और इस कारण वे परिवार के सम्बन्ध में ऐसे कोई भी निर्णय नहीं ले पाते जो कि परिवार के हित में हो और इससे परिवार के अन्य सदस्य परिवार के मुखिया से नाराज हो जाते है और आपस में झगड़ते रहते हैं। जिससे पारिवारिक

विघटन की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

14. **राजनैतिक कारण-** राजनैतिक कारणों से भी पारिवारिक विघटन जैसी स्थिति उत्पन्न होती है। प्राय: देखा जाता है कि पारिवार के मुखिया जो निर्णय लेते है वे पूर्णत: परिवार के लिये मान्य होते हैं। वे कभी-कभी ऐसे निर्णय ले लेते है जिससे परिवार में असामंजय की स्थिति उत्पन्न हो जाती है और इसका परिणाम पारिवार विघटन ही होता है।
15. **सामाजिक कारण-** पारिवारिक विघटन के लिये सामाजिक कारण भी कम जिम्मेदार नहीं है। सामाजिक कारणों से भी पारिवारिक विघटन हो रहें है। प्राय: देखा जाता है कि जिन परिवारों में एकाकी परिवारों की प्रमुखत: होती है। परिवार एकाकी में ही रहना पसंद करते हैं, और इस तरह से संयुक्त परिवार से एकाकी परिवारो की संख्या बढ़ रही है।

अध्ययन के उद्देश्य- पारिवारिक विघटन से संबंधित विषय के अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य निम्न है-

1. पारिवारिक विघटन आज सबसे बड़ी सामाजिक समस्या है, इससे समाज को अवगत करना।
2. समाज में अविश्वास की भावना को कम करना तथा समाज में परस्पर सहयोग की भावना को विकसित करने का प्रयास करना।
3. समाज में विवाह की एक निश्चित आयु के संबंध में जानकारी प्रदान करना।
4. रोजगार के अवसरों में वृद्धि की जाए इसके लिए सामाजिक संरचना में परिवर्तन करने का प्रयास करना।
5. अन्तर्जातीय व प्रेम विवाह संबंधी विवाहों से होने वाली समस्या से लोगों को अवगत कराना तथा संयुक्त परिवार प्रणाली को अपनाने संबंधी विषयों की जानकारी देना।
6. पारिवारिक विघटन समाज में क्यों हो रहे हैं। इस विषय की जानकारी प्रदान करें।
7. समाज हो रहे कलह और आपसी झगड़ो को कम करने संबंधित विषय की जानकारी देना।
8. ग्रामीण समाज में युवाओं की सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि का अध्ययन करना।
9. जनसंचार के साधनों के उपयोग के प्रति युवाओं के मनोवृत्ति को जानना।
10. ग्रामीण समाज में जनसंचार साधनों के प्रभाव का युवाओं के पारिवारिक जीवन शैली में क्या बदलाव आये हैं, इसका पता लगाना।
11. जनसंचार साधनों एवं सोशल नेटवर्किंग साइटों से युवा वर्ग में होने वाले फायदे एवं नुकसान का अध्ययन करना।

12. युवाओं के शैक्षणिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं आर्थिक स्तर को प्रोत्साहित करने में जनसंचार साधनों/मीडिया/सोशल नेटवर्किंग साइटों के माध्यम से पारिवारिक विघटन को रोकने का प्रयास करना।

पूर्व साहित्य की समीक्षा -कूले, सी.एच. (2003) ने अपनी पुस्तक ''सोशल ऑगनाईजेशन'' में पारिवारिक जीवन को एक सावयवी प्रक्रिया के रूप में देखा, जिसके अन्दर समाज और व्यक्ति के बीच पारस्परिक प्रक्रिया होती है। विघटन व्यक्तियों और उनके समाज की संस्थाओं के प्रगतिशील सम्बन्धों की प्रकृति में पाया जाता है। सामाजिक संस्थाएं मनुष्य की आवश्यकताओं की संतुष्ट के साधन है, व्यक्तियों के कार्यो पर नियंत्रण करती है परन्तु एक ऐसी अवस्था भी आती है जब संस्थाएँ परिवर्तन के कारण व्यक्ति की आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर सकती और व्यक्तियों के कार्यो पर नियंत्रण भी उठ जाता है। इस दशा में विघटन बार-बार होता रहता है। व्यक्ति और समाज दोनों ही पारिवारिक जीवन में मित्र पक्ष है। समाज और व्यक्ति दोनों उस वृहत वास्तविकता के दो पूरक पक्ष हैं। जिसमें दोनों शामिल होते हैं। जब हम पारिवारिक जीवन की उन इकाईयों के हाश्टकोण से देखते है जिनसे वह बना है तब हम व्यक्ति को देखते है। इसके विपरीत हम सामूहिकता की दृष्ट से देखते है जब हम समाज को देखते हैं।

टरमल, एम.एल. ने अपनी पुस्तक ''साइकोलोजीकल फैक्टर इन मेरीटल हेपीनेश'' में विरण प्रस्तुत करते हुए लिखा है कि - ''वैयक्तिक तनाव के क्षेत्र में स्वभाव को कुछ प्रमुख विशेषताऐं होती हैं - (1) वे बहुत भावुक और उद्वेगात्मक होते है, (2) वे सरलता से क्रोधित हो जाते हैं, (3) अपनी स्वार्थसिद्धी से सदैव झगड़ालू प्रकृति के हो जाते हैं, (4) दूसरे व्यक्तियों की आलोचना में सुख का अनुभव करते हैं, (5) अन्य व्यक्तियों की भावनाओं पर ध्याान नहीं देते, (6) स्वभाव से ही व्यक्तियों से शत्रुता रखते है, (7) दूसरे के प्रति घृणा के भाव को शीघ्रता से प्रदर्शित करने लगते है, (8) किसी के द्वारा प्रसंशा करने अथवा आरोप लगाने से शीघ्र ही प्रभावित हो जाते है, (9) उनमें आत्मविश्वास की कमी हो जाती है, (10) वे शीघ्र ही बहकावे में आ जाते है और (11) बिना किसी विशेष कारण से शीघ्र ही प्रसन्न अथवा दुखी हो जाते हैं।

आहूजा, राम (2002) ''सामाजिक समस्याऐं'' नामक पुस्तक में लिखते हैं कि, ''भारत जैसे समाज में पत्नी को पीटने का समाजशास्त्री अध्ययन हिम कन्दुक पद्धति (Snowball Method) से हो सकता है क्योंकि इस मामले की शिकायत पुलिस में कभी भी दर्ज नहीं कराई जाती। अध्ययन सामान्यतया यह संकत देता है कि इसमें निम्न आय वर्ग की स्त्रियॉ अधिक कष्ट भोगी होती है। इसलिए मध्य वर्गो की पिटने वाली स्त्रियों के आंकड़े उपलब्ध नहीं होने के कारण सामाजिक निष्कर्षो और परिकल्पनाओं पर इसका निश्चित रूप से प्रभाव पड़ता है। इसी प्रकार वेतन योगी स्त्रियों की भूमिका समायोजन का अध्ययन यदि निम्न वर्ग तक सीमित होता है तो वे पहले ही पति और पत्नी के अलग होने, परित्याग का तलाक की स्थितियों की ओर संकेत करता है, परन्तु मध्यम वर्ग की वेतन भोगी स्त्रियों का अध्ययन ऐसी समस्याओं- अलग होने परित्याग व तलाक की सम्भावनाओं को अधिक व्यक्त करता हैं।

शोध प्रविधि-किसी भी शोध कार्य को उद्देश्यहीन एवं ज्ञानरहित नहीं कहा जा सकता

है। इसके लिए कुछ निश्चित कारकों से प्रेरित होकर ही निश्चित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये शोध-कार्य किया जाता है। ज्ञान के क्षेत्र में शोध कार्य अपरिहार्य है। वर्तमान युग में शोध या अनुसंधान का अत्यधिक महत्व है, क्योंकि किसी भी क्षेत्र से संबंधित तथ्यों का प्रमाणीकरण, नवीनीकरण, एवं सत्यापन अनुसंधान के द्वारा ही किया जा सकता है।

शोध कार्य में भारतीय समाज में पारिवारिक विघटन से सम्बन्धित वास्तविक एवं विश्वसनीय आंकड़ों को प्राप्त करने के लिये प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार के आंकड़ों को एकत्र कर पूर्ण किया गया है। प्राथमिक आकड़े स्वयं कार्य स्थल पर जाकर मूल स्रोतों एवं साक्षात्कार अनुसूची द्वारा एकत्र किये गये हैं। जबकि द्वितीयक आंकड़े पारिवारिक विघटन से संबंधित विभिन्न प्रकाशित- अप्रकाशित पुस्तकों, शोध पत्र-पत्रिकाओं, समाचार पत्रों, आदि से एकत्र कर प्रयोग किये गये हैं।

अध्ययन क्षेत्र- प्रस्तुत अध्ययन रीवा नगरके संबंध में है जिसकी कुल जनसंख्या जनगणना 2011 के अनुसार लगभग 2,365,106 है, जिसमें से पुरुष 1,225,100 एवं महिलाएँ 1,140,006 है एवं 1000 पुरुषों के अनुपात में 960 महिलाएँ है। शोधार्थी द्वारा अध्ययन क्षेत्र में जाकर अनुसूची व साक्षात्कार विधियों के माध्यम से आंकड़े एकत्रित किये गये जिसमें से शोधार्थी द्वारा 50 व्यक्तियों को लेकर के शोधकार्य पूरा किया अध्ययन के दौरान जो ऑकड़े एकत्रित किये गये उनका परिचात्मक विश्लेषण निम्नानुसार है।

आकड़ों का वर्गीकरण और सारणीयन- अनुसंधानकर्ता द्वारा तथ्यों को प्राप्त करने के बाद संकलित तथ्यों को सारणी के रूप में प्रस्तुत किया गया है और साख्यकीय विश्लेषण किया गया है।

तालिका क्र. 01
युवा-वृद्ध संबंध

क्र.	संबंध	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	घनिष्ठ+सम्मानजनक	51	51
2.	सामान्य	26	26
3.	सामन्जस्यपूर्ण	17	17
4.	तनावपूर्ण	06	05
	योग	100	100

स्रोत - शोध सर्वेक्षण

तालिका से स्पष्ट है कि वर्तमान में 51 प्रतिशत परिवारों में युवा व वृद्धों के बीच घनिष्ठ एवं सम्मानजनक 26 प्रतिशत में सामान्य, 17 प्रतिशत में सामन्जस्यपूर्ण संबंध तथा 5 प्रतिशत में तनावपूर्ण संबंध है।

कुछ परिवारों में पारिवारिक जीवन बहुत सुखमय एवं शान्तिमय होता है। तथा कुछ परिवारों में औपचारिक संबंधें में वृद्धि, उद्देश्यों की एकता की समाप्ति, प्रेम, स्नेह व सहानुभूति में कभी आदि के कारण पारिवारिक संबंध इतने प्रगाढ़ नहीं रह गये है तथा पारिवारिक सदस्यों के संबंध शिथिल होते जा रहे है, जिससे परिवार के सदस्यों के बीच कलह व तनावपूर्ण संबंध विकसित हो गये है। पारिवारिक जीवन दुःखपूर्ण एवं

क्लेषयुक्त हो गया है। महिलाओं के समाज में पारिवारिक कलह एवं झगड़े की स्थिति इस प्रकार है।

तालिका क्र. 02

पारिवारिक कलह व झगड़ा

क्र.	पारिवारिक कलह व झगड़ा	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	हॉ	27	27
2.	नहीं	73	73
	योग	200	100

स्रोत-शोध सर्वेक्षण

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है, कि अध्ययन में महिलाओं के परिवारों में 27 प्रतिशत परिवारों में पारिवारिक कलह एवं झगड़ा है तथा 73 प्रतिशत दुःख पूर्ण एवं क्लेषयुक्त हो गया है। अध्ययनगत समाज में पारिवारिक कलह एवं झगड़े की स्थिति इस प्रकार है।

पारिवारिक विघटन- जब पारिवारिक सम्बन्धों में तनाव की स्थिति आ जाती है, तो परिवार के सदस्यों के बीच सामन्जस्य समाप्त हहो जाता है। सामन्जस्य के समाप्त हो जाने पर पारिवारिक शान्ति और सुख समाप्त हो जाते है। पारिवारिक सम्बन्धों में धीरे-धीरे अलगाव होने लगता है। जिससे परिवार संबंधों में सहमति और एकमत समाप्त हो जाता है। जिससे परिवार विघटन की ओर मुड़ जाता है। 27 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने परिवार के कलह व झगड़े को स्वीकार किया है। इसी सन्दर्भ में यह जानने का प्रयास किया गया है कि अध्ययनगत महिलाओं के समाज में पारिवारिक विघटन की स्थिति क्या है।

तालिका क्र. 03

पारिवारिक विघटन

क्र.	पारिवारिक विघटन	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	हॉ	07	07
2.	नहीं	93	93
	योग	200	100

स्रोत- शोध सर्वेक्षण

उपुर्यक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि आधुनिककरण के प्रभाव के कारण महिलायें वैवाहिक सामन्जस्य बनाने में काफी सक्षम होती है तथा पति-पत्नी के बीच सामन्जस्य स्थापित विच्छेद भी हो जाता है व तलाक तक की स्थिति निर्मित हो जाती है या फिर पति की मृत्यु हो जाने पर स्वयं सक्षम होकर पारिवारिक जीवन में सहयोगात्मक कार्य करती है। वर्तमान में केवल 7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने पारिवारिक विघटन बताया है, जबकि 93 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अध्ययनगत महिलाओं में आधुनिकीकरण के कारण परिवारों के प्रति सामन्जस्य में काफी कमी देखने को मिलती है। वर्तमान युग में व्यवस्तता की जिन्दगी व आर्थिक रूप से सबल बनने के लिये महिलायें शिक्षित होकर आर्थिक समबलता को प्राप्त करने हेतु परिवार की जिम्मेदारियों को पूर्ण रूप से नहीं निभा सकती है, जिससे उनमें पारिवारिक कलह व झगड़ा निर्मित हो जाने पर एकांकी रूप में अपना परिवार अलग करने का प्रयास करती है।

तालिका क्र. 04

पारिवारिक विघटन के कारण

क्रमांक	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	पारिवारिक कलह	25	50
2	बेरोजगारी	10	20
3	अशिक्षा	10	20
4	अन्य	05	10
	योग	50	100

अध्ययन के दौरान यह पाया गया कि रीवा नगर में 50 प्रतिशत लोगों का मानना है, कि पारिवारिक विघटन का प्रमुख कारण पारिवारिक कलह एवं 20 प्रतिशत लोगों का मानना है, कि इसके लिये बेरोजगारी व अशिक्षा एवं 10 प्रतिशत लोग अन्य कारण मानते हैं।

तालिका क्र. 05

पारिवारिक विघटन रोकने के उपाय

क्रमांक	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	पुनः संयुक्त परिवार को बढ़ावा देकर	30	60
2	रोजगार के अवसरों में वृद्धि	10	20
3	शिक्षा के नये आयाम	05	10
4	अन्य	05	10
	योग	50	100

अध्ययन के दौरान यह पाया गया कि यहाँ के 60 प्रतिशत लोगों का मानना है कि, संयुक्त परिवार को बढ़ावा देकर पारिवारिक विघटन को रोका जा सकता है एवं 20 प्रतिशत लोग रोजगार के अवसरों में वृद्धि के माध्यम से पारिवारिक विघटन को रोकने का उपाय बताते हैं एवं 10 प्रतिशत लोग शिक्षा के नये आयाम एवं 10 प्रतिशत लोग अन्य माध्यम बताते हैं।

तालिका क्र. 06

आयु के आधार पर विघटन

क्रमांक	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	10-20 वर्ष	05	10
2	20-30 वर्ष	20	40
3	30- अधिक	25	50
	योग	50	100

अध्ययन के दौरान यह पाया गया कि 10 प्रतिशत विघटन 10-20 वर्ष एवं 40 प्रतिशत 20-30 वर्ष एवं 50 प्रतिशत 30 से अधिक आयु वर्ग के लोगों का विघटन हो रहा है।

तालिका क्र. 7

पारिवारिक विघटन समाज को कमजोर बनाता है

क्रमांक	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	45	90
2	नहीं	05	10
	योग	50	100

अध्ययन के दौरान यह पाया गया कि 90 प्रतिशत लोग मानते है कि पारिवारिक विघटन से समाज व परिवार कमजोर हो रहे हैं एवं 10 प्रतिशत लोग यह नहीं मानते।

निष्कर्ष - परिवारिक विघटन आज समाज के सबसे बड़ी समस्या के रूप में सामने आ रही है। इससे समाज में अव्यवस्था व पारस्परिक असहयोग की भावना का जन्म होता है। आज पारिवारिक विघटन के कारण समाज में एकाकी परिवारों की संख्या बढ़ रही है और संयुक्त परिवारों की संख्या में कमी आ रही है। आज परिवार के सदस्य संयुक्त परिवार में रहना पसन्द नहीं करते और वे संयुक्त परिवार से अलग होकर एकाकी परिवार में रहना पसन्द करते हैं। परिवार प्राय: देखा जाता है कि परिवार के सदस्यों में परस्पर सहयोग की कमी आ रही है क्योंकि परिवारों के सदस्य प्राय: अपने कार्यो में भी व्यस्त रहते हैं, उन्हें परिवार और समाज से कोई लगाव नही रह जाता और वे समाज के लिये समय नहीं दे पाते। इसके अलावा यह देखा जाता है कि समाज में रह रहे परिवारों के सदस्य एक दूसरे को संदेह व अविश्वास की भावना रखते हैं। उन्हें दूसरे की बातों पर विश्वास नहीं रह जाता वे प्राय: यही सोचते रहते हैं कि कोई दूसरे व्यक्ति हमारे अहित के लिये तो नही सोच रहे हैं। और इन्हीं सब कारणों से परिवार के सदस्यों में मन-मुटाव व आपसी प्रेम की कमी दिखने लगती है और इस कारण से परिवारों में टूटने की प्रक्रिया शुरू हो जाती है और अंत में परिवारों का विघटन शुरू हो जाता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

- डी.डी. शर्मा, (1980) भारतीय सामाजिक संस्थायें, साहित्य भवन आगरा प्रथम संस्करण
- निगम, बी.एस., सूचना, संप्रेषण एवं समाज, भोपाल, 1994 पृ.18
- नायर के एस.स., एवं हवाडइ, एस.ए.पर्स- पेटिक्क्स ऑन डेवलमेंट कमुनिकेशन, नई दिल्ली, 1993
- मदन जी.आर., भारत में समाज कार्य एवं सामाजिक पुर्ननिर्वाण
- मुखर्जी, रवीन्द्रनाथ, भारत में समाज कल्याण और सुरक्षा
- ग्रिब्शन डब्लू.व्ही., दि आवारिजिनल प्राब्लम ऑफ सेन्ट्रल प्राविसेन्स, गर्वनमेन्ट, प्रेस ऑफ इण्डिया, 1944
- गुडे एण्ड हाट, मेथड्स ऑफ सोसल रिसर्च मैकग्राहिल कम्पनी बम्बई, 1952
- तिवारी, शिवकुमार, मध्यप्रदेश के आदिवासी (म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल, 1982)
- दुबे' श्यामाचरण, मानव और संस्कृति, राजकमल प्रकाशन नईदिल्ली, 1993
- नायक' टी. बी., इम्पेक्ट ऑफ इज्यूकेशन ऑन भील्स रिसर्च प्रोग्राम कमेटी प्लानिंग कमीशन दिल्ली, 1969
- पी.आर.' नायडू, भारत के आदिवासी विकास की समस्याऐं
- बोस' एन.के., चेन्जेज इन ट्राइबल कल्चर विफोर एण्ड आफ्टर इंडिपेन्डेन्स मैन इन इण्डिया, 1964
- अग्रवाल जी.के., भारतीय सामाजिक संस्कार आगरा बुक स्टोर आगरा, 1993
- अग्रवाल जी.के. एण्ड पाण्डेय, समाजिक शोध
- उत्प्रेती हरिश्चंद, भारतीय जनजातियॉ, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर,1982
- मुखर्जी रविन्द्रनाथ, सामाजिक शोध एवं सांख्यिकीय
- विद्यार्थी एल.पी., भारतीय आदिवासी नगरी प्रचारिणी सभा बराणसी,1975
- पारिवारिक विघटन से संबंधित पत्र-पत्रिकाएँ व समाचार पत्र

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

तम्बाकु युक्त धूम्रपान का खिलाड़ियों के स्वास्थ्य व समाज पर पड़ता प्रभाव

• पवन कुमार पचौरी

सारांश- खिलाड़ी द्वारा धूम्रपान किये जाने की जो वास्तविक वजह है वह परिवार और मित्रता से ही शुरू होती है। इनमें से ज्यादातर खिलाड़ी की शारीरिक आवश्यकता धूम्रपान नहीं होती बल्कि, यदि कुछ ठोस प्रयास किये जायें तो धूम्रपान को छोड़ने हेतु उन्हें प्रेरित किया जा सकता है क्योंकि खिलाड़ी अर्तमन से यह जानते हैं कि धूम्रपान निश्चित रूप से एक सामाजिक अपराध है। दुनियाभर में **प्रतिवर्ष करीब 16 लाख लोग टीबी के कारण मौत का शिकार बनने हैं। इनमें एशिया में करीब 10 लाख,** अफ्रीका में चार लाख एवं अमेरिका एवं यूरोप में करीब एक लाख लोगों की हर साल धूम्रपान से मौत होती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार वर्ष 2020 तक विश्व में धूम्रपान से होने वाली मौतों का आँकड़ा बढ़कर एक करोड़ से अधिक पहूँच गया है। इनमें से 17.7 प्रतिशत मौतें विकसित देश में होगी। विश्व में करीब एक अरब से अधिक लोग फेफड़ों में टीबी के इंफेक्शन के साथ जी रहे हैं। यदि ये लोग धूम्रपान से दूर रहते हैं तो वे घातक टीबी से बच सकते हैं।

मुख्य शब्द- समाज, संरचना, स्वास्थ्य, समाज

सामाजिक अवधारणा है कि समाज की संरचना कई इकाइयों जैसे- परिवार, संस्थाओं, संघों, प्रतिमानित सम्बंधों, मूल्यों एवं पदों आदि से मिलकर बनी होती है। ये सभी इकाइयाँ परस्पर व्यवस्थित रूप से सम्बंधित होती है और अपने-अपने स्थान पर सापेक्षता स्थिर रहती है। इन सभी के संयोग से समाज का एक वाह्य स्वरूप प्रगट होता है, जिसे सामाजिक संरचना कहते हैं। वर्तमान समाज में व्यापक परिवर्तन हो रहा है। ग्रामीण समाज भी आज नगरीय समाज की तरह प्रगति कर रहा है। नगरीकरण एवं औद्योगीकरण परस्पर सम्बंधित प्रक्रियाएँ हैं। वर्तमान समय में नगरों की जनसंख्या वृद्धि के साथ-साथ हम यह देखते हैं कि बढ़ते हुए नगरीकरण ने भारत में कई परिवर्तनों को जन्म दिया है। इन परिवर्तनों के कारण कुछ लाभकारी परिणाम सामने आये हैं तो दूसरी ओर कई नई समस्याओं ने भी जन्म लिया है। नगरीकरण जनित कुछ समस्यायें निम्न प्रकार से हैं, स्वास्थ्य की समस्या, अपराधों में वृद्धि, मनोरंजन की समस्या, सामाजिक विघटन, आवास की समस्या, भिक्षावृत्ति, मानसिक तनाव एवं संघर्ष, वेश्यावृत्ति, बढ़ती जनसंख्या इत्यादि।

खेलकूद एवं समाजशास्त्र- जब हम खेलकूद को सामाजिक क्रिया-प्रक्रिया के रूप में देखते हैं, तब समाजशास्त्र इसमें बहुत मददगार होता है। यह सैद्धान्तिक, वैचारिक और अन्वेषणात्मक तरीकों को प्रदान करता है। ताकि एक विशेष सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में मानव व्यवहार को समझ सकें और यह भी जान सकें कि उनमें सामाजिकता का आदान-प्रदान किस तरह है। समाजशास्त्र इस संदर्भ में सामाजिक जीवन जानने के लिए

• विभागाध्यक्ष एवं एसोसिएट प्रोफेसर, शारीरिक शिक्षा विभाग, कुलभास्कर आश्रम पी.जी. कालेज, प्रयागराज

अस्त्र प्रदान करता है। यह अस्त्र हमको एतिहासिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक जीवन में मानव व्यवहार को देखकर व समझने में काम देते हैं।

खेलकूद हमारी संस्कृति के अंग हैं। इसलिए समाजशास्त्री खेल-कूदों को सांस्कृतिक अभ्यास के रूप में देखते हैं। दूसरे सांस्कृतिक कार्यों की तरह ही खेलकूद भी मनुष्य के बनाए हुए हैं। ताकि वे निश्चित करें कि उनके समाज व समुदाय में क्या बात महत्वपूर्ण है और वह कैसे की जानी चाहिए इसलिए खेल-कूदों के प्रकार भिन्न-भिन्न होते हैं और एक स्थान से दूसरे स्थान अथवा एक समय से दूसरे समय में भिन्न-भिन्न रूप लेते हैं। उदाहरण के लिए मार्शल आर्ट तथा एशिया में सूमो कुश्ती। उत्तरी अमेरिका की मुक्केबाजी और कुश्ती बिल्कुल भिन्न है। अतः यह आवश्यक है कि हम इन सांस्कृतिक और ऐतिहासिक भिन्नताओं का अध्ययन करें कि जब हम खेलकूद को एक सामाजिक प्रक्रिया का अंग मानते हैं।

खेलों का सामाजिक जीवन से सम्बंध- हम खेलों को सामाजिक प्रक्रिया के रूप में इसलिए भी अध्ययन करते हैं क्योंकि यह सामाजिक जीवन के विभिन्न पहलुओं से जुड़े हुए हैं। जिसमें परिवार अर्थव्यवस्था, पत्रकारिता, राजनीति, शिक्षा एवं धर्म शामिल हैं। एक समस्या जो ग्रामीण व नगरीय सामाजिक स्तर पर अपना सर पूरी तरह से उठा चुकी है वह है धूम्रपान व उससे सम्बंधित अपराध। जो कि सम्पूर्ण मानव जाति को पूरी तरह से खोखला करती जा रही है। सर्वविदित है कि मानव शरीर एक मशीन की तरह है जिसके परिचालन में आमतौर पर बाहरी व आन्तरिक कारकों का हस्तक्षेप रहता है। बाहरी कारकों में चोट, दुर्घटना, जलना, विषाणुओं के कारण कई किस्म के संक्रमण-बैक्टीरिया आदि से जनित कई बीमारियाँ हैं। मानव का आन्तरिक परिवेश स्नायुविक अन्तःस्रावी और प्रतिरक्षित व्यवस्था से अपरिवर्तनीय बना रहता है। मानसिक आघात और कई अन्य बीमारियाँ भी आन्तरिक अशान्ति का परिणाम है। ऐसा चार बुरी आदतों के कारण हो सकता है- मादक पदार्थ लेने से, शराब पीने से, धूम्रपान से और अनुचित सेक्स सम्बंध से जिन्हें आन्तरिक पर्यावरण को दूषित करने वाले प्रदूषक के रूप में परिभाषित किया गया है।

धूम्रपान का प्रभाव- भारत वर्ष में एक सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ है कि तम्बाकू व उससे सम्बंधित नशीले पदार्थों का सेवन मध्य प्रदेश राज्य के रीवा संभाग में सबसे ज्यादा किया जाता है। तम्बाकू एक प्राकृतिक पौधा है तथा यह पूरे विश्व में पैदा होता है। तम्बाकू में निकोटीन होती है। यह कच्चा भी खाया जाता है, पाइप द्वारा भी पिया जाता है, इसका सिगरेट, बीड़ी, हुक्का और अन्य विभिन्न तरीकों से सेवन किया जाता है। तम्बाकू का प्रयोग 16वीं शताब्दी में शुरू हुआ। तब से लेकर अब तक पूरी दुनिया में सिगरेट के सेवन का प्रचलन और वह भी इसके बुरे नतीजों जैसे- फेफड़े का कैंसर, श्वसन संक्रमण, पेट के नासूर की परवाह किये बगैर तेजी से बढ़ा है। यदि एक व्यक्ति एक सिगार में होने वाले सारे निकोटीन को अकेले ले तो उसकी मौत हो जायेगी। सिगरेट का मुख्य तत्व, विभिन्न प्रतिकूल प्रभावों के लिए उत्तरदायी है। रक्त के अन्दर निकोटीन का केन्द्रीकरण कई कारकों पर निर्भर करता है जैसे, धूम्रपान की अवधि, सिगरेट की लम्बाई, फेंकी गई सिगरेट की कलिका, पी गई सिगरेट की टाइप और संख्या अर्थात, फिल्टर, नान फिल्टर और निश्चेष्ट धूम्रपान। हालांकि भारतीय लोगों में बीड़ी पीने का आम प्रचलन है। लेकिन

नुकसानदेह पदार्थ के मामले में बीड़ी और बिना फिल्टर की नियमित आकार की सिगरेट में नाम-मात्र का ही अंतर है। एक औसत सिगरेट में 1.5 मिलीग्राम निकोटीन होता है, रक्त में 140 से 200 नेनामोल/लीटर पहुंचने पर निकोटीन का केन्द्रीकरण होने लगता है। संयमित धूम्रपान करने वालों में केवल निकोटीन ही प्रतिकूल प्रभावों के लिए जिम्मेदार होता है जबकि भारी मात्रा में धूम्रपान करने वालों पर निकोटीन और कार्बन मोनो आक्साइड-अपने जहरीले प्रभाव डालती है।

सिगरेट है ज्यादा नुकसान दायक- अध्ययनों से पता चलता है कि बीड़ी/सिगार की अपेक्षा सिगरेट का सेवन अधिक हानिप्रद है क्योंकि यह अधिक एसिडिक है और सीधे सांस द्वारा अन्दर जज्ब कर ली जाती है जहां से यह रक्त में प्रविष्ट होकर शरीर के अन्य अंगों तक पहुँचती है। यह रक्त वाहिकाओं की पुट्टी को घटाती है क्योंकि धूम्रपान करने वाले पहले से ही कोलेस्ट्राल, वसा और टिगालिसीरियाड एसिड की वजह से एदरोसक्लोरिसिस की ओर प्रवृत्त होता है। ऐसे में हृदय संवहनीय रोगों के होने के खतरे ज्यादा बढ़ जाते हैं जैसे हृदय धमनी को क्षति और रक्त प्रवाह का रुकना आदि। इस बात का भली भाँति पता लगा लिया गया है कि रक्त वाहिकाओं में थक्के जमने के अवसर अक्सर सामान्य व्यक्ति की अपेक्षा धूम्रपान करने वालों में तीन गुना ज्यादा होते हैं। इसलिए प्रवाह के घटने का एक महत्वपूर्ण कारक कुपोषण की ओर ले जाता है और विशेषत: कानों में बालों की कोशिकाओं को क्षति पहुँचती है जो तीक्ष्ण सुनने के लिए उत्तरदायी बनती है।

खेल प्रदर्शन के संदर्भ में प्रमाण अस्पष्ट है। कुछ लोगों का प्रदर्शन- धूम्रपान करने से बिगड़ता है जबकि कुछ लोगों के प्रदर्शन में सुधार आता है और कई लोगों में इसके प्रदर्शन का कोई असर ही नहीं पड़ता। धम्रपान का खेल प्रदर्शन पर परिमित प्रभाव पड़ता है। यह ज्यादा समझदारी होगी कि खिलाड़ी धूम्रपान का प्रयोग न करें।

- एक धूम्रपान करने वाला अपने मुँह को चिमनी बना देता है।
- दांतों को क्षति पहुँचाता है।
- अपनी प्राण शक्ति खो बैठता है।
- सांस उखड़ने लगती है।
- फेफड़े काले हो जाते हैं और कमाई गई पूंजी को खत्म कर देता है।
- पर्यावरण को दूषित करता है।

यदि वह इस गंदी आदत को त्याग देता है तो इससे स्वयं उसको व समाज दोनों को लाभ होगा। इस तरह के नशे की खेलों में कोई जगह नहीं है। इसका सेवन हानिप्रद प्रभाव डालता है जो अल्पावधि व दीर्घावधि में दोनों तरह के हो सकते हैं।

समस्या कथन- धूम्रपान आज सम्पूर्ण विश्व की ऐसी समस्या है, जिससे सम्पर्ण मानव जाति बहुत बुरी तरह से प्रभावित हो रही है जिस पर अभी रोक लगाना नितान्त आवश्यक है। खेल का क्षेत्र भी इससे अछूता नहीं है। चूंकि शोधार्थी खेल एवं शारीरिक शिक्षा के अध्ययन व अध्यापन के क्षेत्र से जुड़ा हैं अत: उनका यह दायित्व भी बन जाता है कि खेल के क्षेत्र में धूम्रपान का क्या प्रभाव पड़ रहा है इसका चिन्तन करें। इसी के आधार पर शोध पत्र की समस्या है "तम्बाकु युक्त धूम्रपान का खिलाड़ियों के स्वास्थ्य व समाज पर पड़ता प्रभाव।"

शोध का महत्व- जैसा कि सर्वविदित है एवं पूर्व के शोध अध्ययनों से ही प्रमाणित हुआ है कि रीवा जिले में तम्बाकू या तम्बाकू से बनने वाले पदार्थों का सेवन सबसे अधिक होता है। शोधार्थी ने इसी तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए इस शोध कार्य में यह देखने का प्रयास किया है कि रीवा विश्वविद्यालय स्तर के खिलाड़ियों में भी तम्बाकू से सम्बंधित धूम्रपान की लत है और यदि हाँ तो उसका उनकी शारीरिक क्षमता, स्वास्थ्य, परिवार व समाज पर क्या प्रभाव पड़ रहा है साथ ही उनकी यह लत किस प्रकार से छुड़वाने में मदद की जा सकती है यही शोध कार्य का महत्व है।

सीमांकन -

1. यह शोध पत्र रीवा के विश्वविद्यालय स्तर के 50 खिलाड़ियों तक सीमित किया गया है।
2. यह शोध रीवा विश्वविद्यालय के 18 से 25 वर्ष के खिलाड़ियों पर आधारित है।

शोध पत्र को रीवा विश्वविद्यालयीन स्तर के वर्तमान व पूर्व खिलाड़ियों तक सीमित कर उनका समाज के प्रति नजरिया, व्यवहार व जिम्मेदारियों के अध्ययन के साथ उनके धूम्रपान करने सम्बंधी आदतों का अध्ययन इस शोध-पत्र में किया गया है साथ ही धूम्रपान से पड़ने वाले शारीरिक कुप्रभावों की समीक्षा अनुसूची में पूछे गये प्रश्नों के आधार पर की गई है।

पूर्व अध्ययन की समीक्षा- पूर्व में किये गये अनुसंधानों का अध्ययन धूम्रपान के खतरे से वाकिफ होने के बावजूद अक्सर लोग अपनी इस आदत को छोड़ने से कतराते हैं। यही वजह है कि दुनिया भर में धूम्रपान पर प्रतिबंध लगाने की दिशा में कानून बनाने की कोशिशें जारी हैं। कुछ वर्ष पूर्व यूरोपीय आयोग ने सम्पूर्ण यूरोप को धूम्रपान के खतरे से मुक्त बनाने की मुहिम शुरू की है। गौरतलब है कि भारत पहले ही धूम्रपान पर प्रतिबंध लगाने के उत्सुक देशों की कतार में शामिल हो चुका है। यूरोपीय यूनियन आयोग ने वर्ष 2009 के अंत तक पूरे यूरोप में सभी सार्वजनिक स्थलों पर धूम्रपान पर प्रतिबंध लगाने का लक्ष्य रखा गया था। आयोग के अनुसार वर्तमान में यूरोपीय यूनियन के सदस्य देशों की लगभग 50 करोड़ आबादी में से एक तिहाई जनसंख्या धूम्रपान करती है। इसमें से 38 प्रतिशत पुरुष और 23 प्रतिशत महिलाएं हैं। आयोग ने सभी 27 सदस्य देशों से अपील की है कि वे धूम्रपान पर प्रतिबंध लगाने संबंधी कानून बनाएं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार वर्ष 2020 तक विश्व में धूम्रपान से होने वाली मौतों का आँकड़ा बढ़कर एक करोड़ से अधिक पहुंच गया है। इनमें से 17.7 प्रतिशत मौतें विकसित देशों में होगी।

शोध पद्धति का विवरण- यह शोध-पत्र विश्लेषणात्मक पद्धति का है। प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोतों का प्रयोग करते हुए अनुसूची में प्रश्नों का संग्रहण कर सांख्यिकी आधार पर प्रतिशतांक सारणी के द्वारा निष्कर्ष निकालने का प्रयास किया गया है जिससे प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर कुछ प्रमुख सुझाव प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

आँकड़ों की सारणी, विश्लेषण एवं निष्कर्ष- एक अनुसूची जो कि अ.प्र. सिंह वि.वि. रीवा (म.प्र.) के अन्तर्गथ पूर्व व वर्तमान विश्वविद्यालयीन स्तर के 50 खिलाड़ियों को न्यादर्श के रूप में शामिल कर आंकड़ों का संग्रहण उपरान्त शारणीयन किया गया। अनुसूची में निम्नलिखित प्रश्नों को दो भागों में बाँटकर शोधार्थी द्वारा विश्लेषण के आधार

पर निष्कर्ष निकाला गया है। पूछे गये प्रश्न निम्नलिखित है –

भाग-अ

प्र.क्र. 1 : क्या आपके परिवार में आपके बुजुर्ग धूम्रपान करते हैं? हाँ/नहीं

प्र.क्र. 2 : क्या आप धूम्रपान करते हैं? हाँ/नहीं

सारणी क्र. 1 (भाग अ)

प्रश्न क्रमांक खिलाड़ी संख्या प्रतिशत

प्रश्न क्रमांक	खिलाड़ी संख्या	प्रतिशत	उत्तर			
			हाँ	प्रतिशत	नहीं	प्रतिशत
1	50	100	40	80	10	20
2	50	100	24	48	26	52

सारणी क्र. 1 के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि न्यादर्श के रूप में जिन 50 खिलाड़ियों से अनुसूची के माध्यम से आँकड़ों का संग्रह किया गया उनके परिवारों में से 80 प्रतिशत परिवारों के बुजुर्ग धूम्रपान का कोई न कोई तरीका अपनाते हैं तथा उन्हीं 80 प्रतिशत परिवारों में 60 प्रतिशत परिवारों के खिलाड़ी भी किसी न किसी रूप में धूम्रपान को अपनाये हुए हैं।

उपरोक्त सारणी के अध्ययन से निष्कर्ष प्राप्त होता है कि यदि परिवार के बुजुर्ग धूम्रपान करते हैं तो उस परिवार के सदस्य भी अनुवांशिकी और पारिवारिक वातावरण के कारण प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में धूम्रपान का सेवन करते हैं या उससे प्रभावित होते हैं।

जिन खिलाड़ियों द्वारा किसी न किसी रूप में धूम्रपान करने की बात को स्वीकार किया गया है उनसे शोधार्थी द्वारा दुसरी अनुसूची के माध्यम से प्रश्नों का उत्तर प्राप्त कर शोध–पत्र हेतु आँकड़ों का संग्रह करक समस्या के सूक्ष्म अध्ययन का प्रयास किया गया।

भाग - ब

प्र.क्र. 1. क्या आप समाज में अपनी धाक जमाने के लिए (शौकिया तौर पर) धूम्रपान करते हैं?
हाँ/नहीं

प्र.क्र. 2. क्या आप धूम्रपान के आदी हैं?
हाँ/नहीं

प्र.क्र. 3. क्या मित्रता निभाने के लिए धूम्रपान करते हैं?
हाँ/नहीं

प्र.क्र. 4. क्या आपको ऐसा लगता है कि धूम्रपान करने से आपके खेल का प्रदर्शन सुधरता है?
हाँ/नहीं

प्र.क्र. 5. क्या आप धूम्रपान के आदी हैं?
हाँ/नहीं

प्र.क्र. 6. क्या कभी आपको धूम्रपान की लत छोड़ने की इच्छा हुई है?
हाँ/नहीं

प्र.क्र. 7 : क्या आपने धम्रपान छोड़ने हेतु कुछ प्रयास किये हैं?
हाँ/नहीं

प्र.क्र. 8 : क्या आप धूम्रपान को एक सामाजिक अपराध मानते हैं?
हाँ/नहीं

सारणी क्र. 2 (भाग-ब)

प्र. क्रमांक	खिलाड़ी की संख्या	प्रतिशत	उत्तर			
			हाँ	प्रतिशत	नहीं	प्रतिशत
1	24	100	10	41.67	14	58.33
2	24	100	14	58.33	10	41.67
3	24	100	13	54.17	11	45.83
4	24	100	6	25.00	18	75.00
5	24	100	16	636.67	8	33.33
6	24	100	11	45.83	13	54.17
7	24	100	19	79.17	5	20.83
8	24	100	22	91.67	2	8.33

सारणी क्र. 2 के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि जिन खिलाड़ियों द्वारा धूम्रपान किसी न किसी रूप में किया जाता है उनमें से कुछ का उद्देश्य तो मित्रों के बीच धाक जमाना होता है जिनका प्रतिशत 41.67 है जबकि 58.33 प्रतिशत खिलाड़ी धूम्रपान के आदी होते हैं। विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि 54.17 प्रतिशत खिलाड़ियों द्वारा मित्रता वश धूम्रपान किया जाता है। जिन खिलाड़ियों द्वारा धूम्रपान किया जाता है उनमें से 25 प्रतिशत खिलाड़ियों को यह भ्रम होता है कि उनके द्वारा धूम्रपान करने से उनका प्रदर्शन शायद सुधरेगा।

66.67 प्रतिशत खिलाड़ी छात्रों द्वारा धूम्रपान छोड़ देने हेतु इच्छा उनके मन में जागृत हुई उनमें से 45.83 प्रतिशत खिलाड़ियों द्वारा धूम्रपान छोड़ने हेतु कुछ प्रयास किये गये हैं। धूम्रपान करने वाले खिलाड़ियों में 79.17 प्रतिशत खिलाड़ियों को इससे होने वाली क्षति का पूर्ण आभास या जानकारी होती है। इसी प्रकार 91.67 प्रतिशत खिलाड़ी यह मानते हैं कि धूम्रपान एक सामाजिक अपराध है।

उपरोक्त सारणी के विश्लेषण के अध्ययन से यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ कि खिलाड़ी द्वारा धूम्रपान किये जाने की जो वास्तविक वजह है वह परिवार और मित्रता से ही शुरू होती है। इनमें से ज्यादातर खिलाड़ी की शारीरिक आवश्यकता धूम्रपान नहीं होती बल्कि, यदि कुछ ठोस प्रयास किये जायें तो धूम्रपान को छोड़ने हेतु उन्हें प्रेरित किया जा सकता है क्योंकि खिलाड़ी अंर्तमन से यह जानते हैं कि धूम्रपान निश्चित रूप से एक सामाजिक अपराध है।

उपसंहार-दुनियाभर में प्रतिवर्ष करीब 16 लाख लोग टीबी के कारण मौत का शिकार बनने हैं। इनमें एशिया में करीब 10 लाख, अफ्रीका में चार लाख एवं अमेरिका एवं यूरोप में करीब एक लाख लोगों की हर साल धूम्रपान से मौत होती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार वर्ष 2020 तक विश्व में धूम्रपान से होने वाली मौतों का आँकड़ा बढ़कर एक करोड़ से अधिक पहूँच गया है। इनमें से 17.7 प्रतिशत मौतें विकसित देश में होगी। विश्व में करीब एक अरब से अधिक लोग फेफड़ों में टीबी के इंफेक्शन के साथ जी रहे हैं। यदि ये लोग धूम्रपान से दूर रहते हैं तो वे घातक टीबी से बच सकते हैं। भारत में धूम्रपान के कारण हर साल औसतन सात लाख लोगों की मौत होती है। इनमें से करीब दो लाख लोग

धूम्रपान से जन्मी बीमारी टीवी के कारण मौत का शिकार बनते हैं। एक अनुमान के अनुसार भारत में 2050 तक धूम्रपान से होने वाली मौतो का आँकड़ा करीब दस लाख तक पहुंच सकता है।

सुझाव- भारत सरकार द्वारा समय-समय पर धूम्रपान पर प्रतिबंध से सम्बंधित कानून लागू किया गया है। सर्वप्रथम सरकार ने मई 2004 में सार्वजनिक स्थलों पर धूम्रपान और सभी तम्बाकू उत्पादों के प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष विज्ञापन पर रोक लगाई तथा अवयस्कों को इसकी बिक्री न की जाय इस पर भी प्रतिबंध लगाया गया। अगले चरण में सरकार ने टी. वी. धारावाहिकों व फिल्मों में धूम्रपान एवं किसी भी रूप में तम्बाकू सेवन के दृश्यों पर पूर्णत: प्रतिबंध लगाया। शोधार्थी द्वारा समस्या से सम्बंधित कुछ सुझाव इस शोध-पत्र में दिये जा रहे हैं जिनका अवलोकन व अध्ययन कर समस्या से सम्बंधित कुछ सारगर्भित परिणाम प्राप्त किये जा सकते हैं वे सुझाव निम्नलिखित हैं-

1. खिलाड़ियों को धूम्रपान से मुक्त करने के लिए कठोर एवं सख्त नियम बनाकर खेल संघों को भी इस हेतु प्रयास किया जाना चाहिए।
2. मनोचिकित्सक की सलाह के द्वारा भी खिलाड़ियों को यह समझा दिया जाय कि उनके स्वास्थ्य व उनके प्रदर्शन पर धूम्रपान का विपरीत असर ही पड़ेगा।
3. खिलाड़ियों में जागरुकता लाने का प्रयास उनके प्रशिक्षकों, पारिवारिक सदस्यों व बुजुर्गों को करना चाहिए।
4. धूम्रपान से होने वाली शारीरिक क्षति की जानकारी भी खिलाड़ियों को समय समय पर देते रहना चाहिए।
5. धूम्रपान से सम्बन्धित सामाजिक क्षति की जानकारी भी समय पर मिलती रहना चाहिए।
6. धूम्रपान छोड़ने की प्रेरणा खिलाड़ियों को मिलती रहे इस हेतु सामाजिक जनजागरुकता अभियान सरकार द्वारा समय-समय पर और वृहद् स्तर पर चलाते रहना चाहिए।
7. समाजशास्त्रियों का चिंतन इस विषय पर भी और अधिक हो इस हेतु प्रयास किया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. सिंह अजमेर एण्ड जगतार सिंह गिल, जगदीश वैश्य, सतपाल सिंह बराड़, निर्मलजीत
2. राठी लिखित "शारीरिक शिक्षा एक परिचय" कल्याणी पब्लिकेशन।
3. घोष आलोक हैण्डबुक ऑफ स्पोर्टस मेडीसिन और फिजकिल फिटनेश
4. डॉ. शर्मा आर. के. खेल क्रिया एवं औषधि विज्ञान
5. डॉ. शैलजा, डॉ. जैन जवाहर लाल ड्रग्स इन स्पोर्टस (डिक्शनरी) 2004
6. डॉ. कवर आर.सी. शारीरिक शिक्षा का इतिहास अमित ब्रदर्स प्रकाशन
8. नेगी रंजन, लघु शोध ग्रंथ, विश्वविद्यालयीन स्तरीय खिलाड़ियों में मादक पदार्थों व उसके प्रभाव सम्बंधी जानकारी का अध्ययन, अ. प्र. सिं. वि. वि. रीवा के शारीरिक शिक्षा विभाग में स्नातकोत्तर उत्तरार्द्ध में एक प्रश्न पत्र के रूप में प्रकाशित 2005
9. दैनिक जागरण, 18 फरवरी, 2007, धूम्रपान पर काबू पाने की मुहिम, पृ.क्र. 3

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

कुपोषण नियंत्रण की पहल

• सुषमा श्रीवास्तव
•• अमिता खरे

सारांश- कुपोषण एक सामान्य शब्द है, जो अनुपयुक्त या अपर्याप्त आहार के कारण चिकित्सकीय स्थितियों में प्रयोग किया जाता है। कुपोषण से तात्पर्य उत्तम पोषण की विपरीत दिशा से है। कुपोषण में भोजन की उचित रूप से पूर्ति नहीं होती अर्थात पोषण संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए जिन भोज्य तत्वों की प्राप्ति शरीर के लिए अनिवार्य है यदि वे भोजन में प्राप्त न हो तो उसे कुपोषण कहते हैं। दूसरे शब्दों में हम कह सकते है कि त्रुटिपूर्ण आहार जिसमें पोषण तत्व आवश्यकता से बहुत ही कम या अधिक मात्राओं में रहते हैं कुपोषण कहलाता है।

मुख्य शब्द- स्वास्थ्य, कुपोषण, बच्चे, महिलाएँ, स्वच्छता, खाद्य पदार्थ

कुपोषण विकसित विकासशील तथा अविकसित सभी देशों में पाया जाता है। समाज में धनी व निर्धन दोनो वर्गो में देखने को मिलता है परन्तु विशेष रूप से अभावग्रस्त क्षेत्रों में यह भीषण रूप से मौजूद रहता है। ऐसे क्षेत्रों में पोषक तत्वों की न्यूनता ही इसका प्रमुख कारण है। आहार सर्वेक्षणों के अनुसार भारत की अधिकांश जनता के भोजन में पोषक तत्वों की दृष्टि से अत्यन्त अपर्याप्तता, गुणात्मक तथा परिणात्मक दोनो ही दृष्टियों से होती है। गरीबों की तो कैलोरी मांग पूर्ति भी नहीं हो पाती है, अत: कमजोर आर्थिक स्थिति वाले और निम्न और मध्यम वर्ग में कुपोषण की समस्या अत्यन्त विकराल रूप लेकर खड़ी है। इसका सबसे अधिक प्रभाव छोटे बच्चों और गर्भवती और धात्री महिलाओं पर पड़ता है। कुपोषण एक सामान्य घटना है, बालकों के लिए खतरनाक होती है, भारत में कुल मृत्यु संख्या का एक तिहाई से अधिक पांच वर्ष से कम आयु के बालकों का है। अधिकांश बालकों की मृत्यु का कारण कुपोषण या मजीलस जैसी बीमारियां होती है। किसी भी प्रकार का संक्रमण कुपोषण को और बढ़ाता हैं, जिसके फलस्वरूप बालक की मृत्यु हो जाती है। हमें उनके कुपोषण तथा संक्रमण का उपचार करना आवश्यक है।

जहाँ तक मध्यप्रदेश का संदर्भ है, कुपोषण की स्थिति काफी चिंताजनक है। सरकारी आंकड़ों के अनुसार 55 प्रतिशत बच्चे कम वजन के है। और 55 प्रतिशत बच्चों की मौते कुपोषण के कारण होती है। (यूनिसेफ और महिला एवं बाल विकास विभाग के प्रकाशन-बाल संजीवनी के अनुसार) कुछ और महत्वपूर्ण बिंदु है, जैसे मध्यप्रदेश में देश में सर्वाधिक कम वनज के बच्चे है और यह स्थिति 1990 से यथावत है।

समेकित बाल विकास सेवा एक मात्र कार्यक्रम है जो सीधे कुपोषण निवारण के लिये जिम्मेदार है। यह आंगनवाड़ियों के एक विस्तृत नेटवर्क द्वारा संचालित होता है, जिसमें पूरक पोषण, स्कूल पूर्व शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं को बच्चों, गर्भवती एवं धात्री

• प्राध्यापक समाजशास्त्र विभाग, शासकीय महाविद्यालय विजयराघवगढ़
•• एम.फिल समाजशास्त्र, ज.भा. अतिथि विद्वान सीधी (म.प्र.)

महिलाओं और कुपोषित बालिकाओं तक पहुंचाना अपेक्षित है, किन्तु आंगनवाड़ियों की प्रभाविता कई कारणों से बाधित होती है। केन्द्रों की अपर्याप्त संख्या, कम मानदेय प्राप्त आंगनवाड़ी कार्यकर्ता, 3 वर्ष से कम उम्र के बच्चों के लिये झूलाघर की अनुपलब्धता जैसी समस्यायें धरातल पर नजर आती है। वृहद स्तर पर राजनैतिक इच्छा शक्ति और बजट प्रावधान में कम प्राथमिकता इसे प्रभावित करती है। वर्तमान में सकल घरेलू उत्पाद का 3000 करोड़ रूपयों का प्रावधान सकल घरेलू उत्पाद का 1/10 वां हिस्सा भी नही हैं। यह तथ्य और स्पष्ट होता है जब हम इसकी तुलना रक्षा के लिये किये गये आवंटन से करते हैं। यदि संसद में बच्चों के लिये उठाये जाने वाले प्रश्नों को देखे तो यह दोनो सदनों में उठाये गए प्रश्नों का मात्र 3 प्रतिशत होता है। आश्चर्य की बात नही है – बच्चें मतदाता नही होते।

मध्यप्रदेश में आदिवासी क्षेत्रों में मात्र 47373 आंगनबाड़ी केन्द्र है जबकि वास्तविक आवश्यकता 84078 केन्द्रों की है। इसी प्रकार शहरी क्षेत्रों में अब भी 16849 केन्द्रों की जरूरत हैं।

मध्यप्रदेश में बच्चों की स्थिति -

- कुपोषण 64 प्रतिशत से बढ़कर 76 प्रतिशत हो गई है (1 से 3 वर्ष)
- 3 वर्ष की आयु के बच्चों में 4 में से 3 बच्चे अनीमिया से ग्रसित हैं।
- 5 वर्ष से कम आयु के बच्चों में एक हजार में से 4 बच्चे रतौंधी से ग्रसित हैं।
- कुपोषण मध्यप्रदेश की एक गंभीर समस्या हैं।
- सारे राज्यों में से सर्वाधिक कम वजन के बच्चे यहाँ पर हैं।
- सर्वाधिक कम वजन के बच्चों की संख्या सन् 1990 से बदली नही हैं।
- कुपोषण विकास और सीखने की क्षमता के लिये एक खतरा हैं।
- बच्चों में कुपोषण की स्थिति राज्य की अर्थव्यवस्था पर भारी बोझ हैं।

गरीब बच्चों में कुपोषण की संभावना अधिक रहती है, वे बच्चे जो अनाथ आश्रम में रहते है या जो अकेले होते है उनमें कुपोषण का खतरा अधिक रहता है। शाकाहारी भोजन करने वालों में प्रोटीन और विटामिन की कमी हो सकती है। शरीर में आयरन की कमी अनुवांशिक कारणों से हो सकती है। ज्यादातर स्थितियों में कुपोषण का खतरा इस कारण रहता है, गर्भवती महिला की सही देखभाल न होने पर समय से पहले पैदा हुए बच्चों को जिन बच्चों के खान–पान का ठीक तरीके से ध्यान नहीं रखा जाता, ऐसे लोग जिन्हे कुपोषण के बारे में नही पता हो, वे बच्चे जिनके अभिभावक समय की कमी के कारण अपने बच्चों के खान–पान का ध्यान नही रख पाते।

कुपोषण के कारण होने वाली दूसरी बीमारियाँ- जब शरीर को सही पोषक तत्व नही मिलते तो कुछ बीमारियों के होने का खतरा हमेशा बना रहता हैं।

घेंघा रोग- हमारे गले में थायराइड नामक ग्रन्थि होती है, जिसमें सूजन के कारण घेंघा रोग पाया जाता है। यह रोग आयोडीन की कमी से होता है। आयोडीन समुद्री सब्जियों में आयोडाईज्ड नमक में पाया जाता है। आयोड़ीन की कमी से बच्चे का दिमागी विकास प्रभावित होती हैं।

विटामिन- बच्चों में सबसे ज्यादा विटामिन ए और विटामिन डी की कमी होती है। फलों सब्जियों और अंडे में विटामिन ए पाया जाता है। विटामिन ए की कमी के कारण रतौंधी या आँखों की समस्या होती है और गंभीर स्थितियों में तो अंधापन भी हो सकता है। विटामिन डी की कमी के कारण हड्डियाँ कमजोर होती है और बच्चें को चलने की समस्या आती है। विटामिन डी का स्त्रोत है सूरज की किरणें, मछली का तेल और दूध और दूध से बने उत्पादक।

गंभीर कुपोषण की पहचान के चिन्ह एवं लक्षण

सूखा रोग- बहुत पतला होना एवं वसा की अनुपस्थिति होना। कंधे भुजाओं, पुट्ठों (buttocks) एवं जांघों (thigh) की मांसपेशियों का नष्ट हो जाना। अत्यंत पतला चेहरा जिसका बुजुर्ग के समान दिखना। बैगी पैंट की तरह दिखना, पुट्ठों की त्वचा का नीचे की ओर लटकना। पैरों में सूजन का न होना। प्रभावित बच्चे अपनी ऐसी स्थिति के वावजूद सजग दिख सकते हैं।

गंभीर क्षय- गंभीर क्षय की पहचान बच्चे के सारे कपड़े उतारकर खड़े करके की जा सकती हैं। इस मुद्रा में यदि बच्चे की टांगे नीचे लटक रही हो तो यह स्पष्टतया देखा जा सकता है कि बच्चे के कूल्हे एवं ऊपरी जांघ पर कोई वसा अथवा मांसपेशिया नहीं, जो कि एक ''बैगी पैंट''जैसा दिखता है एवं जांघ के आगे हिस्से में चुन्नट जैसे दिखते हैं। दोनों बगल के नीचे देखने पर भी वसा नहीं दिखती और धीरे-धीरे गालों से भी वसा गायब हो जाती हैं।

मोटापा- सामान्य से ज्यादा मात्रा में आहार का सेवन भी स्वास्थ्य के लिये ठीक नही, ऐसे आहार जो सिर्फ कैलोरीज बढ़ाते है वे बच्चों के लिए ठीक नहीं होते। आज बच्चें में मोटापा भी एक बड़ी समस्या है जो जाने कितनी बीमारियों को न्योता देता है। मोटापे के कारण बच्चों में हृदय रोग, मधुमेह, पेट के रोग, कैंसर और अवसाद जैसी बीमारियाँ भी हो सकती हैं।

कैसे बचें कुपोषण से- कुपोषण से बचने के लिए सबसे जरूरी है पोषण की जानकारी। नवजात शिशु और छोटे बच्चों को पोषण युक्त आहार देकर उन्हें भविष्य में होने वाली बहुत सी बीमारियों से बचाया जा सकता है। शिशु के जन्म के बाद पहले दो साल उसे विशेष देखभाल की आवश्यकता होती है ऐसे में माँ और परिवार के हर सदस्य को शिशु के हर पोषण पर ध्यान देना चाहिये। शिशु के उम्र के साथ उसकी पोषण आवश्यकताएँ भी बढ़ जाती है। कई बार बच्चे खेलकूद में इतने व्यस्त हो जाते है कि उन्हे खाने का ध्यान नहीं रहता, इसलिए बच्चों को 4 बार खाना और 3 बार दूध देने की आदत बनानी चाहिए। बच्चों को हर तरह का खाना देने का प्रयास चाहिए। बच्चों की आदत इस प्रकार से बनाये।

- दूध, अनाज, दाले, मौसमी फल और हरी सब्जियाँ, शिशु को किसी न किसी रूप में जरूर दें।
- सही समय पर खाना देने की आदत डालें।
- एक ही प्रकार का खाना देने के बजाय थोड़ा बदलाव लायें।
- लंच में ब्रेड की जगह रोटी सब्जी दें।

- सुबह का नाश्ता भरपेट दें, दिन में खाने के साथ फल व सलाद दें, शाम को दूध या दूध के उत्पाद, और रात को थोड़ा हल्का खाना बनायें।

कुपोषण नियंत्रण पर प्रस्तावित पहल

कुपोषण के निहित कारण	प्रस्तावित पहल
घरों में खाद्य संकट	कृषकों को अधिक उत्पादक बनाना, ताकि बेहतर पोषण उपलब्ध हो सके। आय वर्धन कार्यक्रमों को गरीबों एवं कुपोषितों के लिये और अधिक लक्षित करना। खाद्यान्न की दरों को नियंत्रित रखना। खाद्य असुरक्षा की सतत निगरानी करना।
महिला और बच्चों की देखरेख	समाज और घर में महिलाओं की भूमिका को मजबूत करना।
स्वास्थ्य, जल और स्वच्छता	लोक स्वास्थ्य का विस्तार करना। स्वास्थ्य सेवाओं की गुणवत्ता बढ़ना। स्वास्थ्य सेवाओं के साथ पोषण को भी सम्मिलित करना, उचित मात्रा में गुणवत्तापूर्ण पानी की पहुँच बढ़ाना। अच्छे स्तर की स्वच्छता सुनिश्चित करना।
आर्थिक विकास	गरीबी कम करने वाली आर्थिक वृद्धि के अभाव को बढ़ाना। लोकतंत्र को बढ़ावा देना और मानव अधिकारों की रक्षा करना।
वैश्वीकरण	वैश्वीकरण के खतरों से गरीबों की रक्षा करना, और उन्हे अधिक अवसर और दक्षता प्रदान करना।

कुपोषण नियंत्रण समेकित बाल विकास सेवा की भूमिका– भारत में समेकित बाल विकास सेवा एक मात्र कार्यक्रम है जो सीधे कुपोषण निवारण के लिये जिम्मेदार है। यह आँगनबाड़ियों के एक विस्तृत नेटवर्क द्वारा संचालित होता है, जिसमें पूरक पोषण, स्कूल पूर्व शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं को बच्चों, गर्भवती एवं धात्री महिलाओं और कुपोषित बालिकाओं तक पहुँचाना अपेक्षित है, किन्तु आँगनबाड़ियों की प्रभाविता कई कारणों से बाधित होती है। केन्द्रों की अपर्याप्त संख्या कम मानदेय प्राप्त आँगनबाडी कार्यकर्ता, 3 वर्ष से कम उम्र के बच्चों के लिये झूलाघर की अनुपलब्धता जैसी समस्यायें धरातल पर नजर आती है। वृहद स्तर पर राजनैतिक इच्छा शक्ति और बजट प्रावधान में कम प्राथमिकता इसे प्रभावित करती हैं। वर्तमान में सकल घरेलू उत्पाद का 3000 करोड़ रूपयों का प्रावधान सकल घरेलू उत्पाद का 1/10 वाँ हिस्सा भी नही है। यह तथ्य और स्पष्ट होता है जब हम इसकी तुलना रक्षा के लिये किये गये आवंटन से करते है। यह तथ्य और स्पष्ट होता है। आश्चर्य की बात नही है बच्चें मतदाता नहीं होते। मध्यप्रदेश में आदिवासी क्षेत्रों में मात्र 49784 आँगनबाडी केन्द्र है जबकि वास्तविक आवश्यकता 1.10 लाख केन्द्रों की है। इसी प्रकरण शहरी क्षेत्रों में अब भी 16849 केन्द्रों की जरूरत हैं।

कुपोषण इस प्रकार एक जटिल समस्या है घरेलू खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करना आवश्यक है और यह तभी संभव है, जब गरीब समर्थक नीतियाँ बनाई जाये जो कुपोषण और भूख को समाप्त करने के प्रतिलक्षित हो। हम ब्राजील से सीख सकते है जहाँ भूख और कुपोषण को राष्ट्रीय लज्जा माना जाता है। वर्तमान वैश्वीकरण की दौर में जहाँ गरीबों के कल्याण को नजरअंदाज किया जाता है खाद्य असुरक्षा बढ़ने के आसार नजर आते है। हम किस प्रकार सरकार के निर्णय को स्वीकार कर सकते है। जब वह लाखों टन अनाज पशु आहार के लिये निर्यात करती है। आज के समय में किसानों को खाद्यान्न से हटकर नगदी फसलों के उत्पादन को बढ़ावा देने के कारण खाद्य संकट और गहरा सकता है और देश को फिर से खाद्यान्नों के लिये दूसरों पर निर्भर होना पड़ सकता है। हाल ही में जन वितरण प्रणाली को समाप्त करने के सरकार के प्रयास इस ओर इशारा करते हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. डॉ. सर्वेश सिंह, बी.एन.बी. पब्लिकेशन 2. मारवाडी रोड भोपाल 2017
2. डॉ. नवीन चंदा, एकीकृत बाल विकास सेवा उपकार प्रकाशन प्रिंटिग यूनिट बाई पास आगरा 2014
3. जिला चिकित्सालय सीधी
4. राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन
5. महिला एवं बाल विकास कार्यालय सीधी
6. जीवनरक्षक कौशल पत्रिका
7. इन्टरनेट द्वारा प्राप्त जानकारी
8. दैनिक भास्कर 1 मई 2017
9. संचालनालय एकीकृत बाल विकास सेवा साहित्य भवन आगरा
10. सव्य सॉची संस्थान द्वारा प्राप्त सुपोषण कुंजी
11. समाचार पत्र पत्रिकाएँ

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

महिला सशक्तिकरण में बाधक महिलाओं के ही कतिपय विधिक अधिकार (एक आनुभविक अध्ययन)

• भूमिका चौबीसा

सारांश- महिलाओं को निशुल्क विधिक अधिकार दिलाना महिला सशक्तिकरण की अवधारणा की आड़ में लैंगिक समानता के विपरीत एक पक्षीय विचार निर्धारित करता है कि महिलाये स्वतंत्रता के 74 वर्षो के पश्चात् आज भी कमजोर है, जो ना सिर्फ कमजोर सामाजिक स्थिति की मनोवैज्ञानिकता को बताता है, वरन न्यायिक अवधारणा में भी महिला को सशक्त नहीं मानता। जबकि महिलाओं ने राज्य की प्रथम नागरिक होने का गौरव तक प्राप्त किया है। जब तक समानता केवल अनुकम्पा अथवा बाध्यता में ही रहेगी तो महिलाओं के साथ उचित व्यवहार का हिस्सा बने बिना सशक्तिकरण का उपहास मात्र ही बनकर रह जाएगी। समानताएं व्यवहारिक ज्ञान, विचार एवं जीवन शैली का हिस्सा बनाने की महती आवश्यकता आज के वर्तमान को है और उसी क्रम में विधिक समानता भी। समानता का व्यवहार ही महिलाओ का वास्तविक सम्मान है।

मुख्य शब्द- महिला सशक्तिकरण, विधिक अधिकार, लैंगिक समानता, सामाजिक स्थिति

"जब है नारी में शक्ति सारी, तो फिर क्यों कहे नारी को बेचारी"[1] "किसी को भी मत कहने दो कि तुम कमजोर हो, क्योकि तुम एक औरत हो।"[2] –मैरी कोम

प्रस्तावना- अर्वाचीन काल से इतर झाँसी की रानी लक्ष्मी बाई से ही यदि महिलाओं की सामाजिक स्थिति को प्रारंभ किया जाये तो भी कई नाम महिलाओं की समर्थता को प्रमाणित करेंगे। गुलामी की बेड़ियों से स्वतंत्रता प्राप्ति और उसके पश्चात् वर्तमान तक महिलाओं की सामाजिक स्थिति में तो बहुत बड़ा परिवर्तन आया, किन्तु, वैचारिक मापदंडो में लैंगिक असमानता को तोला जाए, तो भी महिलाओं के नारायणी स्वरुप के स्पष्ट दर्शन अवश्य होंगे। न्याय की देवी के रूप में अहिल्या बाई होलकर माँ साहेब के रूप में विख्यात हुई और जीजा माता, जयवंता बाई जी के संस्कारों ने शिवाजी महाराज और महाराणा प्रताप के रूप में भारत के शौर्य को विश्व में परिचित कराया। लक्ष्मी बाई केलकरय मौसी जी के नाम से विख्यात दिव्यात्मा की महिला सशक्तिकरण की जगाई अलख ने विश्व के सबसे बड़े महिला संगठन राष्ट्र सेविका समिति का निर्माण किया। कल्पना चावला ने अन्तरिक्ष में उड़ान भरी तो, निकिता ढ़ोंडीयाल अपने पति मेजर विभूति की शहादत के बाद सेना में भर्ती होकर हर असमानता को समाप्त कर दिया। ज्योतिबा फुले ने महिला शिक्षा ही नहीं, समानता और असमानता के पाट के बीच में भी शिक्षा के मूल लक्ष्य का मार्ग निकलने का सामर्थ्य दिखाया। विजयलक्ष्मी पंड़ित समेत 15 महिलाओं ने अपना अमूल्य योगदान

• अधिवक्ता, जिला एवं सेशन न्यायालय, उदयपुर (राजस्थान) 313001.

देकर संविधान निर्माण में सहयोग किया। इस राष्ट्र में प्रतिभा पाटिल जैसी धीरता गंभीरता ने राष्ट्रपति पद को शोभायमान कर राष्ट्र को सुरक्षित किया, तो सुषमा स्वराज जैसी विदुषी राजनेता ने विदेश मंत्रालय को भी आमजन के लिए सहज सुविधा का स्वरुप दिया। सुप्रीम कोर्ट की एक मात्र महिला जज इंदिरा बनर्जी, वरिष्ठ अधिवक्ता पिंकी आनंद, एडिशनल सोलिसिटर जनरल ऐश्वर्या भाटी ने विधिक क्षेत्र में रिकार्ड्स स्थापित किये। धार्मिक क्षेत्र में साध्वी ऋतंभरा ने जनमानस को अध्यात्म से जोड़ा। माला सुखवाल, विनिशा जोशी आदि ने खेल जगत को अलग ही ख्याति प्रदान की।

निश्चित ही, ये उदाहरण बहुत कम है और सूची बहुत बड़ी। किन्तु फिर भी एक अनुमान जो पूर्णसिद्ध है कि महिलाओं की क्षमता अदम्य, अतुलनीय और असीमित है। निसंदेह ! नारी स्वयं नारायणी है।

किन्तु; प्रश्न ये विचारित होता है कि क्या ये महिलायें भी भारतीय विधि की दृष्टि में कमजोर और दुर्बल है। जिन्हें निशुल्क एवं विधिक सहायता पुरुषों की तुलना में मात्र लैंगिक असमानता के कारण प्रदान है,जहाँ संवैधानिक गौरव के रूप में प्राप्त समानता का अधिकार गौण प्रमाणित हो जाता है। यदि नहीं, तो फिर विधिक सशक्तिकरण में बाधक कतिपय उपबंधो में शीघ्र ही संशोधन किया जाना अत्यंत आवश्यक है।

महिला सशक्तिकरण- स्त्री और पुरुष दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं, एक दूसरे के पूरक हैं, सहयोगी हैं, विरोधी नहीं । प्रकृति ने दोनों को एक विशेष उद्देश्य से सृष्टि की निरंतरता हेतु बनाया है, दोनों एक दूसरे के लिए आवश्यक हैं, अनुपयोगी नहीं।[3]

कमजोर, पिछड़ी, शोषित महिलाओं को आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं विधिक उपचार प्रदान कर समानता के स्तर पर लाना और उनको सशक्त किये जाने हेतु किये जाने वाले उपयोगी प्रक्रम महिला सशक्तिकरण में सहायक है, जो उनमे आत्म विश्वास के बल पर सकारात्मक विचारों को जाग्रत कर एक उज्जवल लक्ष्य का मार्ग प्रशस्त करता है।

महिलाओं के अधिकार-

- **धार्मिक-** 'जनकसुता समेत रघुराई, पेखि प्रहरषे मुनि समुदाई।'[4]

  श्रीराम के राज्याभिषेक के समय भी वामभाग में महारानी सीता के विराजित होकर नारी सम्मान एवं नारी समानता का अधिकार रामचरितमानस में अंकित है।

  हिन्दू धर्म ग्रंथो में महिलाओं को कई अधिकार न सिर्फ सम्मान एवं गौरव के साथ प्राप्त थे, अपितु यदि शक्ति सामर्थ्य के मापदण्डों पर विचार किया जाये, तो उनके प्रतीक के रूप में महिलायें पूजनीय भी है। विद्या हेतु देवी सरस्वती, सम्पन्नता हेतु देवी लक्ष्मी एवं शक्तिस्वरुप में देवी दुर्गा, काली समेत नव दुर्गा के स्वरुप में शक्ति को पूजा जाता है।

  प्रकृति को भी दैवीय शक्ति मानते हुए, जीव-जंतु, नदी- तालाब, वृक्ष,पौधे आदि को भी मातृत्व भाव से पूजा जाता है, जो स्पष्ट रूप से आध्यात्मिक भावों से उत्कृष्ट जीवन पद्धति का बोध कराते है।

  सामाजिक- सहधर्मिणी के रूप में गृहस्थी को साझा कर पारिवारिक संस्था के अधिकार महिलाओं को समानता से प्राप्त है। पारिवारिक, सामाजिक, धार्मिक आदि कार्यो में पत्नी की सलाह को परिवार के अन्य सदस्यों के समान ही सम्मान

प्राप्त है। अपने जीवन साथी को चुनने का अधिकार, राज्यभार में सहयोग का अधिकार, खेती में सहयोगी अधिकार आदि कई अधिकार प्राप्त समाज में माता, बहन, पत्नी, पुत्री आदि विभिन्न रूपों में महिलाओं को सामाजिक अधिकार विभिन्नता से प्राप्त है। पराधीनतावश इन अधिकारों में कुरीतियों ने भी जन्म लिया, जो महिलाओं के शोषण का कारण भी बना,जिनमे दहेज प्रताड़ना, घूँघट प्रथा, कन्या भ्रूण हत्या आदि प्रमुख है।

वर्तमान में, विधवा के पुर्विवाह, अंतरजातीय विवाह,व्यावसायिक अधिकार, शोषण के विरूद्ध अधिकार, स्वयं जीवनसाथी का चयन करने आदि अधिकार भी सामाजिक रूप से स्वीकार किये जाने लगे है।

विधिक-

- **भारतीय संविधान में प्रदत्त महिलाओ के अधिकार-**
  - भाग-3 में प्रदत्त मौलिक अधिकार (अनुच्छेद 14- 32) जिनमे समता का अधिकार, शोषण के विरूद्ध प्राप्त अधिकार, धार्मिक स्वतंत्रताए, संस्कृति और शिक्षा सम्बन्धी अधिकार आदि के साथ संवैधानिक उपचारों के अधिकार भी प्राप्त है) अनुच्छेद 14, 15, 16 (1), 19(1), 21, 25-28, 29-30 और 32 विशेष रूप से संदर्भित है।
  - अनुच्छेद 39 (क) समान न्याय और निःशुल्क विधिक सहायता।
  - अनुच्छेद 42- काम की न्याय संगत और मानवोचित दशाओं का तथा प्रसूति सहायता का उपबंध।
  - अनुच्छेद 47- पोषाहार स्तर और जीवन को ऊँचा करने तथा लोक स्वास्थ्य का सुधार करने का राज्य का कर्तव्य
  - अनुच्छेद 51(ड.)- भारत के सभी लोगो में समरसता और सामान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करे जो धर्म, भाषा और प्रदेश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभाव से परे हो, ऐसी प्रथाओ का त्याग करे जो स्त्रियों के सम्मान के विरूद्ध है।
  - महिला एवं बाल विकास मंत्रालय के अंतर्गत कानूनी सुरक्षा[5]- राष्ट्रीय महिला आयोग अधिनियम, सतीप्रथा (निवारण) अधिनियम एवं नियमावली, महिलाओं के अश्लील प्रतिनिधित्व, दहेज प्रतिषेध अधिनियम 1961, राष्ट्रीय महिला आयोग अधिनियम 1990, घरेलु हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम 2005 आदि।
- **विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम 1987-**
  - **उद्देश्य-** विधिक सेवा प्राधिकरण का गठन करने के लिए एक अधिनियम, जो समाज के कमजोर वर्गों को निःशुल्क और सक्षम विधिक सेवा प्रदान करते हुए और यह सुनिश्चित करते हुए कि न्याय सुरक्षित करने के लिए अवसर, आर्थिक या अन्य योग्यता के आधार पर किसी नागरिक को अस्वीकृत नहीं करता और यह सुनिश्चित करने के लिए लोक अदालतों का गठन, कि विधिक प्रणाली का कार्य समान अवसर के आधार पर न्याय की वृद्धि करना है।
  - धारा-4 केन्द्रीय प्रधिकरणों के कार्य जिनमें-
  - धारा-4 (घ) समाज के कमजोर वर्गों के लिए उपभोक्ता संरक्षण, पर्यावरण संरक्षण या किसी अन्य विशेष कार्य के सम्बन्ध में सामाजिक न्यायिक जाग्रति के जरिए

आवश्यक कदमों को उठाना और इस प्रयोजन के लिए, विधिक योग्यताओं में सामाजिक कार्यकर्ताओं को सिद्ध हस्त करना।

- धारा-4 (ठ) जनता के बीच में विधिक शिक्षा और विधिक सतर्कता को बढ़ने के लिए उपयुक्त उपायों को करना और विशिष्ट प्रशासनिक कार्यक्रमों और उपायों के साथ-साथ सामाजिक कल्याण विधानों और अन्य अधिनियमितियों द्वारा सुरक्षित किये अधिकारों, हितो और विशेषाधिकारों के बारे में समाज के कमजोर वर्गों को शिक्षित करना।
- धारा- 4(ड) ग्रास रूट स्तर पर कार्य कर रहे, विशेषकर अनुसूचित जातियों और जनजातियो, महिलाओं और शहरी और ग्रामीण श्रमिकों के मध्य, स्वैच्छिक सामाजिक कल्याण संस्थाओ के समर्थन को सूचीबद्ध करने के लिए विशेष प्रयास करना। उपबंधित करती है।
- अध्याय 4 विधिक सहायता के हकदार; धारा 12 विधिक सहायता प्रदान करने हेतु उपधारा (ग); महिला या बच्चा

➢ **अन्य अधिनियमों में महिलाओं के विधिक अधिकार-**

- **भारतीय दंड संहिता-** 1860 धारा 354, 354-क, 354-ख, 354-घ, 366-क, 366-ब, 372, 373, 376, 377 498, 498-क, आदि महिलाओं से संबंधित प्रावधान है।
- **दंड प्रक्रिया संहिता-**1973 महिलाओं की गिरफ्तारी एवं भरण-पोषण के सम्बन्ध में कुछ विशेष प्रावधान उपबंधित करती है।
- **भारतीय साक्ष्य अधिनियम-** कैमरा ट्रायल जैसे विशेष उपबंध के साथ ही, बलात्कार के मामलों में सबूत का भार भी अभियुक्त पक्ष पर ही डाला गया है।
- इसके अतिरिक्त पी.सी.पी.एन.डी.टी. एक्ट-1994, 1994, पोस्को अधिनियम, भरण-पोषण अधिनियम, मातृत्व लाभ अधिनियम-1961, महिला श्रमिकों के लिए विशेष उपबंध यथा प्रवासी मजदूर अधिनियम 1979 में महिलाओं के लिए पृथक टॉयलेट्स और बाथरूम की व्यवस्था को सुनिश्चित किया है। ऐसे कई उपबंध जो महिलाओं को घर और कार्यस्थान दोनों ही स्तर पर सशक्तिकरण में सहायक हो, उपबंधित समय और परिस्थितियों के अनुरूप किये ही गए है।

➢ **कतिपय सरकारी योजनाओ में महिलाओं के अधिकार-** बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ योजना, वन स्टॉप सेंटर योजना, महिला हेल्पलाइन योजना, उज्ज्वला योजना, वर्किंग वुमन होस्टल, सुधार गृह, महिला शक्ति केंद्र (एम.एस.के.), निर्भया योजना आदि।[6]

इसके अतिरिक्त कई योजनाये बीमा, पेंशन, मासिक आय, स्वास्थ्य आदि संदर्भित कई योजनाये बालिकाओं, किशोरियों, महिलाओं, गर्भवती स्त्रियों, वृद्धाओं आदि प्रत्येक वर्ग, क्षेत्र की महिलाओं को ध्यान में रखते हुए समय समय पर महिला सशक्तिकरण में योगदान हेतु तैयार की गयी है।

महिला एवं बाल विकास मंत्रालय[7] -

➢ विजन- हिंसा से मुक्त वातावरण सम्मान के साथ रह रही तथा देश के विकास में पुरुषों के सामान भागीदारी निभा रही सशक्त महिलायें और सुसम्पोषित बच्चे, जिन्हें

शोषण-मुक्त वातावरण में विकास एवं वृद्धि के सभी अवसर प्राप्त हो।

- **मिशन-** विभिन्न क्षेत्रो से सम्बंधित नीतियों एवं कार्यक्रमों के माध्यम से महिलोन्मुख सरोकारों को मुख्यधारा में जोड़कर, महिला अधिकारों के बारे में जागरूकता का विकास करके तथा महिलाओं के सम्पूर्ण विकास हेतु उनके संस्थागत एवं कानूनी समर्थन प्रदान करके महिलाओं के सामाजिक एवं आर्थिक सशक्तिकरण को बढ़ावा देना।[8]
- **लिंग (जेंडर)-** संवेदीकरण लिंग सम्बन्धी मुद्दों तथा महिलाओं के मानवाधिकारों के बारे में सामाजिक जागरूकता को बढ़ावा, लिंग सम्बन्धी शिक्षा तथा मानवाधिकारों से सम्बंधित मुद्दों को शामिल करने के लिए पाठ्य सामग्रियों की पुनरीक्षा, महिलाओं की गरिमा को ठेस पहुँचाने वाले सभी सरकारी संदर्भो को हटाने, महिलाओं की समानता एवं अधिकारिता से सम्बंधित सामाजिक संदेशो को संप्रेषित करने के लिए जन संचार माध्यमो के भिन्न-भिन्न रूपों का प्रयोग करना आदि आदि उपाय नीति और कार्यक्रम निर्माताओं, क्रियान्वयन और विकास एजेंसियों, कानून प्रवर्तन तंत्रों और न्याय पालिका तथा गैर सरकारी संगठनो पर विशेष रूप से ध्यान केन्द्रित कर राज्य के कार्यपालक, विधायी तथा न्यायिक प्रकोष्ठों के कार्मिको को प्रशिक्षित करने हेतु प्रावधान किये गए है।

विधिक समीक्षा-

ओंकार सिंह बनाम राजस्थान सरकार[9]

स्त्रियों का सम्मान प्रत्येक नागरिक का मूल कर्तव्य है।

विशाखा बनाम राजस्थान राज्य[10]

उक्त मामले में कामकाजी महिलाओ के समान अधिकारों की सुरक्षा को लेकर मा. न्यायालय द्वारा कई मापदंडो को निर्वचित किया गया।

रूपाली गुप्ता बनाम रजत गुप्ता[11]

उक्त प्रकरण में मा. उच्च न्यायालय, दिल्ली ने कई वर्षो से कार्यरत चार्टर्ड अकाउंटेंट को अच्छी तरह से योग्य, सक्षम मानते हुए अन्तरीम भरण पोषण देना अस्वीकार किया।

शैलजा व अन्य बनाम खोबन्ना[12]

उक्त प्रकरण में 'कमाने की क्षमता' और 'वास्तविक आय' दोनों अलग संकल्पनाए मानते हुए विश्लेषित कर माना कि पत्नी के कमाने की क्षमता का होना मात्र उसे भरण-पोषण की राशि के अधिकार से वंचित नहीं करता।

सुनीता कछवाहा बनाम अनिल कछवाहा[13]

माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्णित उक्त प्रकरण में निर्धारित किया कि पत्नी की आय होना मात्र उसे भरण पोषण के अधिकार को बाधित नहीं कर सकता।

शीला बारसे बनाम महाराष्ट्र राज्य[14]

गिरफ्तारी के पश्चात् पुलिस कर्तव्य है कि विधिक सेवा प्राधिकरण में इसकी सूचना दे जिससे त्वरित न्याय उपलब्ध हो सके।

सुखनंदन ठाकुर बनाम बिहार राज्य[15]

लोक सहायता से अभिप्राय बेकार, वृद्ध, बीमार एवं ऐसे ही अशक्त व्यक्तियों को आर्थिक सहायता एवं अनुतोष प्रदान करने से है।

"महिलाओं को भारतीय संविधान के अनुच्छेद 39-ए व विधिक सेवा प्राधिकरण

1987 की धारा 12 के तहत मुफ्त कानूनी सहायता पाने का अधिकार है। पीड़िता की आर्थिक हालत भले ही अच्छी या दयनीय हो"- सचिव, जिला विधिक सेवा प्राधिकरण, कन्नोज"[16]

यह समानता का दौर है और संविधान लिंग, जाति सहित तमाम पहलुओं में समानता की बात करता है। एक बेरोजगार एमबीए पति को बेरोजगार एमबीए पत्नी से अलग ट्रीट नहीं किया जा सकता। ऐसे में एक दूसरे से बिना नौकरी के पति से गुजारा भत्ता नहीं मांगा जा सकता। -जस्टिस शिव नारायण ढींगड़ा[17]

चुनौतियां- जेंडर समानता सिद्धांत भारतीय संविधान की प्रस्तावना, मौलिक अधिकारी, मौलिक कर्तव्यों और नीति निदेशक तत्वों में प्रतिपादित है। संविधान महिलाओं को न केवल समानता का दर्जा प्रदान कर्ता है, अपितु राज्य को महिलाओं के पकदा में सकारात्मक भेदभाव करने की शक्ति भी प्रदान करता है।[18]

भारत का संविधान जहाँ एक और प्रत्येक नागरिकों के समान अधिकारों की बात करता है, मौलिक कर्तव्यों के माध्यम से महिलाओं के सम्मान और गौरव को बनाये रखने में बाधक प्रथाओं के आचरण का विरोधी है, वही दूसरी और विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम की धारा 12 (ग) में बिना किसी वर्गीकरण अथवा मापदंड के लैंगिक आधार पर महिलाओं को निःशुल्क एवं विधिक सहायता प्राप्त करने की पात्रता प्रदान करता है, जबकि विधिक सेवा प्राधिकरण उद्देश्य समाज के कमजोर वर्गों निःशुल्क और सक्षम विधिक सेवा को उद्देशित करता है। संविधान का अनुच्छेद 39-क भी स्पष्ट रूप से बिना किसी लैंगिक भेदभाव के आर्थिक या किसी अन्य निर्योग्यता के कारण ही नागरिकों के न्याय प्राप्ति के उपाय को उपबंधित करता है।

राष्ट्र के सभी वैचारिक दृष्टिकोण यथाय धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक, मनोवैज्ञानिक, विधिक आदि को भी यदि आधार बनाया जाये, तो भी मूलाधार में नारी नारायणी, शक्ति और बुद्धि-विवेक की प्रतिमूर्ति त्रिदेवीस्वरुप में पूजनीय होकर राष्ट्र की आधारशीला के रूप में ही स्थापित हुई है।

ऐसे में विधिक सेवा प्राधिकरण की धारा 12 (ग) प्रत्येक महिला को अधिनियम के उद्देश्य के सापेक्ष निश्चित ही विधिक तंत्र में आज भी असमर्थ, अबला, असक्षम, असहाय और लाचार ही परिभाषित करती है।

किसी भी प्रकार से, यह उपबंध यहाँ तक कि उन महिलाओं को भी जो आर्थिक, राजनैतिक एवं नाना प्रकार से सक्षम है एवं वर्तमान में महिला सशक्तिकरण ही नहीं, अपितु कई मामलो में पुरुषों से भी स्वयं को बेहतर प्रमाणित कर चुकी है, उनको भी अधिनियम के कमजोर वर्ग से स्वयं को पृथक नहीं किया जा सकता। निश्चित हीय यह महिला सशक्तिकरण को चुनौती देने वाला उपबंध तो है। साथ ही, विधिक समानता को भी स्वतंत्रता प्राप्ति के अर्ध शतक पूर्ण कर लेने के उपरांत भी समविधान (संविधान) को स्पष्ट चुनौती एवं बाधा है।

महिलाओं के शिक्षित होने, कमाने में सक्षम होने, पैतृक संपत्ति में समान अधिकार प्राप्त होने के बावजूद महिलाओं को ही भरण-पोषण हेतु अधिकार प्राप्त होना भी विधिक रूप से असमानता को सामाजिक विचारों से पृथक नहीं करता। जबकि ठीक विपरीत स्थिति होने के बावजूद पुरुषों द्वारा महिलाओं के भरण-पोषण की राशि की मांग करना सामाजिक रूप से महिलाओं की असमान स्थिति को विधिक अस्तित्व प्रदान करता है।

घरेलू हिंसा धारा 5 (घ) में भी महिलाओं को निःशुल्क विधिक सहायता प्राप्त करने का अधिकार है, जबकि प्रत्येक घरेलू हिंसा के मामले में यह कदापि आवश्यक नहीं

कि हिंसा की शिकार महिला आर्थिक रूप से अथवा विधिक उपचार लेने में असमर्थ ही हो।

नब्बे के दशक की सुपरहिट सिने तारिका करिश्मा कपूर और प्रसिद्द व्यवसायी संजय कपूर का तलाक और मशहूर अभिनेता ऋतिक रोशन और सुजैन खान के तलाक की 380 करोड़ रूपये की भरण पोषण राशि को बोलीवुड के सबसे महंगे तलाक में से माना जाता है।

महिलाओं ने स्वयं ही वंशानुगत गुणों के क्रम में इस असमानता को स्वीकार कर लिया है और शायद यही कारण है कि उच्च शिक्षा लेने, प्रोफेशनल होने के बावजूद स्वयं को भरण पोषण के लिए आज भी पुरुषों पर निर्भर मानती है, और विधि के कुछ उपबंधो ने भी इस असमानता को सहारा देकर महिला सशक्तिकरण की परिकल्पना को सार्थक होने में बाधित किया है।

मात्र लैंगिक आधार पर महिलाओं के प्रति एक पक्षीय विचारो ने महिला सशक्तिकरण की आड़ में न्यायालयों में फर्जी मुकदमो की संख्या में ही वृद्धि नहीं की, अपितु पारिवारिक सामंजस्य की वैवाहिक संस्था को महिला कानूनों ने तोड़ने का कार्य भी कुशलता से किया है।[19]

घरेलू हिंसा अधिनियम जिसका उद्देश्य वास्तव में घरेलू सुरक्षा प्रदान करना है, को भी एक पैकेज का हिस्सा बनाकर न्यायालय में प्रस्तुत किया जाता है, जिसके साथ कई मुकदमे वर्षो चलते रहते है। जबकि घरेलू सुरक्षा अधिनियम अपने आप में समर्थ अधिनियम है और न्यायालय का विवेकाधिकार भी पूर्ण समर्थ।

भारतीय दंड संहिता जो कि दंडात्मक अवधारणा से सुधारात्मक न्याय की मांग करती है, की धारा 498-क के साथ अधिकतर हिन्दू पक्षकारों की स्थिति में हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 13-क को जोड़ दिया जाता है। जबकि न्याय तंत्र का कार्य सुधारात्मक प्रवृत्ति को अग्रसर करना है, ऐसे में हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 9 ही अपेक्षित होनी चाहिए। जिससे समाज में महिलाओं के प्रति होने वाली हिंसा को उद्धरण स्वरुप रोका जा सके, ना कि वैवाहिक विघटन का आधार देकर सामाजिक व्यवस्था को तोड़ना।

विश्लेषण एवं सुझाव-

महिलायें जहाँ विधायिका, कार्यपालिका, न्यायपालिका आदि सभी क्षेत्रो में सेना से लेकर अन्तरिक्ष तक में अपना कीर्तिमान स्थापित कर चुकी है। महिलायें; जिन्होंने व्यवसाय, राजनीति, चिकित्सा, न्याय, शिक्षा आदि आदि कोई क्षेत्र अछूता नहीं रखा उन सभी महिलाओं को विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम 1987 की धारा 12 (ग) में अधिनियम के आधार उद्देश्य संविधान के अनुच्छेद 39-क के अंतर्गत कमजोर वर्ग की श्रेणी में स्थान देना, निश्चित ही महिलाओं के साथ असमानता, लैंगिक भेदभाव, एवं पुरुष प्रधान विचारित दृष्टिकोण का परिचायक प्रमाणित होता है। उक्त धारा 12-ग में आने वाली महिलाओं की पात्रता को परिभाषित कर वर्गीकृत किये जाने की महती आवश्यकता है। उक्त धारा न केवल समानता के अधिकार को वरन लैंगिक भेदभाव को भी स्पष्ट करती है और महिला सशक्तिकरण को भी बाधित करती है।

घरेलू हिंसा अधिनियम का नाम घरेलू सुरक्षा अधिनियम के रूप में संशोधित किया जाना, अधिनियम के उद्देश्य को अधिक प्रभावी बना सकता है।

भारतीय दंड संहिता के अंतर्गत 498-क के मामलो के प्रमाणित हुए बिना धारा 13-अ का प्रार्थना-पत्र स्वीकार नहीं किया जाये, जिससे जेरे ट्रायल मामलो के आधार पर न सिर्फ विवाह संस्था को बचाया जा सके, अपितुय दंड संहिता के मूल उद्देश्य जो अपराध के सुधारात्मक प्रक्रम में दाम्पत्य संस्था को बचाने हेतु उदाहरण के रूप में महिलाओं के प्रति अपराधो की बढ़ती संख्या को घटाने में सहयोगी बन सके।

भरण पोषण की राशि के आधारों के मापदंड में बदलाव की आवश्यकता है, महिलाओं को समानता न सिर्फ शिक्षा, संपत्ति, धर्म, भोजन, कपड़े और मकान की आवश्यकताओ में अपितु विचारों में भी लानी होगी। विचार ही स्वस्थ और दुर्बल बनाते है, निश्चित ही विचारों को सबल और अक्षम बनाने की और उपाय करने होंगे।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. https://www.gyanipandit.com/slogans-on-women-empowerment-in-hindi/
2. https://www.khayalrakhe.com/2018/02/women-empowerment-slogans-quotes-hindi.html
3. https://www.jagran.com/blogs/devkumar
4. https://hindi.webdunia.com/religion/religion/hindu/ramcharitmanas/UttarKand/4.htm
5. https://wcd.nic.in/hi/act/2314
6. https://wcd.nic.in/hi/schemes-listing/2405
7. https://wcd.nic.in/hi
8. https://wcd.nic.in/hi
9. 1988 राजस्थान विधि पत्रिका 1
10. https://indiankanoon.org/doc/1031794/
11. 234(2016) डी.एल.टी. 693
12. ए.आई.आर. 2017 एस.सी. 1174
13. (2014) 16 SCC 715
14. ए.आई.आर. 1983 378
15. ए.आई.आर. 1957 पटना 617
16. https://www.livehindustan.com/uttar-pradesh/kannauj/story-right-to-women-to-get-free-legal-aid-3432937.html
17. https://navbharattimes.indiatimes.com/metro/delhi/other-news/-/articleshow/6447124.cms
18. https://wcd.nic.in/hi/womendevelopment/
19. https://www.patrika.com/lucknow-news/women-misused-dowry-act-470/

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

एच. आई. व्ही. संक्रमितों के लिए चिकित्सीय सुविधाओं का अध्ययन

• कल्पना वर्मा
•• अखिलेश शुक्ल

सारांश- वर्तमान में एच.आई. व्ही. संक्रमण से बचाव के लिए सरकार एवं स्वयंसेवी संस्थाएँ प्रयासरत है। स्वास्थ्य सेवाएं जो कि पहले से अधिक दबाव में है फिर भी शोध क्षेत्र में एच.आई. व्ही. संक्रमितों को पर्याप्त चिकित्सीय सुविधा एवं परामर्श मिल रहा है, साथ ही एड्स के बारे में जनता को सही जानकारी न होने से और स्वास्थ्य कर्मचारियों को इस विषय पर ठीक से प्रशिक्षण न मिलने के कारण बहुत सी गलतफहमियां हैं, जिससे लोग एड्स रोगियों से गलत व्यवहार करते हैं, इसलिए वर्तमान में जरूरत चिकित्सीय सुविधाएं बढ़ाने के साथ ही जन जागरूकता अभियान को और विस्तृत करने की आवश्यकता है ताकि एड्स को विकराल सामाजिक समस्या बनने से रोका जा सके।

मुख्य शब्द- एच.आई. व्ही., संक्रमण, स्वयंसेवी संस्थाएँ, परामर्श

प्रस्तावना - एड्स एक अंतर्राष्ट्रीय सामाजिक समस्या है, एड्स ग्रस्त लोगों के प्रति व्यवहार एड्स का एक बड़ा दुष्प्रभाव है कि समाज को भी संदेह और भय का रोग लग जाता है। समाज पर एच.आई. व्ही. /एड्स संक्रमितों लोगों की स्थिति के परस्पर प्रभाव को समझने के लिए इसके वैज्ञानिक पहलुओं को भी समझना होगा। एड्स चार शब्दों का बना हुआ मिश्रित रूप है, जिसका अर्थ होता है इम्यूनिटी की कमी से अर्जित रोगों से लड़ने की शक्ति की कमी से उत्पन्न होने वाले लक्षण। ये लक्षण एच.आई. व्ही. नामक वायरस के शरीर में पहुंचकर उसकी रोगों से लड़ने की शक्ति को नष्ट करने से पैदा होते हैं। एड्स वर्तमान युग की सबसे बड़ी सामाजिक समस्याओं में से एक है अर्थात यह एक महामारी है। एड्स के संक्रमण के चार मुख्य कारण है संक्रमित असुरक्षित यौन सम्बंधों से, संक्रमित रक्त व रक्त उत्पाद के आदान प्रदान से, संक्रमित माँ से शिशु में संक्रमण द्वारा एवं संक्रमित हुई सुई या सिरिंजों के उपयोग द्वारा।

भारत में 80-85 प्रतिशत संक्रमण असुरक्षित लैंगिक/विषम लैगिंक यौन संबंधों से फैल रहा है। अभी तक इसे लाइलाज माना जाता है, लेकिन दुनिया भर में इसके इलाज पर शोध कार्य चल रहे हैं। 1981 में इसकी खोज से अब तक 30 करोड़ लोग जान गवां बैठे हैं। ब्रिटिश मेडिकल जर्नल में हाल के एक अध्ययन के अनुसार, भारत में लगभग 14-16

• शोधार्थी, समाजशास्त्र, शोध केंद्र- शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा
प्राध्यापक, समाजशास्त्र, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

लाख लोग एच.आई. व्ही. /एड्स से प्रभावित है। ये नए आंकड़े विश्व स्वास्थ्य संगठन और यू.एन. एड्स समर्थित हैं। भारत में एड्स नियंत्रण अभियान के अनेक चरण चलाए गए हैं, मौजूदा चरण में इस कार्यक्रम का विक्रेन्द्रीकरण कर दिया गया है और अब इसके कार्यान्वयन की जिम्मेदारी राज्य सरकारों की है। मध्यप्रदेश में एड्स को रोकने के लिए मध्यप्रदेश एड्स कंट्रोल सोसायटी का गठन किया गया है। इसके अनुसार 2005 से 2016 के बीच 53, 85, 000 टेस्ट किए गए जिनमें से 46674 एच.आई. व्ही. पाजिटिव पाए गए। जो इस बात की ओर इशारा करते हैं कि स्थिति भयावह, जिसे समय रहते नियंत्रित करना आवश्यक है।

शोध के उद्देश्य-

1. एच.आई. व्ही. संक्रमितों को अस्पताल में मिल रहे सहयोग का अध्ययन करना।
2. एच.आई. व्ही. संक्रमितों के लिए स्वास्थ्य सेवाओं का अध्ययन करना।

शोध परिकल्पना-

1. शोध क्षेत्र में एच आई व्ही संक्रमितों को पर्याप्त चिकित्सकीय सुविधाएँ व परामर्श मिल रहा है।

अध्ययन पद्धति- शोधार्थी ने अपने शोध अध्ययन एच.आई. व्ही. संक्रमितों पर पर्याप्त चिकित्सीय सुविधाएं व परामर्श मिलने से संबंधित जानकारी हेतु अपने गृह प्रदेश मध्यप्रदेश का चयन किया, जिसके अंतर्गत प्रदेश के सभी दसों संभागों इंदौर, उज्जैन, भोपाल, ग्वालियर, चम्बल, जबलपुर, नर्मदापुरम, रीवा, शहडोल एवं सागर में से प्रत्येक संभाग से 30-30 एच.आई. व्ही. संक्रमितों कुल मिलाकर 300 एच.आई. व्ही. संक्रमितों को शोध सर्वेक्षण हेतु न्यादर्श में चयनित किया है। प्रस्तुत शोध में शोधार्थी ने शोध उपकरण के रूप में साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया और इसके द्वारा एकत्रित जानकारी का विश्लेषण कर वस्तुस्थिति की जानकारी प्राप्त की। शोधार्थी ने एच.आई. व्ही. संक्रमितों से उनको मिल रही चिकित्सीय सुविधाओं की जानकारी के लिए प्रश्न पूछा क्या आपको पर्याप्त सहयोग अस्पताल के माध्यम से मिल रहा है? प्राप्त उत्तरों को तालिका क्र-1 में दर्शाया गया है -

तालिका क्र.01

एच.आई. व्ही. संक्रमितों को अस्पताल से पर्याप्त सहयोग मिलने की जानकारी

क्र.	संभागों के नाम	न्यादर्श में चयनित एड्स रोगियों की संख्या	क्या आपको अस्पताल से पर्याप्त सहयोग मिल रहा हैं?			
			संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1.	इंदौर	30	26	86.66	04	13.33
2.	उज्जैन	30	25	83.33	05	16.66
3.	भोपाल	30	26	86.66	04	13.33
4.	चंबल	30	24	80.00	06	20.00
5.	ग्वालियर	30	26	86.66	04	13.33
6.	जबलपुर	30	26	86.66	04	13.33
7.	नर्मदापुरम	30	25	83.33	05	16.66
8.	रीवा	30	25	83.33	05	16.66
9.	सागर	30	24	80.00	06	20.00
10.	शहडोल	30	24	80.00	06	20.00
	योग	300	251	83.66	49	16.33

उपरोक्त तालिका के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है, कि 83.66 प्रतिशत एड्स

रोगियों के अनुसार उन्हें अस्पताल से पर्याप्त सहयोग मिल रहा है, जबकि 16.33 प्रतिशत एड्स रोगियों का कहना था कि अस्पताल से उन्हें पर्याप्त सहयोग नहीं मिल रहा है।

चिकित्सीय सुविधाओं एवं शोध क्षेत्र में एच.आई. व्ही. संक्रमितों की जागरूकता को जानने के लिए मैनें न्यादर्श में चयनित एच आई व्ही संक्रमितों से प्रश्न पूछा कि क्या स्वास्थ्य सेवाओं में आपको कहीं और रेफर किया गया है? प्राप्त उत्तरों को तालिका क्रमांक-2 में दर्शाया गया है।

तालिका क्रमांक-02
एच.आई.व्ही. संक्रमितों को स्वास्थ्य सेवाओं के कारण अन्यत्र रेफर किए जाने संबंधी जानकारी

क्र.	संभागों के नाम	न्यादर्श में चयनित एड्स रोगियों की संख्या	क्या स्वास्थ्य सेवाओं के कारण कहीं आपको रेफर किया गया हैं?			
			संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1.	इंदौर	30	05	16.66	25	83.33
2.	उज्जैन	30	06	20.00	24	80.00
3.	भोपाल	30	05	16.66	25	83.33
4.	चंबल	30	06	20.00	24	80.00
5.	ग्वालियर	30	06	20.00	24	80.00
6.	जबलपुर	30	06	20.00	24	80.00
7.	नर्मदापुरम	30	07	23.33	23	76.66
8.	रीवा	30	05	16.66	25	83.33
9.	सागर	30	07	23.33	23	76.66
10.	शहडोल	30	07	23.33	23	76.66
	योग	300	60	20.00	240	80.00

उपरोक्त तालिका के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है, कि 20.00 प्रतिशत एड्स रोगियों के अनुसार उन्हें स्वास्थ्य सेवाओं के कारण कही अन्यत्र रेफर किया गया है, जबकि 80.00 प्रतिशत एड्स रोगियों का कहना था कि उन्हें स्वास्थ्य सेवाओं के कारण कही रेफर नहीं किया गया है।

निष्कर्ष- वर्तमान में एच.आई. व्ही. संक्रमण से बचाव के लिए सरकार एवं स्वयंसेवी संस्थाएँ प्रयासरत हैं। स्वास्थ्य सेवाएं जो कि पहले से अधिक दबाव में हैं फिर भी शोध क्षेत्र में एच आई व्ही संक्रमितों को पर्याप्त चिकित्सीय सुविधा एवं परामर्श मिल रहा है, साथ ही एड्स के बारे में जनता को सही जानकारी न होने से और स्वास्थ्य कर्मचारियों को इस विषय पर ठीक से प्रशिक्षण न मिलने के कारण बहुत सी गलतफहमियां हैं जिससे लोग एड्स रोगियों से गलत व्यवहार करते हैं इसलिए वर्तमान में जरूरत चिकित्सीय सुविधाएं बढ़ाने के साथ ही जन जागरूकता अभियान को और विस्तृत करने की आवश्यकता है ताकि एड्स को विकराल सामाजिक समस्या बनने से रोका जा सके।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. राष्ट्रीय एड्स कंट्रोल सोसायटी द्वारा जारी आंकड़े वर्ष 2016
2. मध्यप्रदेश राज्य एड्स नियंत्रण समिति द्वारा प्रकाशित एड्स टाइम्स संस्करण 2011
3. लवानिया, एम.एम. (2010), चिकित्सा समाजशास्त्र, रिसर्च पब्लिकेशन, तिपोलिया बाजार, जयपुर, राजस्थान
4. सिंह, डॉ. ए.एन. (2012), मल्लिा शोषण, एड्स एवं एन.जी.ओ. विवेक प्रकाशन, 7 यू.ए. जवाहर नगर, दिल्ली

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

पर्यावरण और मानवीय संबंधों का बदलता स्वरूप

•आकृति खरे
••एस. बी. विश्वकर्मा

सारांश- वर्तमान में मानव पर्यावरण संबंधों में काफी बदलाव देखने को मिलता हैं। मानव की बढ़ती आवश्यकताएं लगातार प्रकृति का विदोहन कर रही हैं, जबकि ऐतिहासिक या औद्योगिक क्रांति से पहले मानव-पर्यावरण का संबंध मैत्रीपूर्ण था, अर्थात् मानव प्रकृति से ही अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करता था। लेकिन पहले मनुष्य की आवश्यकताएं सीमित थी और प्रकृति में भी स्वयं इतनी क्षमता थी कि वह अपनी क्षति पूर्ति कर सके। लेकिन आज की स्थिति बिल्कुल अलग हैं, कोरोना महामारी भी मानव-पर्यावरण के बिगड़ते संबंधों का नतीजा हैं, क्योंकि एक सीमा तक तो प्रकृति मनुष्य द्वारा किए गये परिवर्तन को सहन कर सकती है, लेकिन एक सीमा के बाहर, परिवर्तन करने पर पारिस्थितिक तंत्र में असंतुलन पैदा हो जाता हैं, इसलिए मानव-पर्यावरण के बदलते संबंधों का अध्ययन करना बेहद आवश्यक हो गया हैं। इस शोध पत्र के माध्यम से मानव तथा पर्यावरण के संबंधों के बदलते स्वरूप के विभिन्न पक्षों का अध्ययन किया गया हैं।

मुख्य शब्द- पर्यावरण, औद्योगिक क्रांति, पारिस्थितिक तंत्र, प्रकृति, असंतुलन

परिचय– मनुष्य तथा पर्यावरण के बीच घनिष्ठ संबंध है, और दोनों एक–दूसरे से प्रभावित होते हैं, साथ ही एक दूसरे को प्रभावित करते है। मनुष्य तथा पर्यावरण के बीच अंर्तसंबंध समय तथा स्थान के साथ बदलते रहते हैं। विश्व के कुछ भागों में मनुष्य पूर्णतया प्रकृति से प्रभावित है, तो कुछ अन्य भागों में वह प्रकृति को प्रभावित भी करता हैं। प्राचीन काल में मनुष्य पूर्णतया प्रकृति के नियमों का पालन करके जीवन व्यतीत करता था, परंतु आधुनिक युग में उसने विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विकास के बल पर प्रकृति पर विजय पाना शुरू कर दिया है। मनुष्य सभी प्राणियों में श्रेष्ठ है और प्रकृति से लड़ने में सक्षम है परंतु प्रकृति भी मनुष्य को अपने नियमों के अंतर्गत नियंत्रित करने की कोशिश करती है और नियम तोड़ने पर उसे दंडित करती है। इस प्रकार मनुष्य तथा प्रकृति बड़े जटिल क्रिया–प्रतिक्रिया के सूत्र में बंधे हुए हैं।

मानव और पर्यावरण संबंधों का ऐतिहासिक परिदृश्य- मनुष्य तथा पर्यावरण के मध्य बदलते संबंधों के ऐतिहासिक परिवेश में अध्ययन का अत्यधिक महत्व होता हैं क्योंकि इस तरह के अध्ययन द्वारा मानव के क्रियाकलापों द्वारा प्राकृतिक पर्यावरण पर पड़ने वाले बढ़ते कुप्रभावों को अच्छी तरह उजागर किया जा सकता है। प्राचीन काल से वर्तमान समय तक मानव–पर्यावरण के मध्य बदलते संबंधों को निम्न चरणों में

• सहायक प्राध्यापक भूगोल, शासकीय पी. जी. महाविद्यालय गढ़ाकोटा सागर (म.प्र)
•• सहायक प्राध्यापक भूगोल, शासकीय पी. जी. महाविद्यालय गढ़ाकोटा सागर (म.प्र)

विभाजित किया गया हैं –

आखेट एवं भोजन संग्रह काल, इस काल में मानव प्राकृतिक पर्यावरण का अभिन्न भाग तथा घटक था। उसके कार्य पर्यावरण के अन्य प्राणियों के समान ही थे। इस काल में मानव तथा पर्यावरण के बीच मधुर तथा मित्रवत् संबंध थे। पर्यावरण आदिमानव की समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति कर देता था। इस प्रकार आदिमानव प्राकृतिक पर्यावरण पर पूर्णरूपेण निर्भर था। आदिमानव द्वारा जंगली जानवरों के आखेट करने से प्राकृतिक पर्यावरण पर कोई खास प्रभाव नहीं पड़ता था, क्योंकि उस समय मानव की जनसंख्या अत्यंत कम थी, मानव समाज संगठित था, मानव की आवश्यकताएं अति सीमित थी।

समय के साथ मनुष्य ने पशुओं को पालना भी सीख लिया और पशुपालन एवं पशुचारण काल आरंभ हुआ, पशुपालन का उद्देश्य मांस तथा दूध प्राप्त करना था। धीरे-धीरे उसके पालतू पशुओं की संख्या बढ़ती गयी, जिस कारण पर्यावरण के प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग भी बढ़ता गया परंतु, उसका प्राकृतिक पर्यावरण पर कोई खास प्रभाव नहीं हो पाया था क्योंकि पालतू पशुओं तथा मनुष्य की संख्या अब भी सीमा के अंदर थी। वास्तव में समय के साथ मनुष्य के बुध्दि कौशल में निरंतर विकास होता गया, यहीं से पौध-पालन एवं कृषिकाल आंरभ हुआ, वह धीरे-धीरे प्रकृति को काबू करने में प्रयत्नशील होता रहा, साथ ही सामाजिक स्तर पर संगठित मानव समुदाय एवं मानव सामज, मानव सभ्यता तथा कृषि कार्य के अभ्युदय ने मनुष्य तथा प्राकृतिक पर्यावरण के मध्य अब तक चले आ रहे मित्रवत् तथा मधुर संबंधों में पर्याप्त परिवर्तन किया। कालांतर में मानव ने नई प्रौद्योगिकी का विकास किया तथा अपने निजी पर्यावरण का निर्माण किया। इस तरह विकसित प्रौद्योगिकी ने भौतिक या जैविक मानव को आर्थिक मानव में बदल दिया। इस समय विकसित प्रौद्योगिकी, विनाशक एवं संहारक नहीं थी वरन् वह मानव के आर्थिक विकास में इस तरह सहायक थी कि उसका प्राकृतिक पर्यावरण पर अधिक कुप्रभाव नहीं पड़ता था। यद्यपि मानव के कृषि कार्यों से पर्यावरण में कोई महत्वपूर्ण विनाश तो नहीं परंतु पर्यावरण में परिवर्तन अवश्य हुए। मनुष्य पर्यावरण के प्राकृतिक संसाधनों को अपने अनुकूल बनाने में समर्थ हो गया था परंतु प्रकृति अब भी सर्वोपरि थी। उसका मानव के क्रिया-कलापों पर नियंत्रण एवं प्रभुत्व अब भी कायम रहा तथा मानव अब भी भौतिक पर्यावरण द्वारा निर्देशित होता रहा।

मानव और पर्यावरण के परिवर्तनशील संबंधों का विश्लेषण- मानव-पर्यावरण संबंधों का बोध कई रूपों में तथा कई उपागमों द्वारा किया जा सकता है। पर्यावरणीय निश्चयवादी उपागम ''पृथ्वी ने मनुष्य को बनाया'' की मूलभूत अवधारणा पर आधारित हैं। यह उपागम मनुष्य तथा उसके क्रियाकलापों पर भौतिक पर्यावरण के संपूर्ण नियंत्रण पर जोर देता है। डेविस, सेम्पल और हटिंगटन इस उपागम के अग्रणी समर्थक हैं, अमेरिकिन भूगोलविद कुमारी एलेन चर्चिल सेम्पुल ने अपनी पुस्तक Influnece of Geographic eninvironment का प्रकाशन किया, उन्होंने प्रतिपादित किया कि मनुष्य पृथ्वी की सतह की उपज है (Man is the product of earth surface) उनके मतानुसार, ''मनुष्य पृथ्वी में से जन्मा बालक ही नहीं हैं बल्कि पृथ्वी ने उसे माँ की भांति पाला-पोसा है, काम में लगाया है, उसके सोच को दिशा दी है।'' हटिंगटन ने अपनी विख्यात रचना The principle of Human Geography 1945 में कहा कि

जलवायु न केवल मानव-जीवन को प्रभावित करती है वरन् उसके जन्म को भी प्रभावित करती है। वास्तव में मानव-पर्यावरण संबंधों के निश्चयवादी परिदृश्य के अनुसार मनुष्य प्राकृतिक पर्यावरण संबंधों के अधीन होता है, क्योंकि मानव जीवन के सभी पक्ष (यथा स्वास्थ्य, सुख तथा आराम, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, नैतिक, सौंदर्य पक्ष आदि) न केवल भौतिक पर्यावरण पर आश्रित होते हैं वरन् उससे बड़े पैमाने पर प्रभावित तथा नियंत्रित भी होते हैं।

मानव-पर्यावरण संबंधों के अध्ययन का उद्देश्यमूलक उपागम इस धार्मिक विचारधारा तथा अटूट विश्वास पर आधारित हैं कि मनुष्य प्रकृति तथा सभी अन्य जीवों से उत्कृष्ट तथा श्रेष्ठतम है तथा प्रत्येक वस्तु का सृजन उसके उपयोग तथा आनंद के लिए होता है। इस विचारधारा ने मनुष्य को प्राकृतिक संसाधनों के विदोहन तथा प्रकृति को पराजित करके उसे काबू में रखने के लिए उसे प्रोत्साहित किया। परिणाम स्वरूप इस धार्मिक विचारधारा से प्रभावित मनुष्य ने प्राकृतिक संसाधनों की बेधडक, लापरवाह तथा अनियंत्रित लूट खसोट से उत्पन्न होने वाले भावी खतरों से बेखबर होकर प्राकृतिक संसाधनों का विदोहन करना प्रारंभ कर दिया।

पर्यावरणीय निश्चयवाद की आलोचना तथा उद्देश्यमूलक उपागम की अतिवादी विचारधारा की भर्त्सना के फलस्वरूप संभववादी उपागम का उदय हुआ, जिसमे कहा गया कि प्रकृति के द्वारा मानव उपयोग की कुछ संभावनाएं प्रस्तुत की जाती है, जिसमें मानव अपनी छांट द्वारा किसी प्रदेश के साथ सामंजस्य स्थापित करता हैं। संभववाद शब्द का सबसे पहले प्रयोग QSczs (Febre) ने किया था। बाइडल डि ला ब्लाश, किरचाफ, ब्लैनचार्ड, ईसा बोमेन, कार्ल सावर संभववाद के समर्थक रहे हैं। फैब्रे ने अपनी रचना ''इतिहास के भौगोलिक परिचय'' में लिखा है कि पृथ्वी के प्रत्येक स्थान में संभावनाऐं विद्यमान हैं, मनुष्य संभावनाओं का स्वामी है तथा उनके प्रयोग का निर्णायक भी है। मनुष्य स्वयं एक शक्ति है तथा कार्यों से धरातल में परिवर्तन कर सकता हैं। मनुष्य प्राकृतिक शक्तियों का उपयोग अपनी इच्छानुसार करता है। इस तरह मानव का प्रभाव अधिक तथा पर्यावरण का प्रभाव द्वितीयक होता है।

निश्चयवाद तथा संभववाद के मध्य सामंजस्य की नई विचारधारा को नवनिश्चयवाद कहा जाने लगा, ग्रिफिथ टेलर ने नवनिश्चयवाद की विचारधारा प्रस्तुत की उन्होंने कहा कि मनुष्य वातावरण के प्रति जो चाहें करे। परंतु अंततः वातावरण उनकी योजनाओं पर रोक लगाकर उन्हें सोचने-बूझने को बाध्य करता है। सोच-विचार कर ही मनुष्य पुनः आगे बढ़ने के लिए ही वातावरण की सीमाओं का पालन करते हुए आगे बढ़ जाते है। नवनियतिवाद विचार को रूको और बढ़ो नियतिवाद के नाम से भी जाना जाता है, रूको और जाओ की नियतिवादी विचारधारा से तात्पर्य है कि वातावरण के प्रति समन्वय करने के लिए पहले रुको-अर्थात् सोच विचार करो, वातावरण के प्राकृतिक संसाधनों का मूल्यांकन करो और उपलब्ध संभावनाओं में से अनुकूल का चयन कर विकास कार्यों की पूर्ति करो।

मानव-पर्यावरण संबंधों के अध्ययन का पारिस्थितिक उपागम पारिस्थितिकी के आधारभूत सिद्वांतों पर आधारित हैं। इस उपागम के अंतर्गत मनुष्य प्रकृति का अभिन्न अंग माना जाता है इस उपागम की मान्यता है कि मनुष्य का प्राकृतिक पर्यावरण के साथ संबंध परास्परावलंवन का होना चाहिए न कि दमनात्मक। यह उपागम मानव को सर्वाधिक बुद्विमान तथा कुशल होने के नाते सभी जीवधारियों का नेता तथा पृथ्वी रूपी जहाज का परिचालक तथा प्रबंधक मानता है, साथ ही पारिस्थितिक सिंद्वातो तथा नियमों को ध्यान में रखकर प्राकृतिक संसाधनों की संयमित उपयोग, उपयुक्त पर्यावरण प्रबंध के कार्यक्रमों एवं योजनाओं कार्यनीतियों एवं रणनीतियों के उपयोग तथा क्रियान्वयन पर

बल देता है ताकि जहां तक संभव हो सके, पहले से रिक्त प्राकृतिक संसाधनों की संपूर्ति की जा सके, अवनयित तथा प्रदूषित पर्यावरण पुनः स्वस्थ किया जा सके तथा पारिस्थितिक संतुलन को कायम रखा जा सके।

मानवीय क्रियाकलाप और पर्यावरणीय नियंत्रण- मनुष्य के द्वारा की गई आर्थिक क्रियाएं जैसे- आखेट, पशुपालन, कृषि उद्योग, व्यापार आदि भौतिक पर्यावरण से प्रभावित दिखती है। जैसे आखेट के लिए वन और संसाधन की व्यापक प्रष्ठभूमि अनिवार्य है। पशुपालन व्यवसाय, कोमल घास के मैदानों में विकसित होना स्वभाविक है। स्टेपीज प्रदेश के खिरगीज, इसी कारण से पशुपालक हुए। कृषि में जलवायु की भूमिका अतुलनीय है, प्रत्येक फसल के लिए एक विशेष पर्यावरण, ताप, वर्षा, आर्द्रता एवं मृदा वाला क्षेत्र अनुकूल होता है। इसी प्रकार औद्योगिक विकास भी प्रकृति प्रदत्त सुविधाओं पर आधारित है। सांस्कृतिक क्रियाकलापो पर भी पर्यावरण का प्रभाव दिखता है, जैसे मध्य एशिया में मध्य युग के हूण, शक, यवन इनमें अधिकतम लूटेरे व घुमक्कड़ जीवन व्यतीत करने वाले थे। इसी के बाद जब भारत वर्ष में बोलन, खेवर जाति के लोग उपजाऊ मैदानों में आये और यहां के कृषक हो गये, वर्बर स्वरूप को भूलकर सभ्य सुसंस्कृत नागरिक हो गये हैं। इसी तरह सामाजिक संबंधों के स्वरूपों में पहाड़ी एवं मैदानी लोगों में भिन्नता दिखलाई देती है।

मनुष्य के धार्मिक क्रिया-कलापों में पर्यावरण का प्रभाव बहुत स्पष्ट दिखलाई देता है। टॉल्मी ने लिखा है कि भूगोल स्वर्ग में भी पृथ्वी की छाया देखता है एस्किमो के लिए स्वर्ग वह स्थान है जहां प्रतिदिन सूर्य निकलता हो और गर्म ज्वालामुखी सदैव धंधकते रहते हो जबकि अरब के बद्दुओं के लिए वह स्थान नर्क है जहां बहुत गर्मी पड़ती हो। मात्र भिन्न भौगोलिक परिस्थितियों की कल्पना स्वर्ग और नर्क में की गयी है। मनुष्य के राजनैतिक क्रिया-कलापों पर भी पर्यावरण का प्रभाव देखने मिलता है। डिमोलिंस के अनुसार प्रत्येक मानव समुदाय एक निश्चित वातावरण में निवास करता है, जिससे उस समुदाय के कार्य तथा सामाजिक संगठन स्पष्टतः प्रभावित होते है। इस तरह मानव की प्रत्येक क्रियाकलापों प्राकृतिक पर्यावरण द्वारा प्रभावित होती है।

मानव-पर्यावरण संबंध वर्तमान परिदृष्य- वर्तमान में मानव-पर्यावरण संबंधों में काफी परिवर्तन देखने को मिल रहा है। जैसे-जैसे मनुष्य की आबादी बढ़ रही है वैसे-वैसे मनुष्य की आवश्यकताऐं बढ़ती जा रही है जिसकी पूर्ति के लिए मानव ने प्रकृति के संसाधनों का अंधाधुंध विदोहन करना प्रारंभ किया है, जिस कारण पारिस्थितिकी तंत्र में असंतुलन की स्थिति पैदा हो गई और अनेकों पर्यावरणीय समस्याएं पैदा हो गई है। मनुष्य के द्वारा प्राकृतिक पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों में से अधिकांश पर्यावरण अवनयन तथा प्रदूषण से संबंधित होते हैं।

कीटनाशक, रसायनिक दवाओं, रसायनिक उर्वरकों के प्रयोग के माध्यम से जहरीलें तत्वों के पारिस्थितिक तंत्र में जाने से आहार श्रृंखला तथा आहार जाल में काफी परिवर्तन हो गया है। इस संदर्भ में डी.डी.टी. सबसे अधिक जहरीला तत्व होता है। इसी तरह औद्योगिक संस्थानों से निकले अपशिष्ट पदार्थों के स्थिर जल, नदियों के जल एवं सागरीय जल में गिरने या बहने से जल दूषित हो जाता है जिस कारण कई तरह के रोग उत्पन्न हो जाते हैं तथा जलस्थित अनेकों जीवधारियों की मृत्यु हो जाती है। एक अनुमान के अनुसार प्रति वर्ष औसतन 2000 नये रसायन पर्यावरण में अवमुक्त किये किये जाते हैं।

तीव्र गति से हो रहे नगरीकरण एवं औद्योगिक विकास के कारण विश्वभर में बड़े पैमाने पर वायु तथा जल प्रदूषण हुआ है। भारत की कई नदियां इतनी अधिक प्रदूषित हो गयी है कि वें अब मलजल वाहिनी बन कर रह गयी है। जिसमें भारत की प्रमुख नदियां जैसे- यमुना, गंगा कुछ शहरों में अत्यधिक प्रदूषित हो गयी है। नगरीकरण, औद्योगिक

विस्तार तथा भूमि उपयोग में परिवर्तन के कारण मौसम तथा जलवायु में भी परिवर्तन होते हैं। यद्यपि ये परिवर्तन दीर्घ काल के बाद परिलक्षित होते हैं। मनुष्य की आर्थिक क्रियाएं पृथ्वी तथा वायुमंडल के उष्मा संतुलन को प्रभावित करने मे समर्थ है इस तरह उष्मा संतुलन में परिवर्तन, यदि यह बड़े पैमाने पर होता है, के कारण प्रादेशिक तथा विश्वस्तर पर मौसम तथा जलवायु में रूपांतर हो सकता है।

हाइड्रोकार्बन ईंधनों के जलाने से वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड के सांद्रण में वृध्दि हुई है। औद्योगिक क्रांति के पहले वायुमंडल में CO2 की मौलिक मात्रा 0.029 प्रतिशत या 290ppm थी जो 2000 में बढ़कर 368 ppm हो गई। IPCC (2001) के अनुमान के अनुसार CO2 के सांद्रण में 2025 ई. तक 405 से 460ppm तक वृद्धि हो सकती है, यदि समय रहते CO2 के उत्सर्जन में कमी नही की गई।

ज्ञातव्य है कि वायुमंडलीय CO2 में वृध्दि होने से वायुमंडल के उष्मा संतुलन में परिवर्तन हो सकता है क्योंकि CO2 पार्थिव विकिरण का अवशोषण करके वायुमंडल तथा पृथ्वी की सतह को गर्म करती है साथ ही स्प्रेकेन डिसपेंसर में प्रयुक्त प्रणोदकों (Propellants) तथा रेफ्रीजरेटरों एवं एयरकंडीशनों में प्रयुक्त तरल पदार्थों के माध्यम से वायुमंडल में क्लोरोफ्लोरोकार्बन के वायुमंडल में विमोचन (Release) द्वारा तथा वायुमंडल में 20-20 km की उंचाई पर ध्वनि की गति से दुगुनी गति से उड़ने वाले सुपरसॉनिक जेट विमानों से निस्तृत नाइट्रोजन आक्साइड के कारण ओजोन (O_3) का O_2 तथा O में विघटन होता रहता है। इन सभी मानवीय कार्यों द्वारा ओजोन गैस का ह्रास (Depletion) हो रहा है। ज्ञातत्व है कि ओजोन गैस पृथ्वी पर वनस्पतियों तथा जंतुओं के लिए रक्षा-कवच है, क्योंकि यह सूर्य की परावैंगनी किरणों को सोख लेती है। तथा पृथ्वी की सतह को अत्यधिक गरम होने से बचाती है। इस तरह ओजोन की रिक्तता का परिणाम यह होगा की सूर्य की पराबैंगनी किरणों का वायुमंडल में अवशोषण घटता जायेगा तथा भूतल के तापमान में वृध्दि होती जायेगी, जिसका परिणाम चर्म केंसर में वृध्दि, मानव शरीर में प्रतिरक्षण क्षमता में ह्रास, प्रकाश संश्लेषण की क्षमता तथा फसलोत्पादन में ह्रास होने लगेगा। वर्तमान में व्याप्त पर्यावरणीय समस्यों का कारण कहीं न कहीं मानवीय क्रियाएं ही है।

निष्कर्ष- वर्तमान में मावन-पर्यावरण का बिगड़ता संबंध पूरी मानव जाति के लिए संकट का करण बन गया हैं और अभी भी समय है कि इस बदलते स्वरूप को सही कर सकते है। पर्यावरण के प्रति प्रत्येक मनुष्य को संवेदनशील होना पड़ेगा, पर्यावरण की रक्षा करना, केवल किसी एक व्यक्ति, का कार्य नहीं हैं। बल्कि प्रत्येक नागरिक को सजग होना पड़ेगा, और साथ ही हमें अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के साथ प्रकृति का भी ध्यान रखना होगा, सतत् पोषणीय विकास की अवधारणा को सही तरीके से जीवन में उतारना होगा, पर्यावरण के नियम, कानूनों का पालन करना होगा, पर्यावरण के प्रति दमनात्मक स्वभाव छोड़कर पुनः मैत्री पूर्ण संबंध स्थापित करना होगा। स्कूल, कॉलेज में पर्यावरण शिक्षा को बढ़ावा देना होगा, तभी पर्यावरण और मानवीय संबंधों में मधुरता बनी रहेगी और मनुष्य, पर्यावरण के साथ संबंध बना कर ही विकास का सपना साकार कर सकता हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

- खुल्लर, डी. आर. - टाटा मेग्रा-हिल, पब्लिशिंग कंपनी लिमिटेड, नई दिल्ली (2008)
- सिंह, सविन्द्र - पर्यावरण भूगोल, प्रयोग पुस्तक भवन पब्लिकेशन 2011
- कौशिक, एस.डी. - मानव भूगोल, रस्तोगी पब्लिकेशन (दसवां संस्करण 2002)
- पण्डा, डॉ.बी.पी. और वर्मा डॉ.एल.एन. - भौगोलिक विचारधाराओं का इतिहास, मध्यप्रदेश

हिन्दी ग्रंथ अकादमी पब्लिकेशन (द्वितीय संशोधित परिवर्द्धित 2009)
- हुसैन, माज़िद – भौगोलिक चिंतन का इतिहास, रावत पब्लिकेशन पंचम संस्करण, 2011
- अवस्थी, डॉ. नरेंद्र मोहन और तिवारी, आर.पी पर्यावरण भूगोल, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी (द्वितीय संशोधित परिवर्द्धित 2005)
- हुसैन, माज़िद – मानव भूगोल, रावत पब्लिकेशन, प्रथम संस्करण 1997
- खत्री, हरीश कुमार – पर्यावरण भूगोल, कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल।

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

रीवा जिले में औद्योगिकीकरण
(रीवा जिले के विशेष संदर्भ में)

• प्रियंका गौतम

सारांश- औद्योगीकरण एक सामाजिक तथा आर्थिक प्रक्रिया का नाम है। इसमें मानव-समूह की सामाजिक-आर्थिक स्थिति बदल जाती है, जिसमें उद्योग-धन्धों का बोलबाला होता है। वस्तुतः यह आधुनिकीकरण का एक अंग है।बड़े पैमाने की उर्जा खपत, बड़े पैमाने पर उत्पादन, धातुकर्म की अधिकता आदि औद्योगीकरण के लक्षण है। एक प्रकार से यह निर्माण कार्यो को बढ़ावा देने के हिसाब से अर्थप्रणाली का बड़े पैमाने पर संगठन है। लोहे और इस्पात कागज तथा सीमेंट में भी भारत ने अपनी आवश्यकताओं की अधिक पूर्ति शुरू कर दी। यद्यपि भारतीय उद्योग एवं पूँजी पर ब्रिटिश नियंत्रण में कोई महत्वपूर्ण कमी नहीं आई थी, पर दो विश्वयुद्धों के बीच के काल में भारतीयों ने उद्योगों के कामकाज में अधिक भूमिका निभानी शुरु कर दी। औद्योगीकरण एक सामाजिक तथा आर्थिक प्रक्रिया का नाम है। अब उनमें गैर कृषि क्षेत्र में कार्य करने की भावना भी जागृत हो गई है। इस अध्ययन में यह भी पाया गया कि महत्त्वपूर्ण प्रभाव आदिवासियों के आर्थिक जीवन पर पड़ा है, वे अब मुद्रा आधारित बाजार की ओर उन्मुख हो गए हैं।अब ये वन में, निर्माण कार्यो में और खदानों में वेतन मजदूर के रूप में कार्य करने लगे हैं। लेकिन, यह परिवर्तन रीवा के नजदीक के गाँवों में निवास करने वालों में ही दिखाई पड़ता है, शेष आदिवासी जनसंख्या अभी तक उसी परम्परागत तरीके से जीवन निर्वाह कर रही है। एक सकारात्मक प्रभाव रीवा के आदिवासियों पर यह पड़ा है कि वे शिक्षा के मूल्य को समझने लगे हैं और आधुनिक स्वास्थ्य सेवाओं का उपयोग करना सीख रहे हैं। अब वे अपने बच्चों को शिक्षित करने में रुचि लेने लगे हैं ताकि उनके बच्चे कुशल श्रम के रूप में ऊँचे वेतन वाले पदों पर कार्य कर सकें और स्थानीय उपक्रमो तथा अन्यत्र भी तरक्की कर सके।

मुख्य शब्द- उद्योग, आर्थिक, अर्थव्यवस्था, आधुनीकीकरण, पैमाना

प्रस्तावना- भारतीय औद्योगीकरण के बारे में अध्ययन बताते है कि इंग्लैण्ड की आरम्भिक समृद्धि में भारत का महत्वपूर्ण योगदान रहा है और यही आरम्भिक समृद्धि आगे चलकर भारत के औद्योगीकरण का आधार बनी। उल्लेखनीय है कि प्रथम विश्वयुद्ध में भारतीय अर्थव्यवस्था पर यूरोपीय व्यापारियों की पकड़ ढीली थी। ब्रिटेन के युद्ध में उलझे होने, जहाजरानी की सुविधाओं की कमी तथा विरोधी देशों के साथ व्यापार बन्द हो जाने के कारण भुगतान सन्तुलन या आयात-निर्यात के व्यापार का सन्तुलन तथा उसके मूल आधार प्रभावित हुए।

• जन भागीदारी शिक्षक, अर्थशास्त्र विभाग, शासकीय ठा. रणमत सिंह महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)

ब्रिटिश वस्तुओं के आयात में आई अस्थायी कमी ने देशी उद्योग को प्रेरित किया, जिसने भारतीय बाजार की जरूरत् पूरी करने के लिए कदम उठाए। इससे देशी उद्योग को अत्यधिक बल मिला । युद्ध की समाप्ति तक सूती कपड़ों का भारत में गिनतीबार आयात घटकर मामूली-सा रह गया। इसी बीच थलसेना तथा जलसेना की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए इंजीनियरिंग से सम्बद्ध कम्पनियाँ उभर आई।

औद्योगीकरण के लिए आधारभूत संरचनाओं अर्थात सड़क, परिवहन, संचार व्यवस्था एवं ऊर्जा के बिकास की आवश्यकता पड़ती है इस तरह औद्योगीकरण अर्थव्यवस्था में सुधार भी लाता है। वास्तव में, औद्योगीकरण की शुरूआत अठारहवीं शताब्दी के मध्य में इग्लैण्ड में हुई थी। इसके बाद यूरोप के अन्य देश भी औद्योगीकरण की राह पर चल निकले एशिया में औद्योगीकरण की शुरूआत 19वीं सदी के उत्तराद्ध में हुई थी। इसके फलस्वरूप उद्योग-धन्धो व्यापार आदि में आशातीत वृद्धि देखी गई। धीरे-धीरे सम्पूर्ण विश्व औद्योगीकरण पर बल देता नजर आया। इससे जहा आयात-निर्यात को बढ़ावा मिलता है, वहीं विदेशी निवेश में भी वृद्धि होती है। आयात-निर्यात को बढ़ावा मिलने एवं विदेशी निवेश में वृद्धि होने के कारण अत्यधिक संख्या में लोगों को रोजगार मिलता है, जिससे बेरोजगारी जैसी समस्याओं के समाधान में सहायता मिलती है। औद्योगीकरण विदेशी मुद्रा के अर्जन में भी सहायक होता औद्योगीकरण की प्रक्रिया में हर प्रकार की सुविधा एवं छूट के कारण वस्तुओं की निर्माण लागत को कम किया जाता है। इस तरह, आर्थिक प्रगति के दृष्टिकोण से भी औद्योगीकरण अत्यन्त लाभप्रद है।

औद्योगीकरण का नगरीकरण से संबंध-औद्योगीकरण, तथा नगरीकरण एक ही सिक्के के दो पहलू है। ये दोनों ही एक दूसरे से सम्बन्धित प्रक्रिया करते हैं। जहां नगरों के विकास में औद्योगीकरण एक महत्वपूर्ण साधन हैं वहीं नगरों में औद्योगीकरण के प्रसार में अनुकूल परिस्थियां पायी जाती है। योजना काल के प्रारम्भ से ही सार्वजनिक क्षेत्र के माध्यम से महत्वपूर्ण एवं प्रमुख क्षेत्रों में निवेश को बढ़ाने के लिये अपनाई गई केन्द्र सरकार की सजग नीति के परिणामस्वरूप मध्यप्रदेश क्षेत्र में कुछ ऐसे छोटे-छोटे स्थान विकसित किए गए हैं, जहाँ औद्योगिक गतिविधियों केन्दित हो गई हैं। स्रोतों की समीपता के कारण तथा प्राकृतिक व आधारभूत संरचना के अनुकूल होने के कारण इन स्थानों पर उद्योगों की स्थापना की गई। मध्यप्रदेश (मध्यप्रदेश) का रीवा भी एक ऐसा ही स्थान है। यह अब विकास की ओर अग्रसर एक नगर है।

औद्योगीकरण का प्रभाव- मध्यप्रदेश के दक्षिण पूर्वो जिले के आदिवासियों पर औद्योगीकरण के प्रभाव से सम्बनिधत 1988 में एक अध्ययन से यह पाया गया कि जिन स्थानीय निवासियों के पास भूमि थी और जिनके परिवार के सदस्य कभी-कभी वेतन से जुड़े कार्यों में संलग्न थे, उनकी वार्षिक आय उन लोगों की आय के मुकाबले दोगुने से भी अधिक हो गई, जिनकी गतिविधियाँ सिर्फ भूमि और वनों से सम्बन्धित आर्थिक क्रियाओं तक ही सीमित थी। रीवा संयंत्र के आस-पास आधुनिक रिहायसी बस्तियों का विकास हुआ और उसके साथ ही अन्य जनोपयोगी सुविधाओं का। इस अध्ययन में यह भी पाया गया कि महत्त्वपूर्ण प्रभाव आदिवासियों के आर्थिक जीवन पर पड़ा है, वे अब मुद्रा आधारित बाजार की ओर उन्मुख हो गए हैं।

अब उनमें गैर कृषि क्षेत्र में कार्य करने की भावना भी जागृत हो गई है। अब ये वन में, निर्माण कार्यों में और खदानों में वेतन मजदूर के रूप में कार्य करने लगे हैं। लेकिन, यह परिवर्तन रीवा के नजदीक के गाँवों में निवास करने वालों में ही दिखाई पड़ता है, शेष आदिवासी जनसंख्या अभी तक उसी परम्परागत तरीके से जीवन निर्वाह कर रही है। एक सकारात्मक प्रभाव रीवा के आदिवासियों पर यह पड़ा है कि वे शिक्षा के मूल्य को समझने लगे हैं और आधुनिक स्वास्थ्य सेवाओं का उपयोग करना सीख रहे हैं। अब वे अपने बच्चों को शिक्षित करने में रुचि लेने लगे हैं ताकि उनके बच्चे कुशल श्रम के रूप में ऊँचे वेतन वाले पदों पर कार्य कर सकें और स्थानीय उपक्रमो तथा अन्यत्र भी तरक्की कर सके।

मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि स्थानीय जनसंख्या पर औद्योगीकरण का प्रभाव मुख्य केन्द्रों पर अधिक दिखाई पड़ता है (मुख्य केन्द्र, वे हैं जहाँ उद्योग स्थापित है।) अधिकांश जनसंख्या, जो इन केन्द्रों की परिधि के बाहर रहती हैं, इनसे लाभान्वित नहीं हुई है और इस प्रकार के विकास से अप्रभावित है। इस कारण जो स्पष्ट आर्थिक असमानता लोगों में आई है, उसने यहाँ के निवासियों में सामाजिक तनाव को जन्म दिया है, साथ ही उन्हें औद्योगिक प्रदूषण तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी संकट के अनिवार्य प्रभावों के सामने निहत्था खड़ा कर दिया है।

अध्ययन के उद्देश्य-

1. औद्योगीकरण से समाज पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।
2. औद्योगीकरण का नगरीकरण से संबंध के बारे में अध्ययन करना।
3. औद्योगीकरण से उद्योग, धंधे, व्यापार में हुई वृद्धि के संदर्भ में अध्ययन करना।
4. रीवा जिले के उद्योगों में कार्यरत श्रमिकों की सामाजिक, आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना।
5. रीवा जिले में औद्योगीकरण के विकास की संभावनाओं का अध्ययन करना।

परिकल्पना-

1. औद्योगीकरण से अर्थव्यवस्था में सुधार आया है।
2. रीवा जिले के उद्योगों में कार्यरत श्रमिकों की सामाजिक आर्थिक स्थिति मजबूत हुई है।
3. रीवा जिले में औद्योगीकरण एवं विकास की संभावनायें है।

शोध प्रविधि- इस अनुसंधान का स्परूप वर्णात्मक एवं विश्लेषणात्मक है। अतः वर्णात्मक कार्य होने के कारण सर्वेक्षण पद्धति का सहारा लिया गया है। अनुसंधानकर्ता उत्तरदाताओं से संबंधित आकड़े एकतित्र करने के लिये रीवा जिले में उद्योगों में कार्यरत श्रमिकों का व्यक्तिगत साक्षात्कार एवं अवलोकन द्वारा आंकड़ो का संकलन किया है। अतः अध्ययन कार्य में साक्षात्कर एवं अवलोकन विधि का उपयोग किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र का परिचय- रीवा मध्यप्रदेश के उत्तरी पूर्वो राज्य में स्थित है। पहले यह रीवा राज्य के नाम से प्रचलित था, ऐसा माना जाता है कि रीवा का पूर्व प्रचलित नाम नर्मदा नदी के पर्यायवाची शब्द 'रेवा' से पड़ा है। रीवा जिला का प्राचीन नाम रेवा था, तथा उसके आस-पास के भू-भाग को रेवा खंड कहा जाता था। वर्तमान में उच्चारण की अशुद्धी के

कारण इसे रीवा कहा जाने लगा है, किन्तु अंग्रेजी में आज भी इसका नाम रेवा (REWA) ही लिखा जाता है। रीवा की पहचान भारत में ही नहीं अपितु विश्व में सफेद शेर की जन्मस्थली के रूप में प्रसिद्ध है।

अध्ययन से संबंधित आंकड़े एवं सारणीयन

प्रश्न 1.- औद्योगीकरण से समाज पहले की अपेक्षा अब आर्थिक रूप से मजबूत हुआ है

क्र.	उत्तरदाता	संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	23	46
2	नही	10	20
3	कह नही सकते	17	34
	योग	50	100

स्त्रोत – व्यक्तिगत साक्षात्कार

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि 46 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि औद्योगीकरण से समाज पहले की अपेक्षा अब आर्थिक रूप से मजबूत हुआ है, 20 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि औद्योगीकरण से समाज पहले की अपेक्षा अब आर्थिक रूप से मजबूत नहीं हुआ है, जबकि 34 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने कोई जवाब नहीं दिया।

प्रश्न 2.- समाज में बेरोजगारों को रोजगार देने के लिए औद्योगीकरण अच्छा माध्यम है

क्र.	उत्तरदाता	संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	42	84
2	नही	02	04
3	कह नही सकते	06	12
	योग	50	100

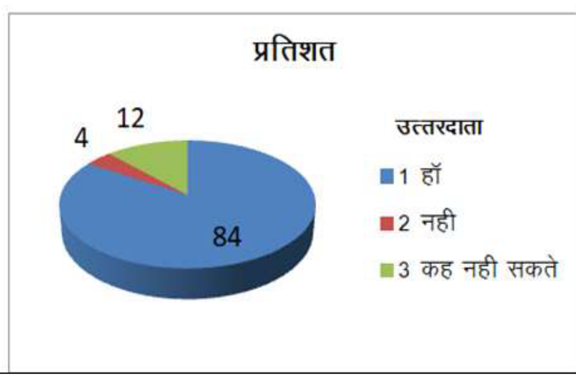

स्त्रोत–व्यक्तिगत साक्षात्कार

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि 84 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि समाज में

बेरोजगारों को रोजगार दने के लिए औद्योगीकरण एक अच्छा माध्यम है, 04 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि समाज में बेरोजगारों को रोजगार देने के लिए औद्योगीकरण एक अच्छा माध्यम नही है, जबकि 12 प्रतिशत उत्तरदाताओ ने कोई उत्तर नही दिया।

प्रश्न 2.- औद्योगिक क्रांति से रीवा जिले में संचालित व्यापार एवं धंधों में वृद्धि हुई है

क्र.	उत्तरदाता	संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	39	76
2	नही	05	10
3	कह नही सकते	06	14
	योग	50	100

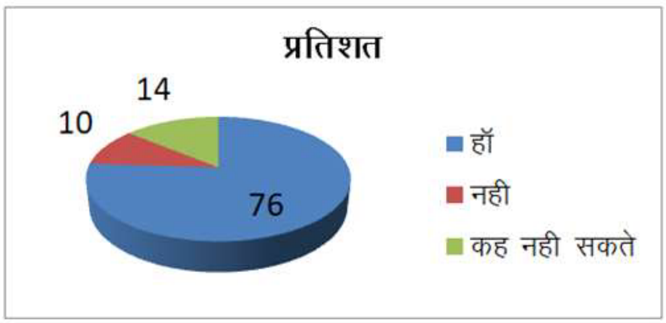

स्त्रोत-व्यक्तिगत साक्षात्कार

उपरोक्त ग्राफ एवं सारणी से स्पष्ट होता है कि 76 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि औद्योगिक क्राति से रीवा जिले में संचालित व्यापार एवं धंधों में वृद्धि हुई है, 10 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने असहमति बतायी, जबकि 14 प्रतिशत उत्तरदाताओ ने कोई जवाब नहीं दिया

निष्कर्ष- औद्योगिक क्रांति ने जनसंख्या वृद्धि को संभव बनाया। वस्तुतः कृषि क्षेत्र में तकनीकी प्रयोग ने खाद्यान्न उत्पादन बढ़ाकर भोजन आवश्यकता की पूर्ति की। दूसरी तरफ यातायात के उन्नत साधनों के माध्यम से मांग के क्षेत्रों में खाद्यान्न उत्पादन बढ़ाकर तथा उनकी पूर्ति कराकर भोजन की आवश्यकता को पूरा किया गया बेहतर पोषण एवं विकसित स्वास्थ्य एवं औषधि विज्ञान के कारण नवजात शिशु एवं जीवन की औसत आयु में वृद्धि हुई। फलतः मृत्यु दर में कमी आई। नए सामाजिक वर्गों का उदय औद्योगिक क्रांति ने मुख्य रूप से तीन नए वर्गों को जन्म दिया। प्रथम पूंजीवादी वर्ग, जिसमें व्यापरी और पूंजीपति सम्मिलित थे। द्वितीय मध्यम वर्ग कारखानों के निरीक्षक दलाल, ठेकेदार इंजीनियर वैज्ञानिक आदि शामिल थे। तीसरा श्रमिक वर्ग जो अपने श्रम और कौशल से उत्पादन करते थे। विभिन्न वर्गों के उदय ने सामाजिक असंतुलन की स्थिति पैदा की। पूंजीपति वर्ग आर्थिक क्षेत्र में ही नहीं बल्कि राजनीतिक क्षेत्र में भी प्रभावी हो गया। मध्यम वर्ग बहुआयामी गतिविधियों में सलग्न था। यह अत्यंत महात्वाकांक्षी वर्ग था। अपने हितों

के लिए यह वर्ग श्रमिकों को साथ लेकर उच्च वर्ग को नियंत्रित करने का प्रयास करता था। श्रमिक वर्ग अब कारखानों में काम करने लगा। उसे कम वेतन पर प्रायः 12–15 घंटे काम करना पड़ता था। फलतः उसका शोषण बढ़ा। कारखानों में प्रकाश, वायु और स्वच्छता का अभाव रहता था। उनका जीवन, आवास, शिक्षा, भोजन आदि का उचित प्रबंध नहीं होने के कारण नारकीय होने लगा। फलतः श्रमिक अंसतोष ने श्रमिक आदोलनों को जन्म दिया। उन आंदोलनों से सामाजिक तनाव भी पैदा हुआ।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. गिरजाशरण अग्रवाल, मीना, 'नारी : कल और आज', हिन्दी साहित्य निकेतन, बिजौर वर्ष–2003
2. अग्रवाल.आर.सी., औद्योगिक सन्नियम, नवयुग साहित्य सदन, आगरा, 1995
3. अग्रवाल.एस.एन., भारतीय अर्थव्यवस्था का परिचय, सेंट्रल बुक डिपो, इलाहाबाद, 1955
4. अद्ययाल, आशा इंडस्ट्रियल सिकनेस इन द इंडस्ट्रियल एस्टेट, कुमाँऊ, 2002
5. कुलश्रेष्ठ, एस.एस.मारतीय औद्योगिक अर्थव्यवस्था, साहित्य भवन आगरा, 1979
6. खुल्बे डॉ. आर.डी. उत्तराखण्ड प्लानिंग एण्ड डेवलपमेंट, श्री अल्मोड़ा बुक डिपो, अल्मोड़ा

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

पान कृषि के लिए भौगोलिक दशाएं

• नीना चौरसिया

सारांश- हमारे प्रमुख कृषि उद्योगों में पान की खेती का एक प्रमुख महत्व है। कुछ इलाकों में यह उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि खाद्य या दूसरी नकदी फसलें। आरम्भ में पान केवल औषधीय एवं धार्मिक महत्व था धीरे-धीरे जन सामान्य ने इसे मुख्य रंजक और मुख्य शोधक के रूप मे अपना लिया। शिवपुराण में अनेक स्थलों पर ताम्बूल और पुंगीफल का इसी रूप में उल्लेख हुआ है। आदर-सत्कार के प्रतीक रूप में पान का उल्लेख पुराणों में स्पष्ट है। वात्सायन के कामसूत्र व रघुवंश आदि ग्रंथों में ताम्बूल शब्द का प्रयोग है कथा सरित्सागर तथा वृहत्कथा श्लोक मे उल्लेख है कि कौशाम्बी नरेश उदयन ने ताम्बूल लता को नागों से दहेज में प्राप्त किया था। जगनिक रचित लोक काव्य आल्हा खण्ड के अनुसार विख्यात वीर आल्हा ऊदल युद्ध संकल्पों हेतु पान का बीड़ा उठाकर दृढ़ -प्रतिज्ञ होते थे। महोबा में पान की खेती का श्रेय चन्देल शासकों को जाता है। आइने अकबरी में सूबा इलाहाबाद के अन्तर्गत महोबा मुहाल से भू-राजस्व के रूप में मुगल दरबार को पान प्राप्त होने का उल्लेख है। पान समशीतोष्ण कटिबन्ध की लता है। किसी भी कृषि फसल के स्थानीयकरण के लिए वहां की जलवायु का विशेष महत्व होता है।

मुख्य शब्द- पान, कृषि, भौगोलिक दशाएं

पान उष्ण जलवायु में छायादार स्थानों में प्राकृतिक रूप से पैदा होता है। पान के लिए उष्ण कटिबंधीय वन परिस्थितियां आवश्यक हैं, जिससे ठण्डा, छायादार और नम वातावरण उपलब्ध होता है, साथ ही भूमि में पर्याप्त मात्रा में नमी रहती है। अधिक वर्षा होने वाले क्षेत्र में पान की फसल अच्छी होती है। असम और दक्षिणी भागों में पान की फसल खुले बागानों में की जाती है, परन्तु भारत के मैदानी भागों में जलवायु अनुकूल न होने के कारण पान को कृत्रिम बरेजों में उगाया जाता है। पान उगाने वाले स्थानों को चारों ओर से घास की बनी टटिया से, मिट्टी या पत्थर की दीवारों से घेर लेते है। छत पर पतली घास छा देते है, जिससे पान-बेल को हल्की धूप व हवा मिलती रहती है। छतरपुर जिले में पान की खेती के लिए उपर्युक्त जलवायु पायी जाती है। यहा पर ठण्ड के मौसम में न तो अधिक ठण्डी और न ही गर्मी के मौसम में अधिक गर्मी ही पडती है। यहां पान-बेल बरेजा के अन्दर लगायी जाती है।

(अ) जल- कृषि कार्य जल के बिना सम्भव नहीं होता, पान कृषि में जल की भूमिका कुछ ज्यादा ही होती है। पान बेल का रोपण फरवरी माह से मार्च तक होता है। पान बेल का रोपण होते ही उसकी सिंचाई करना प्रारम्भ कर दी जाती है। प्रारम्भ के दिनों में प्रतिदिन तीन-चार बार सिंचाई की जाती है। तात्पर्य यह है कि बेल रोपण के दिन से ही पान फसल

• सहायक प्राध्यापक, समाजशास्त्र, श्री कृष्णा विश्वविद्यालय, छतरपुर, म.प्र.

की अपनी आयु पर्यन्त पानी की आवश्यकता होती है। पान फसल सूखे को बिलकुल सहन नहीं कर सकती, इसीलिए किसी जलाशय के पास पान बागान निर्मित किये जाते है। वैसे पान बागान की सिंचाई अधिकांशत: विशेष प्रकार के कच्चे उथले कुंआ जिसे कुइयां कहा जाता है, से की जाती है। पान बागानो की सिंचाई लुटिया (मिट्टी का विशेष किस्म का घड़ा) से की जाती है। लुटिया से पानी सींचने की क्रिया को गबोरा डालना कहा जाता है, जो व्यक्ति गबोरा डालता है उसे गबुरया कहते है।

वर्तमान में वैज्ञानिक प्रगति के साथ पान बागानों के सींचने की क्रिया में भी परिवर्तन हो रहे है। अब पान कृषक पान के बगल में एक पक्का होज बनवाने लगे है, जिसे क्षेत्रीय भाषा में खचा कहते है। खचा को कुंआ से विद्युत या डीजल पम्प द्वारा भर देते है। इसके दोनों ओर सीढ़िया बनी रहती है, इसका आकार 4x15 फीट का होता है। गबुरया इन सीढ़ियों की सहायता से पानी भरकर पान कृषि को सींचते है। गबोरा डालना एक जटिल प्रक्रिया है, इसे साधारणत: नया व्यक्ति नहीं डाल सकता।

वर्तमान म्रें धनवान पान कृषक 100 मीटर लम्बी 2 इंच व्यास की सटक (प्लास्टिक पाइप) को विद्युत पम्प में फिट करके पान बागानों की सिंचाई करने लगे है, लेकिन यह प्रयास अभी नया-नया है जिसे धीरे-धीरे पान कृषक अपनाने का प्रयास कर रहे है।

(ब) वर्षा- जलवायु का दूसरा महत्वपूर्ण तत्व वर्षा है, जो पान कृषि को बहुत अधिक प्रभावित करती है। पान उत्पादन के लिए 150 सेन्टीमीटर वर्षा की आवश्यकता होती है। बरेजों के लिए वर्षा ऋतु में साधारण वर्षा ठण्ड की ऋतु में साधारण ठण्ड की आवश्यकता होती है।

छतरपुर जिले में वर्षा भी प्रकृतिमान है। अधिकांश वर्षा वर्षाऋतु में होती है। दिसम्बर तथा जनवरी में वर्षा चक्रवातों द्वारा होती है, जिसे बुन्देलखण्ड में वर्षा मानसून पर निर्भर करती है। कभी-कभी मानसून देर से आता है, तो कभी बिलकुल निष्क्रिय हो जाता है, कभी-कभी शीघ्र एवं तेजी से आता है। यहीं कारण है कि पान की कृषि को जुआ कहा जाता है। यहां की वर्षा का वार्षिक औसत वितरण 80 से 120 सेन्टीमीटर है।

छतरपुर जिले में पान कृषि के लिए अनुकूल मौसम पाया जाता है। ठण्डियों में अधिक ओले गिरने से या वर्षा में मूसलाधार वर्षा होने से पान कृषि को बहुत नुकसान हो सकता है, लेकिन छतरपुर जिले में ओले बहुत कम गिरते है। साथ ही मूसलाधार वर्षा भी बहुत कम होती है। छतरपुर जिला का मौसम पान कृषि के लिए अत्यन्त उपयुक्त है।

(स) तापमान- ज्यादा गर्मी बरेजों के लिये हानिकारक होती है। पान कृषि के लिये 30^0 सेन्टीग्रेड से 35^0 सेन्टीग्रेड औसत तापमान उपर्युक्त होता है। अधिक ठण्ड भी पान कृषि को नुकसान पहुंचाती है। ठण्ड में $10-12^0$ सेन्टीग्रेड ताप पान बागानों के लिए उचित रहता है, जिससे पानों में पाला नहीं लग पाता है।

छतरपुर जिले में गर्मियों का तापमान 40^0 सेन्टीग्रेड से अधिक नहीं हो पाता जिससे पानों को लू नहीं लग पाती तथा ठण्ड के मौसम का तापक्रम औसतन 12^0 सेन्टीग्रेड के लगभग रहता है, जिससे पानों में पाला लगने का भय बहुत कम रहता है। कभी-कभी ठण्ड में तापक्रम 2^0 सेन्टीग्रेड से नीचे पहुंच जाता है, तो पानों में पाला लग

जाता है। स्पष्टत: गर्मी एवं ठण्डी की ऋतु में यहां का तापमान पान कृषि के लिये उपर्युक्त रहता है।

(द) आर्द्र वायु- पान बागानों के लिए आर्द्र एवं नम वायु अच्छी रहती है। वायु की गति तीव्र होने से, आंधी-तूफान से बरेजा गिरने व नष्ट होने लगते है। गर्मी में लू चलने के कारण पान की बेल मुलायम होने से झुलस जाती है।

छतरपुर जिले की आर्द्रता ऋतु के अनुसार बदलती रहती है। जुलाई-अगस्त, सितम्बर माहों में वर्षा अधिक होने के कारण अधिकतम आर्द्रता 35 से 65 प्रतिशत रहती है। मार्च और अप्रैल, तापक्रम अधिक रहने से आपेक्षित आर्द्रता न्यून रहती है जो 26 प्रतिशत से 36 प्रतिशत तक रहती है। वर्ष के अन्य महीनों में आपेक्षित आर्द्रता सामान्यत: 40 से 65 प्रतिशत तक रहती है।

तालिका क्रमांक - 01

छतरपुर जिले में औसत वर्षा तापमान एवं आर्द्रता वर्ष - 1986

माह	औसत मासिक वर्षा सेन्टीमीटर में	औसत मालिक आर्द्रता प्रतिशत में	औसत मासिक तापमान सेन्टीग्रेड में
जनवरी	1.5	40.4	15.7
फरवरी	5.2	56.0	18.3
मार्च	4.6	37.3	23.6
अप्रैल	-	28.1	32.0
मई	4.0	26.1	35.5
जून	16.5	38.9	31.6
जुलाई	18.6	68.8	28.9
अगस्त	20.9	93.7	27.6
सितम्बर	6.8	73.3	29.0
अक्टूबर	-	55.3	26.6
नवम्बर	-	63.8	22.0
दिसम्बर	2.0	62.9	16.8

भूमि- पान कृषि के लिये सुप्रवाहित एवं ढालू भूमि, जहां पानी का निकास बहुत अच्दा हो या बहुत ऊँचे टीले या ढालू भूमि हो, पान की खेती के लिए उपर्युक्त है। बरसात में यदि बरेजों में पानी भर गया तो फसल शीघ्र नष्ट हो सकती है, अत: पान कृषि के लिये दलदली भूमि उपर्युक्त नहीं है।

छतरपुर जिला बुन्देलखण्ड पठार एवं विन्ध्य पर्वत मालाओं पर स्थित होने के कारण इसका अधिकांश भाग उबड-खाबड है। इस जिले में उत्तरी भाग को छोड़कर सभी भागों में छोटी-छोटी पहाड़ियां पाई जाती है। पान बागानों के लिए ढालू भूमि सबसे अच्छी होती है। इसलिए पान कृषक बरेजों का निर्माण किसी पहाडी या ढालू जमीन के पास ही करते है।

(अ) मिट्टी- मिट्टी कृषक की अमूल सम्प्रदा है। पान उत्पादन में मिट्टी का अत्यन्त महत्व है। पान कृषि वाली दोमढ रेतीली और कंकड़ वाली मिट्टी में भी हो जाती है। लेकिन पान की खेती से लिये गहरी काली मिट्टी मुण्ड नं.-1 अधिक उपर्युक्त है। ह्यूमत और बारयुक्त मिट्टी में पान उत्पादन अच्छा होता है।

छतरपुर जिला बुन्देलखण्ड पठार का ही भाग है। अत: यहां की मिट्टी का रेतीला

होने स्वाभाविक है। छतरपुर जिले में पायी जाने वाली मिट्टी के रासायनिक गुण धर्म निम्नांकित है–

तालिका क्रमांक - 02

छतरपुर जिले की मिट्टी के रासायनिक एवं भौतिक गुण धर्म

मिट्टी के गुण धर्म	छतरपुर की मिट्टी
रंग	भूरी (ब्राउन)
बनावट	क्लेलोम
फास्फारस	7.1
जल ग्रहण क्षमता	58.4
आर्गनिक मेटर	1.98
नाइट्रोजन	0.14
कैलशियम	2.45
कार्बोनिक तत्व	5.15
पोटेशियम	0.03

मिट्टी की संरचना के सम्बन्ध में विद्वान एक मत नहीं है। मिट्टी में पौधों की उत्पत्ति एवं बृद्धि के लिए पर्याप्त मात्रा में जीवांश तथा वानस्पतिक अंश विद्यमान रहते है। संरचना के आधार पर मिट्टी तीन वर्गो में बांटी जा सकती है–

1. रासायनिक कटाव से निर्मित।
2. भौतिक कटाव द्वारा निर्मित।
3. जीवधारियों द्वारा कटाव से निर्मित।

सामान्य रूप से जिले में लाल और काली मिट्टियों का मिश्रण है। लौड़ी और छतरपुर तहसील में लाल तथा बुलही दोमट चिकनी मिट्टियों का मिश्रण दृष्टिमान होता है। स्थानीय उपयोगिता के आधार पर जिले में चार प्रकार की मिट्टियां पाई जाती है।

1. भार- इसका रंग लाल होता है, इसमें आर्द्रता ग्रहण करने की अत्यधिक क्षमता होती है। यह बिजावर के मध्यवर्गीय भाग में पाई जाती है।

2. कावर– यह अपेक्षाकृत कम काली व अनुपजाऊ होती है। यह लौड़ी तहसील के उत्तरी भाग में मिलती है।

3. पडुआ- यह पीले रंग की होती है। कृषि कार्य में इस मिट्टी से सिंचाई की अधिक आवश्यकता पड़ती है।

4. रांकड- छतरपुर जिले के लगभग 60 प्रतिशत भाग में रांकड मिट्टी मिलती है, जो अत्यन्त निकृष्ट और कंकरीली प्रकार की मिट्टी हे। यह अनुपजाऊ है।

भौगोलिक संरचना के अनुसार छतरपुर जिले में निम्न प्रकार की मिट्टिया पाई जाती है

1. चट्टानी मिट्टी- यह अधिकतर दक्षिणी भाग में पाई जाती है। लौड़ी तहसील में चन्दला, लौड़ी तथा भरतपुर, छतरपुर तहसील में खोप, नौगांव तहसील में हरपालपुर में पाई जाती है।

2. गुरमनल लाल मिट्टी- यह मिट्टी बिजावर तहसील के पहाड़ी क्षेत्रों में मुख्य रूप से पाई जाती है। जिले के अन्य पहाड़ी क्षेत्रों में भी यह मिट्टी प्रचुरता से पाई जाती है।

3. काली कपाली मिट्टी- यह मिट्टी बिजावर तहसील के दक्षिण-पश्चिम क्षेत्र में पायी जाती है। जिले के विशेषकर बक्स्वाहा क्षेत्र में ईशानगर तथा लौड़ी क्षेत्र में भी यह मिट्टी काफी मात्रा में पाई जाती है।

4.जलोढ़ मिट्टी- यह मिट्टी किशुनगढ के उत्तर-पूर्व में, गंगऊ बांध के आस-पास धसान नदी के किनारे एवं केन नदी के किनारे पाई जाती है।

निष्कर्षत: भौगोलिक दशाओं के अनुकूल होने के कारण छतरपुर जिला मध्य प्रदेश की पान कृषि का 26.0 प्रतिशत पान उत्पादन करता है।

पान कृषि बागानों की संरचना- इसके अन्तर्गत भूमि को पान के कृषि योग्य बनाने से लेकर फसल तैयार करने तक की सभी क्रियाओं को शामिल किया जाता है। पान एक ऐसी व्यापारिक फसल है, जिसके उत्पादन की एक अलग विधि है।

(अ) प्रथम वर्ष की पान उत्पादन व्यवस्था

1. भूमि का चुनाव- पान की खेती ऐसी सभी प्रकार की भूमि में की जा सकती है, जिसमें पानी का निकास बहुत अच्छा हो, ढालू जमीन या ऊँचे टीले पान की खेती के लिए उपर्युकत होती है। मोटे की जमीन पान कृषि के लिए अनुपर्युक्त है। पान कृषि भूमि के पास सिंचाई के लिए पानी का स्त्रोत होना अति आवश्यक है।

2. भूमि को पान उत्पादन योग्य बनाना- जहां पर पान कृषि करने का विचार होता है, उस भूमि का कूडा-कचड़ा साफ किया जाता है, कुदाल द्वारा गुड़ाई की जाती है। पतेवा देकर ढेले तोडकर, मिट्टी को भुर भुरी कर कंकड़-पत्थर बीनकर और कचड़ा अच्छी तरह निकाल कर बातों की लाइन के सहारे छोटी-छोटी मेढ़ बना लेते है। इन्ही मेढों पर बाद में पान बेलों को रोपण किया जाता है। इस कार्य को पान कृषकों की भाषा में अवलाई-किलवाई कहते है। प्रति वर्ष भूमि पर चार-पांच अंगुल काली या लाल मिट्टी डाल दी जाती है।

3. पारिया बनाना- पारिया बनाने के लिए भूमि को साफ करके रस्सी (जिसे पान कृषक सूमा कहते है।) द्वारा नापकर समान दूरी पर चूने से चिन्ह लगा लिये जाते है। इस क्रिया को सूतना कहते है। बरेजा सूतने के बाद कुदाली द्वारा सीधी लाइनों में करीब चार फीट की दूरी पर 9-10 इन्च गहराई के गड्ढे कुरवा गाड़ने के लिए किए जाते है। ये निशान खुई लेना कहलाते है। इन खुइयों में मिट्टी के घड़े से पानी डालते है तथा ओबी (अंग्रेजी में वाई अक्षर के आकार का एक लकड़ी का औजार है, जिसके नीचे का हिस्सा नुकीला होता है, जो गड्ढे करने में सहायक होता है।) इसकी सहायता से गड्ढे करते जाते है। इन गड्ढों में कुरवा खड़ा करते जाते है। ये मजबूत मोटे एवं लम्बे होते है जो हवा, आंधी, तूफान में बरेजों को सुरक्षित रखते है। प्रत्येक पारी की लम्बाई करीब 400 से 500 फीट तथा चौड़ाई 2 से 2.5 फीट तक हो सकती है।

कुरवा (पतली बल्ली) की सहायता से प्रत्येक क्यारी में बांस की मोटी कमटी 6 फीट से 7 फीट की ऊँचाई तक बांध देते है, इसे सूजी बांधना कहते है। बांधने के लिए छेवले (पलाश) की जड़ों के पतले रस्सी के समान टुकडे जिन्हे बकौड़ा कहते है, का प्रयोग किया जाता है। इन बांसों के ऊपर बांस की फटी कमटियों की लम्बाई और चौड़ाई में बांधकर मण्डप तैयार किया जाता है।

4. छप्पर बनाना- सूजी के ऊपर की कमटी बैकम कहलाती है। ये कमटिया इतने अन्तर से बांधी जाती है कि उन पर घास अच्छी तरह से फैलायी जा सके और वह अस्त-व्यस्त न हो। इसे पन्न या परन भरना कहा जाता है। परन भरने के बाद सूजी और बैकम दोनें कमटियों को कुरवा की सहायता से बांध दिया जाता है। इसे कुरौध बांधना कहते है। सूंजी और बैकम की कमटियों को बीच-बीच में कसकर बांधना ठाटना या चमोटना कहलाता है।

इसके बाद परन की कमटियों के ऊपर घास छा देते है। छास मौसम के अनुकूल विरली और घनी छाई जाती है। यह घास (मोटा लम्बा चारा) उड़ न सके इसलिए इसके ऊपर लकडी के पतले-पतले 2-3 फीट के टुकडे बांधे जाते है, इन्हें उरेना कहा जाता है। इनकों बांधने के लिए 'गुंदला' (नागर मौंधा) का प्रयोग किया जाता है। इसे गौदी बांधना कहते है।

5. टटिया लगाना- इन क्यारियों (पारियों) के चारों ओर सुरक्षा के लिए टटिया बांधी जाती है। टटिया- बांस, बांस की कमटी, सनोरा, घास, सागोन के पत्ते, बक्कल आदि से तैयार की जाती है। टटिया हवा, घूप, पानी, पशुओं आदि से पान बागानों को सुरक्षित खेती है। टटियों के चारों ओर जरवा लेई की बारी लगा दी जाती है जिससे टटिया सुरक्षित रहती है।

इन टटियों से पान बागान में जाने के लिए छोटे-छोटे दरवाजे भी टटियों के बनाये जाते है। उन दरवाजों को बन्द करने के लिए टटियों के ही छोटे-छोटे फाटक बनाये जाते है। ये टटिया प्राय: दो वर्ष बाद बदलना पड़ती है। इस प्रकार तैयार किये गये पान बागान को एक आथर कहा जाता है।

छतरपुर जिले में प्राय: सामूहिक बरेजा बनाये जाते है। एक बड़े बरेजे में 100 से 300 तक पारियां होती है। हवा का प्रकोप रोकने के लिए पांच या सात पारियों के बीच में ऊँची-तिरछी (अंग्रेजी के एक्स आकार की भांति) बांस दो मीटर के अन्तर में पूरी पारी की लम्बाई में लगा देते है ताकि आंधी और तूफान से पान बरेजा सुरक्षित रहे। अन्य बरेजा बन जाने के बाद मण्डप के अन्दर की धातु कचरा आदि को अच्छी तरह से साफ कर लिया जाता है।

6. निराई- पारियों का साफ करना 'निराई' कहलाता है।

7. झीके लगाना- प्रति चार पारी के अन्तराल पर कैंचीनुमा मोटे कुरवा की पन्द्रह फिट की दूरी पर जो लट्ठे गाड़े जाते है, उनको झीके लगाना कहते है।

8. पारियों को खोदना- निराई के बाद कुदाली की सहायता से मिट्टी को खोदा जाता है, जिससे मिट्टी भुरभुरी हो जाती है। जमीन को आधा फीट की गइराई तक खोदा जाता है।

9. ढीला फोड़ना- पारियों की खुदाई के बाद मिट्टी के बड़े-बड़े ढीलों की छोटी कुदाली की सहायता से फोड़ा जाता है। इन पारियों को लुटिया या विद्युत पम्प से सींचा जाता है। इसे डीमा करना कहते है।

10. अखलाई किलवाई करना- एक बार सिंचाई के बाद जमीन तीन-बार दिन सूख जाती है तो फिर से क्यारियों (पारियों) की गुडाई करते है इसे अखलाई किलवाई कहा जाता है। गुडाई के बाद पारी के सपरो वाले भाग पर पानी सींचा जाता है, इसे थार करना कहा जाता है।

11. पान बागान बोने का समय- मध्य प्रदेश के सभी क्षेत्रों में पान बेल फरवरी माह में अप्रैल माह के बीच में बोई जाती है। इसका रोपण करते समय न तो अधिक ठण्डी होना चाहिए और न ही अधिक गर्मी। इसको बोते समय तापमान 15^0 सेन्टीग्रेड से 20^0 सेन्टीग्रेड के बीच होना चाहिए। आकाश साफ एवं मौसम सम होना चाहिए।

12. बोनी या रोपाई- पान की बेल बोने के लिए बेलों की एक गांठ वाला टुकडा जिसके साथ स्वस्थ्य पत्ती भी लगी रहती है, प्रयोग में लाया जाता है। इन बेलों को बोने से पूर्व, वर्तमान में पान कृषक बोर्डो मिश्रण घोल में उपचारित करने लगे है।

बेल को मेड़ में कतार क्रम से रोपण करते है। दो-दो बेल बांस के दोनों ओर लगाई जाती है। रोपण करते समय गांठ को मिट्टी में गड्ढा करके तिरछा रखकर उस पर मिट्टी डाल देते है तथा मिट्टी के बने ढेले से (जिसे लुढा कहते है।) ठोंकते जाते है, जिससे मिट्टी के कर्णो के बीच की हवा निकल जाये और गांठ मिट्टी के सर्म्पक में आ जाये।

13. औहार डालना- रोपण के बाद बेलों पर पानी में भिगोकर घास ढक देते है। इन रोपण की गई बेलों की सिंचाई दिन में दो से चार बार तक की जाती है। कई बार हल्की सिंचाई करते रहने से पत्ती हरी बनी रहती है और इनमें जड़े पैदा हो जाती है साथ ही हरी पत्ती में जड़े आने तक बेल को भोजन प्रदान करती रहती है।

बेल बोने के तीन-चार सप्ताह के बाद औहार में डाले गये घास में से कुछ घास को निकालकर अलग कर दिया जाता है तथा बेल के पान को थोड़ा फैला देते है, जिससे गर्मी के कारण पान खराब न हो। पान फैलाने में यह भी ध्यान रखा जाता है कि गर्म हवा या लू में पान सूखने न पाये।

14. पेडी का पान तोड़ना- बेल बोने के डेढ या दो माह बाद बेल का पान जिसे 'पेडी का पान' बिजोरी पान या पुराना पान कहते है, तोड़ लिया जाता हे। बोये गये सभी पान सुरक्षित नहीं रहते। साधारणतः 25 प्रतिशत पेडी के पान वही नष्ट हो जाते है। कभी-कभी बोये गये पानों में आधे या आधे से कम पान ही शेष रहते है। इन्हें तोड़कर विक्रय किया जाता है। पेडी का पान तोड़ने से पहले यह देखना आवश्यक रहता है कि उनकी गांठ से कोंयल निकल आयी है अथवा नहीं।

15. मिट्टी डालना- पान की बेल बोने के डेढ़ या दो माह बाद जून के अन्त या जुलाई के प्रारम्भ में पौधे के ऊपर का घास (औहार) उठाकर अलग कर दिया जाता है। पौधे की जड़ों में मिट्टी डाल दी जाती है जिससे बेल बढ़ती है तथा नीचे नहीं गिरती।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

- Kulkarni, K.R, "Agricultural Marketing in India", Co-operation Books, 1964
- Dr. J.P. Chaurasia, "Betelvine Cultivation and Management of Diseases", Scientific Publishers (India), Jodhpur, 2001, p.1.
- https://bundelkhand.in/news2018
- www.patrika.com/author/ 5112
- best-benefits-of-betel-leaves-piper-leaves/ hinditips.com

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

भारत में स्कूली शिक्षा विकास एवं कोविड़ काल

• कुमुद श्रीवास्तव

सारांश- आर्थिक विकास की प्रक्रिया में सामाजिक अधोसंरचना का विशेष महत्व होता है। विश्व के विकसित देशों के आर्थिक विकास का अध्ययन करने से यह स्पष्ट होता है कि इन देशों की आर्थिक सम्पन्नता का प्रमुख कारण सामाजिक अधोंसरचना का विस्तार था। विकासशील देशों में जैसे की भारत के संसाधनों की कमी के कारण शिक्षा, स्वास्थ्य, का स्तर बहुत कम है। नई शिक्षा नीति का उद्देश्य है कि 2030 तक माध्यमिक स्तर पर सभी को शिक्षा उपलब्ध कराई जावें। कुल बजटी खर्चो में से सामाजिक सेवाओं पर व्यय वर्ष 2014-15 में 23.4 प्रतिशत था। जो 2020-21 में 26.5 प्रतिशत हो गया है। 2014-15 में शिक्षा के क्षेत्र में सकल घरेलू उत्पाद के अनुपात के रूप में 2.8 प्रतिशत थी। जो बढ़कर 2020-21 में 3.5 प्रतिशत हो गई है। शिक्षा क्षेत्र में व्यय का प्रतिशत बहुत कम है। भारत में कोविड़ काल में आत्म निर्भर भारत अभियान के अन्तर्गत 29.88 लाख करोड़ की घोषणा में सामाजिक सेवा क्षेत्र के लिये 4.31 लाख करोड़ का प्रावधान रखा गया है। भारत सरकार के द्वारा स्कूल शिक्षा विकास हेतु घोषित कार्यक्रमों को कुशलता पूर्वक संचालित किया जाना चाहियें।

मुख्य शब्द- सामाजिक सेवा क्षेत्र में व्यय,स्कूली संतुलित शिक्षा विकास, शासन के कार्यक्रम योजनाएं, कोविड काल डिजिटल शिक्षा व्यवस्था

आर्थिक विकास की प्रक्रिया में सामाजिक अधोसंरचना का विशेष महत्व होता है। विश्व के विकसित देशों के आर्थिक विकास का अध्ययन करने से यह स्पष्ट होता है कि इन देशों की आर्थिक सम्पन्नता का प्रमुख कारण सामाजिक अधोंसरचना का विस्तार था। देश के सभी लोगो के ज्ञान कुशलता तथा क्षमताएं बढ़ाने की प्रक्रिया ही मानव पूँजी निर्माण है। इसके अंर्तगत शिक्षा,स्वास्थ्य एवं सामाजिक अधोंसंरचना के विस्तार पर होने वाला व्यय शामिल होता है। विकसित देशों में शिक्षा पर किये गये व्यय का सकल वास्तविक राष्ट्रीय आय में काफी योगदान था। परंतु पिछड़े एवं विकासशील देशों में संसाधनों की कमी के कारण सामाजिक अधोसंरचना पर समुचित ध्यान नही दिया गया है और सामान्य शिक्षा,तकनीक शिक्षा, कार्यकुशलता, शारीरिक स्वास्थ्य का स्तर बहुत कम है। इसी कारण श्रम की उत्पादकता भी बहुत कम है। पिछड़े एवं विकासशील देशो में सामाजिक अधोसंरचना जैसें शिक्षा,स्वास्थ्य,श्रम कल्याण आदि में विस्तार से आर्थिक विकास की गति में तीव्रता आती है। पिछड़ें एवं गरीब देशों में प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा को सर्वाच्च प्राथमिकता देना चाहिए क्योकि शिक्षित व्यक्तियों की कृषि उद्योग,वाणिज्य,सरकार सभी को आवश्यकता होती है। सार्वजनिक क्षेत्र के साथ-साथ निजी ट्रस्टो एवं समाज सेवी

• प्राध्यापक, अर्थशास्त्र शासकीय तिलक स्नोतकोत्तर महाविद्यालय कटनी म.प्र.

संस्थाओं एवं व्यक्तियों के सहयोग का प्रयास भी किया जाना चाहिए। नई शिक्षा नीति की घोषणा एक वर्ष पूर्व 2020 में की गई थी तथा जिसे शैक्षणिक सत्र 2021-22 में लागू कर दिया गया है। नई शिक्षा नीति इस प्रकार से लाभान्वित करेगी।

1. वर्ष 2030 तक स्कूली शिक्षा में 100 प्रतिशत सकल नामांकन अनुपात(जीईआर) के साथ प्राग्विद्यालय (प्री.स्कूल)से माध्यमिक स्तर तक सभी को शिक्षा उपलब्ध करवाना।
2. सभी तक शिक्षा की पहुंच को सुगम बनाकर तथा मुक्त विद्यालय(ओपन स्कूल)प्रणाली में विस्तार करके स्कूल जाने वाले बच्चों में से लगभग 2 करोड़ बच्चों को मुख्य धारा में वापस लाने का लक्ष्य है।
3. वर्तमान10+2 की प्रणाली के स्थान पर 3-8,8-11,11-14 और 14-18 वर्ष के विद्यार्थियों के लिए क्रमशः 5+3+3+4 वर्ष की नई पाठ्यक्रम सरंचना को प्रतिस्थापित किया जाना है।
4. 10 वीं और 12 वीं की बोर्ड परीक्षाओं को सरल बनाया जाएगा जिससे उनमें केवल याद किए गए तथ्यों की ही जांच नहीं बल्कि विधार्थियों की आतंरिक दक्षता का मूंल्याकन भी किया जा सकेगा।
5. सरकारी और निजी दोनों तरह के विद्यालयों के लिए सार्वजनिक डॉमेन में ऑनलाइन घोषणा पर आधारित नया मानक फ्रेमवर्क लाकर स्कूल प्रशासन के स्वरूप को बदलने की तैयारी है।
6. आधारभूत साक्षरता एवं अकंज्ञान पर बल दिया जाएगा तथा स्कूलों में शैक्षिक शाखा,पाठेयत्तर गतिविधियों तथा व्यावसायिक शाखा के बीच कोई कडा विभाजन नहीं किया जाएगा।
7. व्यावसायिक शिक्षा कक्षा 6 से प्रारंभ की जाएगी और साथ में इंटरर्नशिप भी कराया जाएगी।
8. जहां तक सभंव हो सकेगा कम से कम कक्षा 5 तक मातृभाषा/क्षेत्रीय भाषा में शिक्षा दी जाएगी। किसी भी छात्र को किसी भाषा को पढ़ने के लिए बाध्य नहीं किया जाएगा।
9. 360-डिग्री समग्र प्रगति कार्ड(हॉलिस्टिक प्रोग्रेस कार्ड) के जरिए मूल्याकनं पद्धति में सुधार किया जाएगा जिससे विधार्थी के सीखने की गति पर नजर रखी जा सकेगी।
10. स्कूली शिक्षा, वाल्यावस्था देखभाल एवं शिक्षा शिक्षकों के शिक्षण एवं वयस्क शिक्षा के लिए नई और व्यापक पाठ्यचर्चा की रूपरेखा तैयार की गई है।
11. वर्ष 2030 तक शिक्षण के लिए 4वर्षीय एकीकृत बीएड.डिग्री न्यूनतम योग्यता निर्धारित होगी।

शोध प्रविधि - प्रस्तुत शोध लेख में शोध व अध्ययन क्षेत्र भारत वर्ष में मनाया गया है तथा प्रस्तुत शोध की समयावधि कोरोना की प्रथम लहर मार्च 2020 से दूसरी लहर, जुलाई 2021 तक का लिया गया है। प्रस्तुत शोध लेख हेतु द्वितीय समंको के रूप में भारत सरकार के प्रतिवेदन लिये गये है।

शोधपत्र के उद्देश्य

1. सामाजिक सेवा क्षेत्र विशेष कर स्कूली शिक्षा में व्यय का अध्ययन करना।
2. शिक्षा के संतुलित विकास हेतु किये गये कार्य का विश्लेषण करना।
3. वर्ष 2020-2021में शैक्षणिक विकास हेतु सरकार के कार्यक्रम एवं योजनाएं।
4. महामारी के दौरान स्कूली शिक्षा के क्षेत्र में किये कार्यो का अध्ययन
5. महामारी के दौरान डिजिटल शिक्षा व्यवस्था का अध्ययन।

भारत में सामाजिक क्षेत्र के विस्तार को महत्व पूर्ण स्थान दिया गया है। स्वंतत्रता के बाद विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में कृषि, उद्योग, परिवहन, विद्युत के विकास के लिए विभिन्न कार्यक्रम संचालित किये गये। शिक्षा स्वास्थ्य,जल आपूर्ति सफाई व्यवस्था,पिछड़े वर्गो के उत्थान के लिए कार्य किये गये नीति आयोग के गठन के पश्चात् भी ये कार्य जारी रहा। केन्द्र एवं राज्यों के द्वारा सकल घरेलु उत्पाद के अनुपात के रूप में सामाजिक सेवाओं जैसे कि शिक्षा,स्वास्थ्य और अन्य सामाजिक क्षेत्रों पर व्यय 2014-15 से 2020-21 की अवधि के दौरान 6.2 से बढकर 8.8 प्रतिशत हो गया है,यह वृद्रि लगभग सभी सामाजिक क्षेत्रों में देखी गई है। शिक्षा के क्षेत्र में यह वृद्धि 2014-15 के 2.8 प्रतिशत से बढ़कर 3.5 प्रतिशत और इसी अवधि में स्वास्थ्य के क्षेत्र में 1.2 प्रतिशत से बढ़कर 1.5 प्रतिशत रही। कुल बजटीय खर्चों में से सामाजिक सेवाओं पर व्यय के हिस्से के रूप में वर्ष 2014-15 से 23.4 प्रतिशत से बढ़कर 2020-21 में 26.5 प्रतिशत हो गया।

तालिका 01

सरकार द्वारा समाज सेवा क्षेत्र व्यय में रूझान (केन्द्र व राज्यों का संयुक्त रूप से)

वर्ष	कुल बजट व्यय लाख	समाज सेवा पर खर्च	जी.डी.पी.के प्रतिशत के रूप में	कुल व्यय के प्रतिशत के रूप में	सामाजिक सेवा के प्रतिशत के रूप में		
					शिक्षा	स्वास्थ्य	अन्य
1914-15	32.85	7.68	6.2	23.4	46.1	19.4	34.6
1915-16	37.61	9.16	6.6	24.3	42.8	19.1	38.6
1916-17	42.66	10.41	6.8	24.4	41.8	20.5	37.7
1917-18	45.16	11.40	6.7	25.2	42.4	21.4	36.2
1918-19	50.41	12.78	6.7	25.4	41.2	20.8	38.0
1919-20	58.76	15.31	7.5	26.1	40.0	20.4	39.6
2020-21	64.70	17.16	8.8	26.5	39.3	20.5	40.2

स्त्रोत- संघ और राज्य सरकारों के बजट दस्तावेज, भारतीय रिजर्व बैकं और सर्वेक्षण गणना।

अर्थव्यवस्था को पुनर्जीवित करने और महामारी को समाप्त करने के लिए आत्मनिर्भर भारत अभियान की घोषणा की गई थी। 20 मई 2020 को भारत के सकल घरेलु उत्पाद के 10 प्रतिशत के बराबर 20 लाख करोड़ के व्यापक पैकेज की घोषणा की गई नवम्बर 2020तक कुल 29.88लाख करोड़ की घोषणा कीं गई। इसमें से 4.31 लाख करोड़ का प्रावधान सामाजिक क्षेत्र के लिए किया गया था,जिसमें कामगारों,नियोक्ताओं,पटरी पर सामान बेचने वालों मनरेगा के कामगार और ए.बी. आर.बाई आदि शामिल है। भारत ने प्राथमिक स्तर लगभग 96 प्रतिशत साक्षरता स्तर प्राप्त किया है,फिर भी हम 100 प्रतिशत साक्षरता प्राप्त करने में पीछे है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण (एनएसएस) के अनुसार अखिल भारतीय स्तर पर 7वर्ष या इससे अधिक आय के व्यक्तियों की साक्षरता 77.7 थी लेकिन सामाजिक धार्मिक समूहों के बीच साक्षरता दर

में अंतर के साथ साथ लिंग भेद अभी भी विद्यमान है। स्कूली शिक्षा के विकास हेतु बहुत से कार्य किये जा रहे है। जिन्हें इस प्रकार वर्णित किया जा सकता है –

संतुलित शिक्षा विकास को बढ़ावा देना - भारत में संतुलित रूप से शिक्षा के विकास हेतु कई कार्य किये जा रहे है जैसे –

- शैक्षणिक रूप से पिछड़े प्रखंडों(ई.बी.बी.) एल.डब्ल्यू.ई. प्रभावित जिले विशेष केंद्रित जिले (एस.एफ.डी.) सीमा क्षेत्रों और नीति आयोग द्वारा अभिनिर्धारित 115 आकांक्षापूर्ण जिलों को वरीयता देना।
- निष्ठा(नेशनल इनीसिएटिव फॉर स्कूल हेड्स एंड टीचर्स होलीस्टिक एडवांसमेंट)नामक एकीकृत शिक्षण प्रशिक्षण कार्यक्रम के जरिए प्राथमिक स्तर पर अध्ययन परिणाम में सुधार करने के लिए एक राष्ट्रीय मिशन,समग्र शिक्षा योजना के तहत कोविड–19 महामारी के दौरान शिक्षण और अध्ययन की आवश्यकता को प्रासंगिक बनाकर इसे 100 प्रतिशत ऑनलाइन किया गया।
- पढ़ना–लिखना अभियान वित्त वर्ष 2020–21 में 57 लाख शिक्षार्थियों को साक्षर बनाने के लक्ष्य के साथ रू.142.6 करोड़ के वित्तीय परिव्यय के साथ एक वयस्क शिक्षा योजना शुरू की गई थीं।
- वर्ष 2019–20 के दौरान स्कूलों में मिड–डे मील (एमडीएम)प्रोग्राम मे 11.34 लाख पात्र स्कूलों में प्रारम्भिक कक्षाओं (I1s VIII) में नामांकित 11.59 करोड़ बच्चों को शामिल किया गया। कोविड–19 के दौरान स्कूलों में गर्मियों की छुट्टियां के दौरान पात्र बच्चों को एकबारगी उपाय पर विशेष भोजन के रूप में खाद्यान्न और दालें, तेल आदि (खाना पकाने की लागत के बराबर)प्रदान करने का निर्णय लिया गया।

खेल और शारीरिक शिक्षा पर ध्यान केंद्रित करना- खेल शिक्षा इस पाठ्यक्रम का एक अभिन्न हिस्सा होनी चाहिए और प्रत्येक विद्यालय खेल के औचित्य को समझकर इसके महत्व पर बल देने के लिए रू 5,000 से लेकर रू 25,000 तक की लागत पर खेल उपकरण प्राप्त करेगा। वर्ष 2020–21 के दौरान स्कूली शिक्षा के लिए कई कार्यक्रम एवं योजनांए प्रारम्भ की गई। समग्र शिक्षा स्कलिंग के समान अवसरों और समान अधिगम परिणामों के संदर्भ में मुख्य विशेषताओं के साथ प्रांरभ किया गया–

शिक्षा की गुणवत्ता पर जोर - भारत सरकार के द्वारा विद्यार्थियों के लिये गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा हेतु विशेष कार्य किये जा रहे है जो इस प्रकार है :–

- शिक्षण और टेक्नालॉजी पर बल देते हुए शिक्षक की गुणवत्ता और अधिनियम के परिणाम में सुधार पर जोर दिया गया।
- शिक्षकों स्कूल के प्रमुख,बी.आर.सी.,सी.आर.सी. की क्षमता निर्माण को बढ़ावा देना।
- गणित और विज्ञान हेतु राष्ट्रीय अभियान का समर्थन।
- पुस्तकालय विकास हेतु प्रति स्कूल वार्षिक अनुदान 5000रू से बढ़ाकर 20000 कर दिया गया।
- विद्यालयों को मजबूती प्रदान करना – विद्यालय के उन्नयन हेतु भी भारत

सरकार के द्वारा प्रयास किये जा रहे है।

- विद्यालय में अवसंरचना की गुणवत्ता में सुधार करना - महिलाओं के विकास एवं सुरक्षा हेतु भी विशेष कार्य किये जा रहे है।
- कक्षा 1 से लेकर आठवीं तक के विद्यार्थियों को वर्धित परिवहन सुविधा उपलब्ध करना।
- मिश्रित विद्यालय अनुदान को 14500-50,000 तथा 25000 से एक लाख तक की वृद्धि की गई।
- बालिका शिक्षा पर ध्यान केंद्रित करना।
- कक्षा 6-8 से कक्षा 6-12 तक कस्तुरबा गांधी बालिका विघालय (के.जी.बी.वी.) का उन्नयन।
- उच्च माध्यमिक के चरण वाले कक्षाओं की बालिकाओं के लिए आत्मरक्षा प्रशिक्षण देना।
- "बेटी बचाओं बेटी पढ़ाओ" को वर्धित प्रतिबद्धता प्रदान करना।
- डिजिटल शिक्षा को बढ़ावा देना- डिजिटल शिक्षा के द्वारा शिक्षा उपलब्ध कराने के लिये डिजिटल प्रौद्योगिकी पाठ्यक्रम आदि उपलब्ध कराये जा रहे है। स्कूलों में उच्च प्राथमिक से उच्चतर माध्यमिक स्तर पर स्मार्ट कक्षाओं, डिजिटल बोर्ड तथा डी.टी.एच. चैनलों तथा आई.सी.टी. अवसंरचना के माध्यम से शिक्षा में डिजिटल प्रौधोगिकी के इस्तेमाल को बढाना। दीक्षा नामक डिजिटल प्लेटफार्म को समर्थन देना जो शिक्षकों,छात्रों और अभिभावकों को विघालय संबंधी विनिधार्रित पाठ्यक्रम से संबंधित पाठ्यक्रम प्रदान करता है।

समावेश पर ध्यान केंन्द्रित करना- स्कूल में अध्ययनरत बालक बालिकाओं के लिये यूनीफार्म, छात्रवृत्ति एवं विशेष आवश्यकता हेतु निम्न सुविधायें बढ़ाई गई है -

- यूनिफार्म के आंबटन के लिए प्रति बच्चे हेतु प्रतिवर्ष रू. 400 से बढ़ाकर 600रू. प्रति बच्चे के लिए की गई।
- प्रतिवर्ष 150/250रू. से बढ़ाकर 250/400रू.तक प्रति बच्चें के लिए आर.टी.ई. अधिनियम के तहत पाठ्य पुस्तकों का आंबटन करना।
- प्रतिवर्ष 3000रू. से बढ़ाकर 3500रू. तक प्रति बच्चे के लिए चिल्ड्रन विद स्पेशल नीड्स का आबंटन करना।कक्षा 1 से लेकर 12 तक की जरूरतमंद बालिकाओं को 200रू. प्रति माह छात्रवृति देना।

कोरोना की प्रथम लहर के दौरान मार्च 2020 से सभी स्कूल कोविड19 के प्रतिबंधों के कारण बंद कर दिये गये जुलाई 20,2021 तक बंद दूसरी लहर तक बंद रहे। तीसरी लहर को देखते हुए अभी कुछ प्रदेशों में 50 प्रतिशत क्षमता के साथ स्कूल खोले जा रहे है। इस दौरान बच्चों को घर पर ही आनॅलाइन पढ़ाया जा रहा है। कोविड काल में दूरस्थ अधिगम एवं दूरस्थ स्थानो से कार्य की वजह से डाटा नेटवर्क, इलेक्ट्रानिक उपकरणों कम्प्यूटर,लेपटॉप,स्मार्ट फोन आदि की उपलब्ध्ता का महत्व अत्यधिक बढ़ गया है। वार्षिक शैक्षणिक स्थिति रिपोर्ट 2020 बेव-1(ग्रामीण क्षेत्र) के अनुसार ग्रामीण भारत में सरकारी और निजी स्कूलों में नामांकित ऐसे बच्चों की संख्या, जिनके पास स्मार्ट फोन है

वर्ष 2018 में 36.5 प्रतिशत थी, जो वर्ष 2020 में बढ़कर 61.8 हो गयी है। ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों, महिलाओं और पुरूषों, विभिन्न आयु समूहों, विभिन्न आय वर्गो के बीच डिजिटल विभाजन की विषमता में कमी आयी है।

महामारी काल में स्कूल के विद्यार्थी हेतु कुछ विशेष पहल की गई है- पी. एम ई विद्या इस पहल की घोषणा मई 2020 में आत्मनिर्भर भारत कार्यक्रम के तहत स्कूली और उच्च शिक्षा के लिए की गई थी। यह छात्रों और शिक्षकों तक शिक्षा को बहु पद्धति से और न्यायसंगत रूप से पहुंचाने को सुगम बनाने के लिए डिजिटल/ऑनलाइन /ऑन-एयर शिक्षा से संबंधित सभी प्रयासों को एकजुट करने की एक व्यापक पहल है। स्कूली शिक्षा के चार पी.एम.ई. - विद्या घटक इस प्रकार है-

- एक राष्ट्र,एक डिजिटल शैक्षिक बुनियादी ढांचाः इस घटक के तहत सभी राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों को एकल डिजिटल बुनियादी ढांचे अर्थात "दीक्षा" के लिए निःशुल्क एक्सेस प्रदान की गई है। यह कृत्रिम बुद्धिमत्ता पर आधारित है, अत्यधिक अनुकूलनीय है तथा इसे वेब पोर्टल और मोबाइल एप्लिकेशन के माध्यम से एक्सेस किया जा सकता है यह पाठ्यक्रम से संबंधित व्यापक
- ई-सामग्री के लिए विभिन्न यूज केसो तथा समाधानों जैसें क्यू आर कोडित सक्रिय पाठ्यपुस्तको(ई.टी.बी.) शिक्षकों के लिए पाठ्यक्रमों प्रश्नोत्तरी आदि के माध्यम से पहुंच प्रदान करता है। लाकॅडाउन लगाये जाने के बाद से "दीक्षा"को 800 करोड़ से अधिक बार देखा (हिट किया) गया है। अप्रैल 2020 में विद्यादान पोर्टल को दीक्षा पर राष्ट्रीय पाठ्य सामग्री योगदान कार्यक्रम के रूप में प्रारंभ किया गया था। जिसने दीक्षा प्लेटफार्म को तथा शैक्षिक निकायों निजी निकायों और अलग अलग विशेषज्ञों से स्कूली शिक्षा के लिए ई- लर्निग संसाधनो के लिए योगदान दान किए जाने की मांग करने तथा अनुमति दिए जाने के साधनों को सशक्त बनाया है।
- एक कक्षा स्वयं प्रभा टी. वी. चैनलो के माध्यम से एक टी.वी. चैनल : स्वयं प्रभा डी.टी. एच. चैनल उन लोगो की सहायता एवं उपयोग के लिए प्रारम्भ किए गए है ।जिनके पास इंटरनेट की सुविधा उपलब्ध नहीं है। 12 चैनल स्कूली शिक्षा से जुडे उच्च स्तरीय शैक्षिक कार्यक्रमो के प्रसारण के लिए नियत कर दिए गए है। इनका पायलट/बीटा संस्करण अक्टूबर 2020 में लाॅंच किया गया है।
- रेडियो,सामुदायिक रेडियो और पॉडस्ट का व्यापक उपयोगः दूरस्थ क्षेत्रों में रहने वाले उन बच्चों के रेडियो प्रसारण का उपयोग किया जा रहा है जो ऑनालाईन नही है। सीआईईटीएनसीई आर टी ने 303 खंडो में पाठ्यक्रम आधारित रेडियो कार्यक्रम (कक्षा 1-8 तक के लिये) तैयार किये गये है जिन्हें 12 ज्ञानवाणी एफ.एम. रेडियो स्टेशनों 60 सामुदायिक रेडियो स्टेशनो रेडियो तथा जियो सावन मोबाइल एप्लिकेशन पर प्रसारित किया जायेगा। कक्षा 9 से 12 के लिये एनआईओएस (NIOS) के लिये पाठ्यक्रम सामग्री प्रसारित करने के लिये 289 सामुदायिक रेडियो स्टेशनों का उपयोग किया गया है। सीबीएसई के शिक्षा

वाणी नाम के पॉडकास्ट को कक्षा 9 से 12 तक के शिक्षार्थियों द्वारा कारगर तरीके से इस्तेमाल किया जा रहा है। इसमें कक्षा 9 से 12 तक के सभी विषयों से संबंधित श्रव्य पाठ्य सामग्री 430 से अधिक खंडो में शामिल की गई है।

- दिव्यांग विद्यार्थियों के लिये व्यवस्था - एक डीटीएच चैनल विशेष रूप से बधिर विद्धार्थियों के लिये साकेतिक भाषा में चलाया जा रहा है दृष्टिबधित और बधिर छात्रों के लिये डिजिटल रूप से सुगम्य सूचना प्रणाली और सांकेतिक भाषा में अध्ययन सामग्री तैयार की गई है। उक्त दोनो तरह की सामग्री एन.आईओ. एम वेबसाइड / यू टयूब पर उपलब्ध है 25 एनसीईआरटी (NCERT) पाठय पुस्तको को भी प्रारूप DAISY में परिवर्तित किया गया है।
- मुक्त विद्यालयों एवं पूर्व सेवा शिक्षा के लिये स्वयं एमओओसी (मैसिव ओपन ऑन लाइन कोर्स) एन ओ एस (कक्षा 9 से 12 त क मुक्त विद्यालय शिक्षा के लिये) से एम.ओ.ओ.सी. स्वयं पोर्टल पर अपलोड किये गये है लगभग 92 पाठ्यक्रम प्रारंभ कर दिये गये है। तथा स्वयं एमओसीसी के तहत 1.5 करोड़ विद्यार्थियों को नामांकित किया गया है।
- डिजिटल पहल के लिये वित्तीय सहायता- कोविड 19 के दुष्प्रभावों से निपटने के लिये राज्यों/ केन्द्र शासित प्रदेशों को डिजिटल पहलो के जरिये ऑनलाइन शिक्षा को बढ़ावा देने के लिये 818.17 करोड़ रूपये तथा समग्र शिक्षा स्कीम के अंतर्गत शिक्षकों के निरंतर व्यावसायिक विकास को सुनिश्चित करने के लिये शिक्षकों को ऑन लाइन प्रशिक्षण देने के लिये 267.86 करोड़ रूपये आवंटित किये गये है।
- मुक्त शैक्षिक संसाधनो का राष्ट्रीय भंडार (एन आर ओ ई आर) एन आर ओ ई आर ई पाठ्य सामग्री का मुक्त ज्ञान भंडार है यहॉ सभी कक्षाओं के लिये विभिन्न विषयों पर लगभग 17.500 खंडो में ई-पाठ्य सामग्री उपलब्ध है।
- डिजिटल शिक्षा संबंधी प्रज्ञता दिशानिर्देश- ये दिशानिर्देश ऑनलाईन /संयुक्त /डिजिटल शिक्षा पर ध्यान केन्द्रित करते हुये उन विद्यार्थियों के लिये तैयार किये गये थे जो वर्तमान परिस्थितियों में स्कूल बंद होने के कारण घर पर ही रहकर पढ़ रहे है।
- मनोदर्पण- ''आत्मनिर्भर भारत अभियान'' में मनोदर्पण पहल को मनोसामाजिक सहयोग देने के लिये शामिल किया गया है। यह शिक्षा क्षेत्र में सुधारों तथा पहलो के माध्यम से उत्पादकता एवं दक्षता को बढ़ाने के लिये मानव पूंजी को सृदृढ़ बनाने के प्रयासो का एक हिस्सा है।

निष्कर्ष-

1. आर्थिक विकास हेतु सामाजिक अधोसंरचना का विशेष महत्व है। ,सामाजिक अधोसरंचना पर व्यय मानव पूॅजी निर्माण में सहायक है। शिक्षा का व्यय वास्तविक आय में वृद्धि बहुत बड़ा योगदान है।
2. विकासशील देशों में जैसे की भारत के संसाधनों की कमी के कारण शिक्षा, स्वास्थ्य, का स्तर बहुत कम है।

3. नई शिक्षा नीति का उद्देश्य है कि 2030 तक माध्यमिक स्तर पर सभी को शिक्षा उपलब्ध कराई जावें।
4. कुल बजटी खर्चो में से सामाजिक सेवाओं पर व्यय वर्ष 2014-15 में 23.4 प्रतिशत था। जो 2020-21 में 26.5 प्रतिशत हो गया है। 2014-15 में शिक्षा के क्षेत्र में सकल घरेलू उत्पाद के अनुपात के रूप में 2.8 प्रतिशत थी। जो बढ़कर 2020-21 में 3.5 प्रतिशत हो गई है। शिक्षा क्षेत्र में व्यय का प्रतिशत बहुत कम है।
5. भारत में कोविड़ काल में आत्म निर्भर भारत अभियान के अन्तर्गत 29.88 लाख करोड़ की घोषणा में सामाजिक सेवा क्षेत्र के लिये 4.31 लाख करोड़ का प्रावधान रखा गया है।
6. संतुलित शिक्षा विकास के लिये नीति आयोग के प्रयास, एकीकृत शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम, वयस्क शिक्षा योजना, मिट डे मील कार्य का संचालन किया जा रहा है।
7. भारत सरकार के द्वारा बालक बालिकाओं की शिक्षा, विद्यालयों को मजबूती डिजिटल शिक्षा, समावेश पर ध्यान केन्द्रित कर स्कूली शिक्षा विकास किया जा रहा है।
8. कोविड काल में इलेक्ट्रानिक उपकरणों, कम्प्यूटर, लेपटॉप, स्मार्टफोन का महत्व बढ़ गया है। ऐसे विद्यार्थी जिनके पास स्मार्ट फोन है का प्रतिशत 2018 में 36.5 प्रतिशत था जो वर्ष 2020 में बढ़कर 61.8 हो गया है। भारत में महामारी के समय डिजीटल शिक्षा विकास हेतु शासन स्तर पर बहुत से प्रसारण द्वारा पाठ्य सामग्री उपलब्ध कराई जा रही है।

उपाय -

1. भारत सरकार एवं राज्य सरकार को सामाजिक सेवा क्षेत्र में व्यय की राशि को बढ़ाया जाना चाहियें।
2. शिक्षा एवं स्वास्थ्य पर विशेष रूप से व्यय का प्रतिशत काफी अधिक बढ़ाये जाने की आवश्यकता है।
3. आत्म निर्भर भारत अभियान के अन्तर्गत सामाजिक सेवा क्षेत्र के लिये किये गये प्रावधानों को सफलता पूर्वक प्राप्त करने की आवश्यकता है।
4. भारत सरकार के द्वारा स्कूल शिक्षा विकास हेतु घोषित कार्यक्रमों को कुशलता पूर्वक संचालित किया जाना चाहियें।
5. डिजिटल शिक्षा विकास शहरी क्षेत्र के साथ साथ ग्रामीण क्षेत्रों का भी किया जाना चाहियें।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. Govt of India Launch of the initiative Aatmnirbhar Bharat Abhiyan , New Delhi 12 May 2020
2. Ministry of Finance Economic Survey 2020-21

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

तुलनात्मक अनुसंधान का महत्व

• अमित शुक्ल

सारांश- आधुनिक साहित्य की परम्परा और नवीनता सभी भाषाओं में उपलब्ध होती है अतः भारतीय भाषाओं के बाहर की भाषाओं से तुलनात्मक अनुसंधान की बजाए भारतीय भाषाओं की परस्पर तुलना का विज्ञान ही आज की आवश्यकता है। तुलनात्मक प्रणाली को समान्तर उपागम के माध्यम से भी अधिक प्रौद्योगिक और वैज्ञानिक बनाया जा सकता है।अनुसंधाता को तुलनात्मक भाषाओं का उनकी सांस्कृतिक, साहित्यिक तथा गतिविधिओं का ज्ञान अपेक्षित है। शोधार्थी को पूर्वाग्रहों से दूर रहकर निष्पक्ष भाव से ही तुलनात्मक अध्ययन करना चाहिए।अतः तुलनात्मक अनुसंधान वर्तमान समय की महत्वपूर्ण कड़ी है। यह आज की आवश्यकता है।

मुख्य शब्द- अनुसंधान,भाषाओं,प्रौद्योगिक, वैज्ञानिक

वर्तमान समय के परिदृश्य में अनुसंधान का अत्यंत महत्व है। इसका क्षेत्र अत्यंत व्यापक है। साहित्य के साथ ही सामाजिक अनुसंधान और वैज्ञानिक अनुसंधान का अन्तर सम्बंध होता है। साहित्य का अनुसंधान अपनी विशिष्टताओं के बावजूद सामाजिक और वैज्ञानिक अनुसंधान से जुड़ा रहता है, क्योंकि उसमें सामाजिक घटनाओं और समस्याओं को ही शामिल किया जाता है। अतः साहित्य में भी किसी समस्या को हल करने के लिए सामाजिक परिकल्पना की आवश्कता होती है। अनुसंधान किसी भी क्षेत्र में हो उसमें वैज्ञानिकता अत्यंत आवश्क है। साहित्य से जुड़ी अनेक शाखाएं हैं, जिनमें प्रमुख रूप से समाजशास्त्र, इतिहास, मनोविज्ञान, दर्शन और विज्ञान है। इन सभी में संबंध सूत्र रहते हैं, अतः साहित्य को इन सबसे जोड़ना आवश्यक है। अनुसंधान में तथ्यों को संकलित कर उन पर चिंतन किया जाता है। जिसके कारण क्षितिजों का विस्तार होता है। साहित्यिक अनुसंधान में रचनात्मक तथ्य महत्वपूर्ण होते हैं, जिनका आधार जीवन की अनुमति, उसका परिवेश जीवन के मूल्य, विचार और संवेदना होते हैं। साहित्य का माध्यम वह भाषा है, जिसे सृजनात्माक भाषा कहा जाता है। समाजविज्ञान और विज्ञान में सृजनात्मक भाषा होती है, यह एक बड़ा अंतर है। साहित्य में अर्थ प्रसंगों को विकसित किया जाता है। यह आरोप लगाया जाता है कि अनुसंधान पर अधिक बल देने के कारण समालोचना पृष्ठभूमि में आ गयी है अतः अनुसंधान के साथ साहित्य की समझ के लिए समालोचनात्मक दृष्टि का विकास भी आवश्यक है। अनुसंधान या शोध करते समय अनेक बातों पर ध्यान दिया जाता है। जिसमें प्रमुख रूप से विषय का चयन आवश्यक होता है, उसके उपरान्त रूपरेखा, सामग्री संकलन, शोध

• प्राध्यापक हिन्दी, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

प्रबंध लेखन और व्यवस्थापन इन सभी तत्वों से मिलकर अनुसंधान की संरचना होती है, जिसके लिए अन्वेषक और निर्देशक आवश्यक है, शोध प्रबंध लेखन के लिए विषय चयन, रूपरेखा निर्माण और समग्री का चयन इसलिए किया जाता है कि शोध प्रबंध लिखा जा सके। शोध प्रबंध को लिखने में नियमों का भी पालन किया जाता है, जिसमें शीर्षक के साथ ही उद्धरण और टिप्पणियां देना भी आवश्यक है, साथ ही संदर्भ ग्रथों की जानकारी भी देना आवश्यदक है, इसी से शोध प्रबंध लेखन में सहायता मिलती है। अनुसंधान अपने में ही एक प्रबंधनात्मक व्यबवस्था है, जिसमें शोध प्रबंध करते हुए क्रमबद्ध संयोजन आवश्यक है। शोध प्रबंध लेखन की प्रक्रिया में आधार ग्रंथ, संदर्भ ग्रंथ और सहायक ग्रंथ की प्रमुख भूमिका होती है। शोध प्रबंध लेखन के बाद उसका सार संक्षेप दिया जाता है, शोध प्रबंध लेखन में मूल पुस्तक के संदर्भ देना ही पर्याप्त नहीं होता बल्कि विभिन्न स्त्रोतों में भी समग्री, जुटाना आवश्यक है। यदि रचनाकार जीवित है तो उससे साक्षात्कार करना भी अत्यंत प्रासंगिक और आवश्यक होता है। इस साक्षात्कार को प्रश्नावली के माध्यम से प्रयोग में लाया जा सकता है और इसके लिए वैज्ञानिक प्रणाली का उपयोग कर संबंधित विषय पर प्रश्नों की रचना की जाती है। साहित्य में भी सर्वेक्षण किया जा सकता है, इसके उपरांत दृश्यश्रव्यी माध्यमों का भी प्रयोग करना संभव है। कुल मिलाकर शोध प्रबंध के उपर्युक्त तत्वों का समावेश कर अनुसंधान की गति को बढ़ाना चाहिए ये उसकी संरचना के अनिवार्य भाग हैं।

तुलनात्मक अनुसंधान वर्तमान समय की आवश्यककता है, अनुसंधान के व्याापक परिदृश्य में एक ही युग और वर्ग के रचनाकारों या रचना परिवेश के कारण साहित्य और भाषाओं की तुलना की जा सकती है और उससे अनेक समान तत्वों का पता लगता है। इसी आधार पर तुलनात्मक अनुसंधान अपने आय में एक विशिष्ट प्रवृत्ति है। हिन्दी साहित्य और भाषा में अनेक तुलनात्मक अनुसंधान हुए हैं। देखा जाय तो तुलनात्मक अनुसंधान में विभिन्न देशों, जातियों और भाषाओं के बीच भी तुलना के तत्व मिलते हैं। तुलनात्मक का आधार यह है कि व्यापक रूप से संसार के साहित्य में मानव चेतना और संवेदना का एक रूप प्राप्त होता है, वह कम से कम उसका आधार समान होती है, वह अलग-अलग भाषाओं में लिखा जाता है किन्तु व्यापक परिप्रेक्ष्य में उसमें समानता और विषमता के तत्व मिल जाते हैं। दो लेखकों और कवियों की तुलना दो प्रवृत्तियों की तुलना दो युगों की और साहित्य की दो विधाओं की तुलना जैसे अनेक तुलनात्मक शोध के कार्य होते हैं। आधुनिक युग में इतना विकास हो गया है कि अब तुलनात्मक अध्ययन अत्यंत प्रामाणिक और व्यापक विधा के रूप में विकसित हो रहा है। एक ही भाषा के एक युग के दो साहित्ययकारों की कृतियों की तुलना हिन्दी में कई बार की गई है। दो काव्य प्रवृत्तियों की तुलना भी होती है। इसी प्रकार एक काव्य प्रवृत्ति के अंतर्गत दो कवियों या साहित्यकारों की तुलना की जा सकती है, जैसे निराला और पंत के काव्य की तुलना, अष्ठछाप के कवियों के संत काव्य, सूफी काव्य, रासो काव्य, छायावादी, प्रगतिवादी और प्रयोगशील काव्य, इनके दो या अधिक रचनाकारों की तुलना की जा सकती है। दो भाषाओं में एक ही युग में एक ही काव्य प्रवृत्ति के अन्तर्गत जो साहित्य रचा जाता है, उसका तुलनात्मगक अध्ययन भी किया जा सकता है, जैसे हिन्दी गुजराती नयी कविता, हिन्दी मराठी नयी कविता, हिन्दी कन्नड़ नयी कविता, हिन्दी बंगला नयी कविता या इसी प्रकार हिन्दी के साथ आधुनिक भारतीय भाषाओं के साहित्य का तुलनात्मक विवेचन किया जा सकता है। भारतीय विचारधारा और संस्कृति के अनुरूप

साहित्य की तुलना की जा सकती है। हिन्दी साहित्य का भारतीय भाषाओं के साथ तुलनात्मक अनुसंधान अत्यंत प्रासंगिक होता जा रहा है और अब भारतीय भाषा साहित्य जैसे प्रश्न-पत्रों का भी अध्ययन आवश्यक माना जा रहा है। समसामायिक परिस्थितियों में दो भाषाओं और साहित्यकारों के बीच सम्पर्क स्थापित करना आवश्यक हो गया है जो राष्ट्रीय एकता और सांस्कृतिक समरसता की दृष्टि से भी आवश्यक है। तुलनात्मक शोध के बढ़ते महत्व के कारण अब मशीनी अनुवाद भी होने लगा है, जिसमें कि दो भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सके। देखा जाए तो भारतीय भाषाओं के तुलनात्मक अनुशीलन का अपना निजी और विशिष्ट महत्व है। तुलनात्मक प्रणाली के संबंध में ब्लूमिफील्ड का कथन है कि तुलनात्मक प्रणाली यह मानकर चलती है कि प्रत्येक शाखा अथवा भाषा पूर्वभाषा के रूपों की स्वतंत्र साक्षी है और संबद्ध भाषाओं में तादात्म अलग अनुरूपताएं पूर्वज भाषा के लक्षणों को प्रकट करती है। इसके आधार पर ही कहा गया है कि तुलनात्मक प्रणाली भाषाओं के इतिहास को समझने में उपयोगी है, डॉ. भीमसेन निर्मल का कथन है कि तुलनात्मक अनुसंधान रूपी विलक्षणताओं के कारण अनुसंधान क्षेत्र का प्रमुख अंग बना हुआ है और वर्तमान परिस्थिति में उसकी प्रधानता बढ़ती जा रही है। तुलनात्मक अनुसंधान में भाषा और साहित्य की स्थिति अत्यंत प्रमुख होती है और इसका परिवेशगत महत्व है।

निष्कर्ष यह है कि आधुनिक साहित्य की परम्परा और नवीनता सभी भाषाओं में उपलब्ध होती है अत: भारतीय भाषाओं के बाहर की भाषाओं से तुलनात्मक अनुसंधान की बजाए भारतीय भाषाओं की परस्पर तुलना का विज्ञान ही आज की आवश्यकता है। तुलनात्मक प्रणाली को समान्तर उपागम के माध्यम से भी अधिक प्रौद्योगिक और वैज्ञानिक बनाया जा सकता है। अनुसंधाता को तुलनात्मक भाषाओं का उनकी सांस्कृतितक, साहित्यिक तथा गतिविधिओं का ज्ञान अपेक्षित है। शोधार्थी को पूर्वाग्रहों से दूर रहकर निष्पक्ष भाव से ही तुलनात्मेक अध्ययन करना चाहिए। अत: तुलनात्मक अनुसंधान वर्तमान समय की महत्वपूर्ण कड़ी है। यह आज की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. हिन्दी अनुसंधान के आयाम, संपादक, डॉ. राजूरकर एवं डॉ. राजमल बोरा, वाणी प्रकाशन 2010, पृष्ठ 232
2. शोध प्रविधि एवं क्षेत्रीय तकनीक, डॉ. बी.एम. जैन, पृष्ठ 15-16
3. आजकल साहित्यिक मासिक पत्रिका, नई दिल्लीं सन् 2008, पृष्ठ 10
4. अमर उजाला समाचारपत्र इलाहाबाद, 3 जनवरी 2000 पृष्ठ 06
5. स्वयं का सर्वेक्षण व निष्कर्ष

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्या

• प्रत्यूष वत्सला द्विवेदी

सारांश- मातृभूमिः सर्वेषां मातृरूपेण प्रतिष्ठतास्ति अतएव सा सर्वैरेव सदा सम्पूज्यते। वयं तस्याः पुत्रा स्मः। अमएव वय कथयितुम शक्नुमः यद् मातृभूमिम् प्रति सदैव समादर भावो वर्द्धनीयः। अनेन निचिश्तमैव पुण्यं वर्धते। तेन च कल्याणं जायते। अभ्युदकल्याणाभ्यां च सुशान्तिर्जायते। तया च मानवमानस प्रसूनं प्रफ्फुल्लायते। अनेन उपायेन सर्व जगत् सर्वथा प्रसन्नं भवितुं शक्नोति। अतएव सर्वैरेव एषा भावना सुदृढी करणीया ''माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः।

मुख्य शब्द- मातृरूपेण, गुरुतरा, पालयति, स्वजनन्याः, लोकाभिरामो, सौख्यमनुभवन्ति

भाति माता धरित्री मदीया परा,
यां समाराध्य चित्तं प्रसन्नायते।
अस्ति स्वर्गा पराः तत्र सौख्यं नवं,
मात्रभुमिश्च स्वर्गा प्रशस्ता सदा

अस्मिन् संसारे जनन्याः जन्मभूमेश्च महत्त्वं सर्वाधिकं वर्तते। यतोहि जनन्याः पुत्रं प्रति यादृशं प्रेम विद्यते तादृशं संसारे कुत्रापि न वर्तते। संसारे कुपुत्रस्तु भवितुं शक्नोति परन्तु काचिदपि माता कुमाता भवितुं न शक्नोति। अतएव कथितमस्ति –

"कुपुत्रो जायते क्वचिदपि कुमाता न भवति।"

जनन्याः वात्सल्यं प्रेमलालनं खलुवर्णयितुमशक्यमस्ति। महाभारते यदा यक्षो युधिष्ठिर मपृच्छत् – "किंस्विद् गुरुतरा भूमेः?" तदा धर्मराजो युधिष्ठिरः तं प्रतिवदति – "माता गुरुतरा भूमेः।" जननी कदाचिदपि स्वबालकस्य कृते कष्टसमूहमपि न चिन्तयति। सा स्वकीयमभीष्टं न कृत्वा बालकस्य मनोरथं सम्पादयति। बालकोऽपि स्वजननी प्रति प्रेम करोति। यतो हि नरः पूज्यतमां मातरम् आजन्मनः सेवमानोऽपि तस्याः ऋणाद् मुक्तो न भवति। कथयति आचार्यो मनु –

"यं मातापितरौ क्लेशं सहेते सम्भवे नृणाम।
न तस्य निष्कृतिः कर्तुं शक्या वर्षा शतैरपि।।"[1]

वेदादिशास्तेष्वपि मातुर्मत्त्वम् अनेकधा निरूपितम्। यजुर्वेदे माता पावयित्री शोधिका च प्रोच्यते –

"आपो अस्मान् मातरः शुन्धयन्तु।"[2]

तैत्तिरीयोपनिषदि लिखितमस्ति – 'मातृदेवो भव।' मातुरलौकिकं महत्त्वं निरूप्यन् महर्षिमनुरेवं लिखिति–

• असिस्टेंट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, डी.बी.एस. कालेज, कानपुर

"सहस्रं तु पितृन् माता गौरवेणातिरिच्यते।"[3]

मता तु पुत्रान् प्रति पृथिवीव आचरति। यथा पृथिवी स्वधैर्यक्षमादिगुणैः लोकं सहते तदैव मातापि स्वकीयधैर्यक्षमादिगुणैः पुत्राणां सर्वं किल सहते। अतएव माता पृथिव्याः मूर्तिरस्ति–

"माता पृथिव्या मूर्तिस्तु भ्राता स्वो मूर्तिरात्मनः।"[4]

महाभारते वेदव्यासो लिखिति यद् लोके मातृसमो गुरुर्नास्ति –

"दशाचार्यानुपाध्याय उपाध्यायन् पिता दश।
पितृन् दश तु मातैका सर्वां वा पृथिवमपि।।
गुरुत्वेनाभिभवति नास्ति मातृसमोगुरुः।[5]

एषा माता बालकानां विविधानि कार्याणि सम्पादयति। अतो विविधाभिर्धानै रेषा स्तूयते –

"कुक्षौ संधारणाद् धात्री जननाजननी तथा।
अंगानां वर्धनादम्बा वीरसूत्वेन वीरसुः।।
शिशोः शुश्रृषणाच्छक्तिर्माता स्यान्माननाच्च सा।।"

जन्मभूमिरपि जननी इव पालयति लालयति च। एषा खलु जननी इव अस्मध्यम् अन्नं जलं वसु च ददाति। एषा जन्मभूमिः यावज्जीवनम् अन्नजलप्रदानेन अस्माकं पालने पोषणं च करोति। एवं वयं जन्मकालादरभ्य मरणपर्यन्त जन्मभूमेरेव अंकके क्रीडामः। यदा वयं विदेशे निवसामः तदापितां सादरं चिन्तयामः ततः प्रीतिनिवृत्य च स्वकीयां जन्मभूमिं संवीक्ष्य प्रसन्नतामनुभवामः। अतएव कथयन्ति सरवाल्टरस्कामहाभागा –

"Breathes there men with soul so dead,
Who never to himself hath said
This is my own, my native land
Whose heart ne're within him burn'd
As home his footsteps he hath turn'd
From wandering on a foreign strand."

जन्मभूमिरपि जननी इव आदरस्य पात्रं भवति। यो जनः स्वजनन्याः जन्मभूमेश्च अभिमानं न करोति, स पशुतुल्यो भवति। अतएव कथितमस्तिं –

"जिसको न निज गौरव तथा निज देश का अभिमान है।
वह नर नहीं है पशु निरा और मृतक समान है।"

प्रवासकाले संजाते खलु वयं स्वकीयां जननीं जन्मभूमिं च भूयो भूयः स्मरामः। यदा लोकाभिरामो रामः स्वकीये प्रवासकाले स्वर्णमय्यां लङ्कायामासीत् तदा रामः जननीं जन्मभूमिं च प्रशंसन् लक्ष्मणं प्रति इत्थमुवाच –

"अपि स्वर्णमयी लङ्का न मे लक्ष्मण रोचते।
जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।।

वेदेषु मातृभूमेः वैशिष्ट्यं वर्णितमस्ति। अथर्ववेदस्य भूमिसूक्ते तु मातृभूमिः विशेषेण स्तुतास्ति। सर्वबाधाविर्वर्जितमानवानां समक्षं यस्यां मातृभूमेरुन्नतं निम्नं समच्च स्थानं वर्तते या नानाशक्तियुक्ता ओषधीः बिभर्ति सा नः प्रथताम्, अस्माकं कार्याणि च राध्यताम् –

असंबाधं मध्यतो मानवानां यस्या उद्वत्तः प्रवतः सवं बहु।
नानावीर्या ओषधीर्या बिभर्ति पृथिवी नः प्रथतां राध्यतांनः।।[6]

भगवतीं मातृभूमिं प्रशंसन् भक्तः कामयते यत् सा गाः अन्नं च ददातु –

"यस्याश्चतस्रः प्रदिशः पृथिव्या यस्यामन्नं कृष्टयः संबभवुः।
या विभर्ति बहुधा प्राणदेजत् सा नो भूमिर्गोष्वप्यन्ने दधातु।।"[7]

विश्वम्भरां वसुधानीं वसुन्धरां प्रार्थयति भक्तः –

" विश्वम्भरां वसुधानी प्रतिष्ठा हिरण्यवक्षा जगतो निवेशनी।
वैश्वानरं बिभ्रती भूमि रग्निमिन्द्रऋषभा द्रविणो नो दधातु।।"[8]

मातृभूमिर्नः पोषकान्नरसान् ददातु नः पावयतु। एषा भूमिर्मे माता, अहमस्याः श्रेष्ठ पुत्रः –

"तासु नौ धेह्यभि नः पवस्व माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः।
पर्जन्यः पिता स उनः पिपर्तु।।[9]

भक्तः कामयते यद् मातृभूमिः ज्ञानं समृद्धिं च वितरेत् –

वचो मधु पृथिवि धेहि मह्यम्।[10]
श्रियां मां धेहि भूत्याम्।[11]

न केवलं मानवानाम् एव परन्तु पशुपक्षिणामपि जन्मभूमिं प्रति प्रेम परिलक्ष्यते। आरण्यकाः पशवः पक्षिणश्च यथा वने एव वृक्षेषु वसतिं" कृत्वा सौख्यमनुभवन्ति न तथा राजसद्मनि। गृहस्था अपि वनं गन्तुमेव बुद्धिं कुर्वन्ति। तत्र निवासः तेभ्यो न रोचते।

अनेके महापुरुषाः तु स्वजन्मभूमिं प्रति प्राणानपि परित्यक्तवन्तः। शिववीरस्य, प्रतापस्य, गान्धिनः सुभाषस्य, जवाहरलालस्य, लालबहादुर शस्त्रिणो देशप्रेम को न प्रशंसति? एते महापुरुषाः देशप्रेम्णः कृते सुखं परित्यज्य दुःखसागरं जग्मुः।

एवं ज्ञायते यत् संसारे जननीजन्मभूमिश्च भृशं महत्त्वं भजेते। मन्ये यो भावुको भक्तो जनन्याः जन्मभूमेश्च पूजनं करोति स सर्वथा ज्यायन्, लोके पूज्यश्च। यो हि अतो वैपरीत्यं श्रयते न स कदाचिदपि गौरवं लब्धुं शक्नोति। अतः अस्माभिरपि सर्वदा एव स्वजनन्याः जन्मभूमेश्च समादरः कर्त्तव्यः। अतएव तथ्यमेव कथितमस्ति –

"जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।।"

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. मनुस्मृति 2/227
2. शुक्लयजुर्वेद 4/2
3. मनुस्मृति 2/145
4. मनुस्मृति 2/226
5. अनु. 105/14-15
6. अथर्व. 12/1,2
7. अथर्व. 12/1,4
8. अथर्व. 12/1,6
9. अथर्व. 12/1,12
10. अथर्व. 12/1,16
11. अथर्व. 12/1,63

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

अशोक के धम्म में निहितार्थ सामाजिक एवं आर्थिक चिन्तन

• मीना कुमारी

सारांश- अशोक का धम्म मात्र नैतिक आचार संहिताओं का प्रलेख मात्र नहीं है, बल्कि उसमें सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, प्रशासनिक आदि चिन्तन की विशद संकल्पना भी निहित है, जो समयकाल एवं परिस्थितियों से बंधी न होकर नित्य, शाश्वत एवं विश्वजनीक है। जिनकी आवश्यकता अशोक के समय में भी थी आज भी है, और भविष्य में भी रहेगी जब तक इस मानव सृष्टि का अस्तित्व रहेगा।

मुख्य शब्द- धम्म, आचार संहिता, संकल्पना, मानव सृष्टि

सम्राट अशोक महान के काल की सबसे महत्वपूर्ण घटना, उसके द्वारा सर्वप्रथम अपने सामाज्य के विभिन्न भागों में उत्कीर्ण कराये गये अभिलेख है। जिनमें बार बार 'धम्म' शब्द का उल्लेख हुआ है, जो कि संस्कृत शब्द धर्म का ही प्राकृत रूप है।

अशोक अपने किसी भी अभिलेख में अपने व्यक्तिगत धर्म का उल्लेख नही करता है, बल्कि अपने धम्म की विशेषताओं का उपदेशात्मक शैली में उनकी संक्षिप्त व्याख्या ही करता है। अत: उसके उत्कीर्ण समस्त अभिलेखों में उसके धम्म से सम्बन्धित जो समस्त नैतिक आचार संहितायें प्राप्त होती है। सामान्यत: उसी के सामूहिक रूप को इतिहासकारों एवं पुरातत्व विदों वेन्ताओं ने अशोक के धम्म के रूप स्थापित करने का प्रयास किया है।

परन्तु अशोक का 'धम्म' मात्र नैतिक आचार संहिताओं का प्रलेख मात्र नहीं है, बल्कि उसमें सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, प्रशासनिक आदि चिन्तन की विविध आयामों की विशद संकल्पना भी निहित है। इस प्रस्तुत लेख में मात्र अशोक के 'धम्म' में निहितार्थ सामाजिक एवं आर्थिक चिन्तन को ही रेखांकित किया जा रहा है।

किसी भी सभ्य समाज एवं राज्य का स्थायित्व, सुदृढता एवं विकाशशीलता उस समाज एवं राज्य के नैतिक चरित्र, सामाजिक बोध, सामाजिक एवं सांस्कृतिक, आदर्शो, मूल्यों एवं उसकी सामाजिक धार्मिक, आर्थिक, राजनैतिक संरचना एवं उसकी संकारात्मक गत्यामक प्रक्रियों पर भी निर्भर करता है। सम्राट अशोक महान इन ऐतिहासिक शाश्वत तथ्यों एवं परिस्थितियों से अनभिज्ञ नहीं, बल्कि अत्यधिक जागरूक एवं सजग था। अशोक के 'धम्म' में बार बार परलौकिक सुखों की अपेक्षा लौकिक जगत के सुखों एवं उसके कल्याण की अभिलषा अधिक परिलक्षित होती है। अशोक बार-बार अपने 'धम्म' में नैतिक एवं सामाजिक मूल्यों के अनुपालन करने एवं कुवृत्तियों से दूर रहने का आग्रह करता हुआ दिखायी देता है। एक निरकुश राजतांत्रिक व्यवस्था में स्वयं

• एसोसिएट प्रोफेसर चित्रकला विभाग, आगरा कॉलेज, आगरा

राजा द्वारा इस प्रकार का आग्रह एवं उसके अनुपालन की व्याग्रता प्रमाणित करती है, कि मौर्यकालीन समाज भी आज की भांति अपने शाश्वत नैतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों एवं आदर्शो की तिलान्जलि देकर अद्योतन की ओर उन्मुख हो रहा था। अतः अशोक अपने धम्म में अतिभोगों से मुक्ति, पापों से विरक्ति, बहुजनों का कल्याण प्राणिमाभ के प्रति दयाभाव, दान, सत्य आचरण, संयम, सुशिता मृदुता, साधुवादिता एवं आत्मपरीक्षण आदि के अनुपालन एवं क्रूरता, निष्ठुरता, क्रोध, ईर्ष्या आदि कुप्रवृतियों से दूर रहने का आग्रह करता है। इसके अनुपालन पर ही मनुष्य लौकिक एवं पारलैकिक सुखों को प्राप्त कर सकता है। आज हमारे समाज एवं राष्ट्र में हिंसा, उपद्रव, आतंकवाद, भ्रष्टाचार, जातिवाद एवं सम्प्रदायवाद आदि विकृतियॉ उभर कर खड़ी हुई हैं। उसके मूल में मुख्य कारण यही है कि हम उन शाश्वत नैतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों एवं आदर्शो को तिलान्जलि देकर उनसे कहीं न कही विमुख होकर भटक गये है।

प्रत्येक समाज की प्रारम्भिक इकाई परिवार होता है। जिसमें परिवार के वृद्धजन, माता-पिता, पति-पत्नी, पुत्र पुत्री इत्यादि होते हैं। एक सुखद पारिवारिक जीवन एवं उसके स्थायित्व एवं विकास के लिये जिन नैतिक, सामाजिक मानदण्डों एवं परस्पर साहचर्य, सामाजिक दायित्व बोध की आवश्यकता होती है। ऐसा प्रतीत होता है कि सम्भवतः मौर्ययुग में उक्त सामाजिक एवं नैतिक मूल्यों के अपघटन की प्रक्रिया प्रारम्भ हो गयी थी। वृद्धजनों, माता-पिता, गुरूजनों, अतिथियों आदि के प्रति उपेक्षा भाव रखा जाने लगा था। तभी अशोक अपने धम्म में धार्मिक कर्मकाण्ड एवं रूढ़िगत, कुप्रवृत्तियों की उपेक्षाकर सामूहिक रूप से सामाजिक जीवन के नियमन की अपील करता हुआ दिखायी देता है। अशोक अपने धम्म में वह मानव जीवन के विभिन्न सम्बन्धों के प्रति सामाजिक सदाचार के विस्तृत नियमों जैसे माता-पिता, वृद्धजनों, अतिथियों की सेवा एवं सत्कार, गुरूजनों का सम्मान, सगे-सम्बन्धियों की यथासम्भव सहायता करने की अपील करता है। अशोक ने परिवार एवं ग्रहस्थ जीवन में उन ब्राहमणों एवं श्रमणों को भी सम्मलित कर लेता है, जो कि परमतत्व की खोज में सांसरिक जगत छोड़कर सन्यास ग्रहण कर लेते हैं। इतना ही नही बल्कि उसने इसकी परिधि में उन क्षुद्र जीवों को भी सम्मलित कर लिया है जो कि प्राकृतिक रूप से स्वावलम्बी न होकर ग्रहस्थों पर ही निर्भर होते है। अतः उनके पालन पोषण एवं रक्षण का उत्तरदायित्व भी ग्रहस्थों पर डाला गया है। Pillar Ins.-7 Rock Ins. 3,4,9,11,13 इन सिद्धान्तों का अपने 'धम्म' में सम्मालित करने का मुख्य उद्देश्य ग्रहस्थ जीवन में समरसता, परस्पर सामाजिक प्राकृतिक साहचर्य एवं सामाजिक उत्तरादायित्व से विमुख समाज को पुनः सामाजिक उत्तरादायित्व बोध की वृत्ति की ओर उन्मुख करना था। जिसकी एक सभ्य समाज के स्थायित्व एवं विकास के लिये एक निर्विवाद आवश्यकता होती है। सम्राट अशोक महान इस सिद्वान्त के प्रति भी अत्यधिक जागरूक था, कि एक सभ्य समाज एवं राज्य का अस्तित्व एवं विकास तभी सम्भव है, कि सामाजिक, धार्मिक एवं आर्थिक संरचना के विभिन्नता में एकता एवं समन्वीकरण तभी हो सकता है, जबकि विभिन्न सामाजिक, आर्थिक वर्गो, धार्मिक एवं सांस्कृतिक सम्प्रदाओं में एक भावनात्मक एवं सांस्कृतिक एकता हो। जिसे आधुनिक समाजशास्त्रियों ने 'हम की भावना' कहा है। यद्यापि अशोक वैयक्तिक रूप से भले की

बौद्ध उपासक हो, परन्तु जहॉ तक राज्यनीति का प्रश्न है, अशोक अपनी धम्म नीति में वर्ण, जाति, धर्म एवं सम्प्रदायवाद से ऊपर उठकर उसने परम्परागत वर्ण, जाति, सामाजशास्त्रियों धर्म एवं सम्प्रदाय पर आधारित विशेषाधिकारों को समाप्त कर 'समान' व्यवहार, समता एवं समान दण्ड समता का प्रावधान किया है। इसी के साथ धम्मलिपि में भाषा एवं एक लिपि का प्रयोग किया। जिससे वर्ग विभेदीकरण समाप्त करके एक सामाजिक ऐक्य एवं सांस्कृतिक एकता, स्थापित की जा सके। जिससे राज्य में सामाजिक एवं सांस्कृतिक एकता, समरसता एवं राज्य में एकीकरण की भावना प्रबल हो सकें। यद्यपि मौर्य काल में स्पष्ट रूप से वर्ग संघर्ष का कोई ठोस ऐतिहासिक साक्ष्य प्राप्त नही होता है, परन्तु उस काल में निश्चित की विभिन्न वर्गो के मध्य संघर्ष एवं तनाव की स्थिति अवश्य रही होगी, तभी अशोक सामाजिक एवं साम्प्रदायिक ऐक्य पर इतना अधिक बल देता हुआ दिखायी देता है।

ब्राहमण धर्म का पोषक कौरिल्या जैन एवं बौद्वों को वृषल (धर्मच्युत) एवं पाषण्डों को (निम्न कुल) एवं चाण्डालों को नगर से दूर बसने का प्रावधान करता है। जबकि उनके प्रवर्त्तन अचिक एवं अनुयायी अधिकोशत: वैश्य एवं अंकित थे। अत: ऐतिहासिक रूप से प्रमाणित होता है कि मौर्यकालीन ब्राम्हण, जैन, बौद्व एवं आगीदक सम्प्रदाओं में परस्पर कडुता एवं वैभवस्थता हो गयी थी। प्रत्येक धर्म एवं सम्प्रदाय में विभिन्न मान्यताओं, दृष्टिकोणों एवं जीवन पद्वतियों में परस्पर विरोधाभाष होने के कारण समान में अनेक तनाव एवं अन्त:विरोध पैदा हो गये थे। अशोक अपनी धम्म नीति में शुंग, कण्वा, सातवाहन एवं गुप्त राजाओं की भांति अपने धम्म को राजकीय संरक्षण न देकर सभी धर्म एवं सम्प्रदायों को समान संरक्षण एवं विकास के समान अवसर देता है। वह अपने धम्म में कहता है कि सभी धर्मो के मानने वालों को सभी जगह बसने दो, क्योकि सभी धर्म आत्म संयम एवं भावशुद्वि चाहते है। अशोक सर्वधर्म समभाव की नीति की प्रशंसा करते हुये कहता है, कि जो अपने सम्प्रदाय की प्रशंसा करता है और दूसरे सम्प्रदाय की निन्दा करता है। वह ऐसा करके अपने सम्प्रदाय को ही हानि पहुँचाता है। इसलिये समभाव ही अच्छा है। इसी के साथ उपरोक्त अनेक तनावों एवं अन्तर्विरोधों का समाधान एक ऐसे सार्वभौतिक धर्म से ही सम्भव हो सकता था। जिसमें सभी धर्मो एवं सम्प्रदायों के नित्या शाश्वत एवं सावभौविक सभी सिद्वान्तों का समावेश हो। अत: अशोक ने अपने धम्म में बौद्व, जैन, ब्राहमण, आजीवक आदि सभी धर्मो के नित्य शाश्वत एवं सार्वभौविक उन सर्व सिद्वान्तों को आत्मसात किया है, जो कि मानव के लिये कल्याणकारी है। जिससे उसे सभी धर्म एवं सम्प्रदाय के लोग आत्मसात कर सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं आत्म विकास कर सकें।

मौर्य युग में धार्मिक सम्प्रदायों की भांति ही समाज वर्णव्यवस्था के आधार पर विभिन्न सामाजिक स्तरीकरण में बॅटा हुआ था। सर्वोच्य स्थान पर ब्राम्हण उसके बाद क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र आते थे। ब्राम्हण धर्मानुसार इस वर्ण आधारित व्यवस्था का उल्लंघन धर्मविरूद्व माना जाता था। इस सामाजिक स्तरीकरण की व्यवस्था की संरचना में सबसे उपेक्षित एवं निम्नतर वर्ग, मृत्य (शूद्र) दास एवं युद्धबन्दी आते थे। अशोक ने अपनी 'धम्म नीति' में इस उपेक्षित एवं निम्न वर्ग के प्रति लोगों को समान व्यवहार, दयाभाव रखने, उन्हें

मुक्त करने के लिये ही आहवान ही नहीं किया, बल्कि इस वर्ग में लोगों को राजकीय बंजर पड़ी हुयी भूमि को देकर अनेक बस्तियां बसायी गयी। इसी में साथ उस भूमि को उर्वरा भूमि बनाने के लिये कृषि यन्त्र, बीज, उर्वरक एवं सिंचाई आदि के संसाधन भी उपलब्ध कराये गये। अशोक की धम्म नीति की इस नयी मनोवृत्ति एवं उनके रचनात्मक कार्यो से इस अपेक्षित वर्ग के आर्थिक विकास की प्रक्रिया का प्रारम्भ हुआ और व्यक्तिगत दास से कृषि दास के उपक्रम में आये गये थे। जिसे पिछली सामाजिक प्रास्थिति को पहले की अपेक्षा अच्छा माना जा सकता है।

इस धम्म नीति का सकारात्मक लाभ यह भी हुआ, कि इस उपेक्षित वर्ग का उत्पादन वर्ग से जुड़ जाने के कारण सामाजिक एवं आर्थिक अन्तनिर्भरता के सिद्धान्त ने परस्पर साहचर्य एवं समन्वय की भावना को जन्म दिया। परिणाम स्वरूप जटिल एवं बन्द एवं जातीय व्यवस्था, सरलीकरण एवं खुलेपन की ओर उन्मुख हुयी। इसी के साथ इस धम्मनीति के माध्यम से घनी आवादी वाले क्षेत्रों से इन्हें स्थानान्तरित करके एक ओर जनसंकुलता के दबाव को कम किया जा सका, तो दूसरी ओर बंजर पड़ी हुयी भूमि कृषि योग्य बन जाने से राज्य के राजस्व में वृद्धि की सम्भावनायें बढ़ गयी और अतिरिक्त उत्पादन सम्भव हो सका, जिससे प्राकृतिक प्रकोपों में खाद्यान जैसी समस्याओं के समाधान हेतु राजकीय भण्डारण एवं सुदूर राज्यों से व्यापार एवं वाणिज्य की सम्भावनायें में भी बढ़ गयी थीं। वैदिक धर्म यज्ञ एवं कर्मकाण्ड प्रधान था। शतपथ ब्राहमण में कहा गया कि जब तक बलि नहीं दी जायेगी सूर्यारत नहीं होगा।

यद्यपि सर्वप्रथम छठी सूदी ई.पू. उपनिषदों, में कर्मकाण्डीय व्यवस्था के विरूद्ध में जैन एवं बौद्धों की स्वर मुखरित हुआ। जिसमें धार्मिक यज्ञों कर्मकाण्डों एवं पशुपालन की मर्त्थना कर सत्थ, अहिंसा, जीवन की पवित्रता एवं आचरण की शुद्धता पर बल दिया गया। परन्तु इन शिक्षाओं को मौलिक, धार्मिक, आध्यात्मिक एवं नैतिक अनुसमर्थन प्राप्त था, कोई कानूनी प्रतिबन्ध नहीं। अत: अशोक के काल में भी लोग धार्मिक यज्ञों, कर्मकाण्डों एवं अनेक धार्मिक एवं सामाजिक रूढ़िगत, संस्कारों से ग्रस्त थे। यह यज्ञ एवं कर्मकाण्यी एवं पशुबलि व्यवस्था एवं सामाजिक धार्मिक रूढ़िगत संस्कारो से मानवीय ऊर्जा, आत्मिक, उत्कर्ष एवं पशुसम्पदा का अकारण ही क्षय हो रहा था, तो दूसरी ओर यह परम्परागत रूढ़िगत प्रवृत्तियां सामाजिक एवं आर्थिक विकास को अवरूद्ध कर रही थीं।

अत: राज्य के सामाजिक एवं आर्थिक विकास के धार्मिक कर्मकाण्डों एवं सामाजिक धार्मिक रूढ़िगत संस्कारों से मुक्त कराने के लिये अशोक ने अपनी धम्म नीति में विहार सीमाओं के स्थान पर कर्मकाण्डीय धर्म के स्थान पर धर्मसभाओं, धर्मयात्राओं, साधारण मंगलाचरण के स्थान पर धर्ममगंलाचरण, युद्ध विजय के स्थान पर धम्भविजय के सिद्धात को आत्मसात किया। प्रतिबेधकर एवं हिंसा, कूरता तांडव, छलकपट का प्रतिबेधकर सत्य, अहिंसा, सदाचार, प्रेम, करूणा, दया एवं सवेदनात्मक सहानुभूति का अनुसरण करने का संदेश दिया और राजाज्ञाओं के माध्यम से उपरोक्त परम्परगत रूढिगत कुप्रवृत्तियों को पूर्णरूप से प्रतिबन्धित भी कर दिया गया था, जिससे सामाजिक एवं आर्थिक विकास का मार्ग प्रशस्त करने के लिये नयी भाव भूमि की पृष्ठभूमि तैयार हो सकें। Rock Inscription 13th Kaiarga (Orissa)

अशोक अपने धम्म में अपव्ययता (आश्यकता से अधिक खर्च) एवं अपभाण्डता (आवश्यकता से अधिक संचय) के सिद्धान्त को स्वीकार कर भारतीय हिन्दू जीवन पद्धति में विहित द्वितीय पुरूषार्थ 'अर्थ' का अनुसरण करने पर बल देता है। यहाॅ पर अर्थ से तात्पर्य उन सभी भौतिक वस्तुओं एवं साधनों से है। जिसकी मनुष्य को अपने कर्तव्य एवं द्वायित्वों को पूरा करने की आवश्यकता होती है। धर्मशास्त्रों के अनुसार यदि अर्थ धर्म, विरूद्ध हो तो उसे छोड देना चाहिये। अर्थात अर्थ के उपार्जन हेतु समस्त साधन अथवा प्रयास में धर्म की स्वीकृति अवश्य होना चाहिये महाभारत उद्योगपर्व 8-18 24 इस प्रकार धर्मशास्त्रों के अर्थ की संकल्पना जहाॅ पर नैतिक एवं धार्मिक है, वहाॅ पर अशोक के धम्म में अर्थ की संकल्पना नैतिक एवं धार्मिक होते हुए भी विशुद्ध ऐतिहासिक वस्तुगत यथार्थ पर भी है। क्योंकि किसी भी मनुष्य द्वारा आवश्यकता से अधिक खर्च एवं आवश्यकता से अधिक संचय दोनों ही अतियाॅ मात्र व्यक्ति विशेष के लिये नहीं एक सम्य समाज एवं राज्य हित के लिये भी धातक हैं।

अतः अशोक का धम्म मात्र नैतिक आचार संहिताओं का प्रलेख मात्र नहीं है, बल्कि उसमें सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, प्रशासनिक आदि चिन्तन की विशद संकल्पना भी निहित है, जो समयकाल एवं परिस्थितियों से बंधी न होकर नित्य, शाश्वत एवं विश्वजनीक है। जिनकी आवश्यकता अशोक के समय में भी थी आज भी है, और भविष्य में भी रहेगी जब तक इस मानव सृष्टि का अस्तित्व रहेगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. थापर, शोमिला - भारत का इतिहास पृष्ठ-62
2. Pillar Inscription 7 Rock Inscription 3,4,9,11,13
3. मैकाइवर एवं पेज - Man and Socicty pp-139
4. स्तम्भ लेख द्वितीय - दिल्ली टोपरा संस्करण संग्रहीत गोपाल श्रीराम प्राचीन भारतीय अभिलेख संग्रह पृष्ठ-97
5. Rock Inscription 7,8 Shah bajgari (Pakistan)
6. ज्ञा, डी. एन - प्राचीन भारत एक रूपरेखा, पृष्ठ-66, 1980
7. Rock Edict Ist
8. मिश्र, जयशंकर - प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास Page 21
9. मुखर्जी, राधा कुमुद - अशोक Page 75,76
10. वही,
11. सिन्हा, हरेन्द्र प्रताप - धर्मदर्शन की रूपरेखा 1999 पृष्ठ 66
12. आर. ए.पी. रोजर्स - ए शार्ट हिस्ट्री ऑफ Ethics pp-36

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

जीवन में आत्मा की खोजः एक दृष्टिकोण

• सोनी सिंह बघेल

सारांश- वस्तुतः आत्मा और ईश्वर के मर्म को तो वही जान सकता है, जो सांसारिक जीवन जीता है, जो सत्य को पहचान चुका है, जो नैतिक कर्म कर रहा है, तभी व्यक्ति अपने जीवन को जान पायेगा अपनी आत्मा को खोज पायेगा, तभी वह दूसरों के जीवन को जान पायेगा तभी वास्तव में एक इन्सान दूसरे इन्सान से आत्म भाव से जुड़ पायेगा और यही आत्म भाव की व्यापकता संसार को जीने योग्य बनायेगी। सत्य पर आधारित जीवन आनन्दानुभूति का भण्डार होगी। यही आनन्दानुभूति आत्मभाव है, आत्मा है जब यही आनन्दानुभूति प्रकृति की व्यापकता में परिलक्षित होगी है वस्तुतः मेरे हिसाब से जीवन में आत्मा की खोज मानव मात्र का दर्शन है जीवन की आचार संहिता है और यही सर्वकालिक एवं सर्वदेशीय दर्शन है।

मुख्य शब्द- जीवन, आत्मा, दृष्टिकोण, सर्वकालिक

आत्मा का सम्बन्ध जीवन से प्रकृति से, इस जगत से, इस अखण्ड ब्रह्मण्ड से अनादि काल से जुड़ा हुआ है। आदि काल से ही इन शाश्वत विषयों को जानने-समझने की जिज्ञासा मानव की रही है। अदृश्य सत्य को जानने के लिए मानव की न केवल चिन्तन रहा है, बल्कि इन्हे जानने-समझने के लिये उसने कई वर्षो तक घोर तपस्या भी की है, योग-जप-साधना की है। यहाँ तक कि कुछ मनीषीयों ने अपना सर्वस्य जीवन इसी विषय को जानने-समझने में खपा दिया है, उन्होंने जन्म-जन्मान्तरों तक आत्मा और ईश्वर के साथ अपने सम्बंधों का सतत् गहन चिन्तन किया है। अच्छे कर्मों को लेकर जहाँ स्वर्ग की प्राप्ति बतलाई, वही बुरे कर्मों का परिणाम नरक की असहनीय यातना को बतलाया। पुनर्जन्म की बातों को स्वीकार कर आत्मा को जहाँ एक इकाई के रूप में देखा है वही ईश्वर-अंश मानकर उसे विशालता भी प्रदान की। जहाँ एक ओर निर्गुण विचारधारा ने ईश्वर को अदृश्य, अग्राह, अलक्ष्य, अचिन्त्य, अस्पर्श्य, अशब्द, आदि लक्षणों से युक्त अमूर्त माना गया है। वही सगुण विचारधारा मे ईश्वर को विभिन्न अवतारों के युक्त सच्चिदानन्द मूर्त स्वरूप के भी स्वीकार किया है।

बिना योग-जप-साधना के, बिना सन्यास के प्रकृति के ऐसे गूढ़तम रहस्यों को छेड़ने का प्रयास मेरी नदानी है, मेरी बौद्धिक-क्षमता बहुत सूक्ष्म एवं क्षीण है। जीवन को, जीवन के रचनाकार को समझने के प्रयास में मेरा कद अभी बहुत छोटा है। फिर भी मैने अपने जीवन के विभिन्न अनुभवों, पहलुओं एवं आयामों से यथासम्भव जीवन्त आत्मा को खोजने का प्रयास किया है। आत्मा एवं ईश्वर को प्रचलित अवधारणाओं से पृथक जीवन एवं प्रकृति के संर्न्दभ प्रस्तुत करना आवश्यक है। मेरा विश्वास है कि हम बाह्य आडम्बरों मे न पड़कर सांसारिक जीवन व्यतीत करते हुए जीवन्त-आत्मा को अर्न्तमनः स्थिति द्वारा समझ सकते है। वस्तुतः जीवन में आत्मा की खोज का कोई रेडीमेड नक्शा

• अतिथि विद्वान, दर्शनशास्त्र विभाग, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र)

नही है। इसके लिए आपको अपने मन के कई द्वार खटखटाने पड़ेंगें। कई घाटों में भटकना पड़ेगा, कई आदर्शों, यथार्थों और मूल्यों को खँगालना पड़ेगा और फिर यही आत्मिक जिज्ञासा ही हमे आत्मा तक पहुँचायेगी। आत्मा की खोज के सम्बंध में, आध्यात्मिकता की दिशा, योग-जप-साधना, की दिशा उसका एक पहलू है बुद्ध शील और मनोन्नयन को तृष्णांत तक ले जाकर निर्वाण मे ठहरते है। जैन मुनि स्यात् और अनेकांत का पाठ पढ़ाते है " स्यात् अस्ति च नास्ति च" - स्यात् वह है भी स्यात् वह नही भी है। चार्वाक कहते है दही सड़ने से सूड़े जैसे सजीव जी उठते है। वैसे ही चेतना है। वेदांत का आत्मन् निस्तरंग चैतन्य है। मन मे, जो मनन उत्पन्न करता है, पर मन के द्वारा जिसका मनन नही किया जा सकता, आग में जो ताप उत्पन्न करता है, पर आग के द्वारा जो जलाया नही जा सकता, वही आत्मन् है। "नायमात्मा प्रवचनने लभ्यों, नायमातमा बलहीनलभ्यों" की गूंज है। वृहदारण्यक उपनिषद के अनुसार "अथ योडनां देवता उपास्यते अन्याऽसौ अन्योऽहन स्मीत" अर्थात जो स्वात्म से भिन्न दूसरे देवताओं की पूजा करता है वह देवताओं का पशु मात्र है। बुद्ध वह शव को देखकर वैरागी हो जाते है और जीवित यशोधरा से पलायन करते है और आत्मा एवं ईश्वर के प्रश्न पर 'मौन धारण' कर लेते है। ईसा तो जीवन एवं प्रकृति के विरूद्ध ही है। नीत्शे उससे भी आगे बढ़ जाते है और कहते है- "ईश्वर मनुष्य का भ्रम है? या मनुष्य ईश्वर का भ्रम है"। सेवन पिलर्स ऑफ विजडम में टी. एव. ग्रीन लिखते है- अरबी यह सोचता है कि वह "खुदा के भीतर है" भारतीय संत सोचता है, खुदा उसके भीतर है अंतरात्मा है। वस्तुवादी कहते है- दृश्य दृष्टि के बाहर है- दृष्टि निरपेक्ष है। उपनिषदिक वेदान्त के अनुसार भी ब्रह्म तत्व तन मन के संकल्प-विकल्प के परे है।

यह औपनिषदिक आत्मन् ही बुद्ध के यहाँ अनात्मन् की संज्ञा प्राप्त करता है क्योंकि अहंकार मूलक कर्म काण्ड से आत्मन् मुक्त नही है इसलिए बुद्ध ने इसे आनात्मन् की संज्ञा दी साथ ही अपना दीप स्वयं प्रज्जवलित करने को कहा। इस तरह एक ओर अहंकार मूलक आत्मा का विलोपन बुद्ध ने किया तो वही दूसरी ओर अहंकारहीन अनात्मन् मे कर्मकाण्ड रहित औपनिषदिक आत्मन् का नवरोपन भी- 'स्वदीप भव' के रूप में किया।

वास्तव में कर्मकाण्डी अंहकार मूलक आत्मा उस काली बिल्ली के समान है जिसे अन्धेरे कमरे में कुछ लोग खोज रहे है, जहाँ वह है ही नही। आत्महीनता 'ट्रैजिडी' के समान है एक ब्लैक होल ट्रैजिडी जिसे स्वयं प्रकाशित नही किया जा सकता। आपने भी देखा होगा कि दीप या किसी आलोक पर, वे ही कीट पतंगे मरने के लिए दौड़ते है और मर भी जाते है जिनके पास आत्म प्रकाश नही जो स्वात्म दीप न होकर कर्मकाण्डी अन्ध दीप है। वे ही अन्ध तृषित हो दीप में जल मरते है और दीप को भी बुझा देते है, पर जुगुनू जैसा नन्हा जीवन कभी दीप में जलने नही आता, क्योकि उसके पास स्वलोक है। यही आत्मानात्मन की दुर्लभ पकड़ है।

अब हम अपने मूल विषय जीवन में आत्मा की खोज की ओर अग्रसर होते है। संसार की समस्त भौतिक वस्तुओं, जड़ चेतन सभी के कण-कण में एक ऐसी शक्ति अदृश्य रूप में विद्यमान रहती है, जो उस वस्तु या उस जीवन को उसकी संरचना करने में मदद् करती है जीवधारियों में यह शक्ति चेतनता के रूप में उभरकर आती है, जीवधारियों

में कणों की चेतना का समग्र रूप ही उसका ''जीवन'' है जहाँ पर वह निरन्तर अपनी पूर्णावस्था को प्राप्त करता है। यहाँ प्रश्न उठता है कि जीवन की चेतन शक्ति को हम क्या 'आत्मा' कह सकते है।

मेरे मत में जीव की चेतनावस्था का आत्मा से काई सम्बन्ध नही होता। जीवधारी जब अपना स्वाभाविक जीवन जीता है तो उसका यह स्वाभाविक प्राकृतिक जीवन उसकी चेतनता कारण नही है। वास्तव में हमे जीवों के उनके स्वाभाविक जीवन, उनके प्राकृतिक जीवन जीने की कला में ही आत्मा की खोज करनी है। इसके लिए हमे अपने आपको उसके अनुकूल वातावरण में लाना होगा। इस दिशा में हमें नैतिक रूप से मानसिक रूप से कर्म एवं कत्वर्य के क्षेत्र में प्रयास करने पर ही सफलता मिल सकती है। क्योंकि ''आत्मा की खोज'' का विषय मेरी समझ से निष्ठा से जुड़ा हुआ है। वास्तव में आत्म ज्ञान के लिए हमे एक ओर मानसिक रूप से राग और द्वेष से मुक्त होना होगा, वही दूसरी ओर कर्म के क्षेत्र में सत्य और नैतिकता की पहचान करनी होगी। अपने आपको चेतनावस्था में, मानसिक शान्ति की स्थिति में लाना होगा।

''आत्मा की खोज'' हम अपने जीवन में ही कर सकते है किन्तु तभी जब हम उस अवस्था मे हो उस वातावरण में हो जहाँ आत्मा है, जहाँ आत्मा का आस्तित्व है, उससे बाहर नही। क्योंकि आत्मिक वातावरण से बाहर हमे आत्मदर्शन नही हो सकते। तात्पर्य यह है कि जब जीव अपना स्वाभाविक जीवन, अपना प्राकृतिक जीवन नही जी पाता और उससे हटकर कार्य व्यवहार करता है तो हम कह सकते है कि उसकी आत्मा मर चुकी है हाँलाकि उस समय भी वह चेतनावस्था मे रहता है वस्तुतः चेतना का सम्बन्ध उसके जीवन से जुडा हुआ है क्योंकि चेतनता न रहने पर वह मृत प्रायः हो जाता है। वास्तव में आज हम जितना भी अनैतिक कार्य व्यभिचार, चोरी बेईमानी जैसे दुष्कर्मों को अपने जीवन में अपनाते जा रहे है, अपनी ही आत्मा की आवाज को अपने से दूर करते जा रहे है। हमारी अन्तरात्मा की आवाज अन्दर ही अन्दर घुट-घुट कर दम तोड़ती जा रही है। अपने प्रति भी और मानव मात्र के प्रति भी आत्मीयता मृत प्रायः होती जा रही है। इतना सब होने पर अब प्रश्न उठता है वह कौन से कारण है जहाँ आज भी कुछ लोग आत्मा की आवाज पर चल रहे है। मेरे विचार एवं विश्वास से वह विषय नैतिक है। सत्य, अहिंसा, सद्भाव, सदाचार निष्ठा जैसे शब्दों से उसका सम्बन्ध है। उसका नाता कर्तव्य से जुड़ा हुआ है और यही नैतिक बाते आज भी हमारी आत्मा को जिन्दा रखे हुए है। इस प्रकार हम देखते है कि जीवन में इन्ही नैतिक विषयों से आत्मा का सम्बन्ध है।

मैने आत्मा का, ईश्वर का नाता नैतिकता के साथ जोड़ा है, कर्म के साथ सम्बन्धित किया है। सत्यता में उसकी परख की है भ्रमवश ही सही, अज्ञानता के कारण ही सही ग्लानिवश ही सही, स्वामी मुक्तानन्द परमहंस जब अपनी योग साधना में नग्न स्त्री को देखते है, उस समय उनके मन में आत्महत्या जैसे भाव उठने लगते है और जब उन्हे कुण्डलनी का ज्ञान होता है, तब उनके मन में, उन्ही के प्रति श्रद्धा के भाव जागृत हो उठते है। कहने का तात्पर्य यह है कि सत्य का ज्ञान होते ही आत्मबल आ जाता है और जीवन को भोगने, जीवन को जीने के प्रति उनमें उत्साह आ जाता है। अपनी साधना के प्रति उनकी इच्छा शक्ति और अधिक प्रबल हो जाती है। वास्तव में जब यही सत्य कर्म और

नैतिकता के साथ जुड़ जाता है। तब हम जीवन को समझने लगते है और जो जीवन को समझ चुके है, जीवन दर्शन कर चुके है, उन्होने आत्मा की खोज कर ली है और ईश्वरीय दर्शन के प्रति अग्रसर है।

मेरे हिसाब से जीवन में ''नैतिकता'' को परिभाषित करते हमे उसे सीमित दायरों में नही बांधना है, उसे शारीरिक संयम, बुद्ध के अष्ठांगिक मार्गों तक ही सीमित नही करना है, उसे नीतिगत बन्धनों से भी नही बांधना है बल्कि से सत्य और कर्म के साथ, सद्भाव और सद्विचारों के साथ, श्रद्धा और प्रेमभाव के साथ एवं विशेषकर मानवीय कर्तव्यों के साथ नाता जोड़कर उसे सर्वोकृष्ट स्थान तक पहुंचा देना है। जहाँ पर जाकर हम अपने जीवन की जन्मजात शक्ति को समझने लगे। अपनी अन्तरआत्मा के साथ स्वयं साक्षात्कार करने लगे और इसी आत्मिक शान्ति को हृदयकाश में बैठाकर ईश्वर के दर्शन कर सके।

वस्तुतः वर्तमान समय में ईश्वर का साक्षात्कार नैतिकता के साथ जुड़कर ही किया जा सकता है। ईश्वर है तो नैतिकता में, ईश्वर है तो कर्तव्य में ईश्वर है तो प्रकृतिक सत्यों में, जीवन मूल्यों में वास्तव में जीवन का भोग करते हुए भी हम ईश्वरीय एहसास को प्राप्त कर सकते है।

वस्तुतः आत्मा और ईश्वर के मर्म को तो वही जान सकता है जो सांसारिक जीवन जीता है जो सत्य को पहचान चुका है जो नैतिक कर्म कर रहा है तभी व्यक्ति अपने जीवन को जान पायेगा अपनी आत्मा को खोज पायेगा, तभी वह दूसरों के जीवन को जान पायेगा तभी वास्तव में एक इन्सान दूसरे इन्सान से आत्म भाव से जुड़ पायेगा और यही आत्म भाव की व्यापकता संसार को जीने योग्य बनायेगी। सत्य पर आधारित जीवन आनन्दानुभूति का भण्डार होगी। यही आनन्दानुभूति आत्मभाव है, आत्मा है जब यही आनन्दानुभूति प्रकृति की व्यापकता में परिलक्षित होगी है वस्तुतः मेरे हिसाब से ''जीवन में आत्मा की खोज'' मानव मात्र का दर्शन है जीवन की आचार संहिता है और यही सर्वकालिक एवं सर्वदेशीय दर्शन है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. डॉ. वेद प्रकाश वर्मा, नीतिशास्त्र के मूल सिद्धांत
2. प्रो. एम. हिरियन्ना, भारतीय दर्शन की रूपरेखा
3. जय देव शल्य, मूल्य तत्व मीमांसा
4. राममूर्ति पाठक, भारतीय दर्शन की समीक्षात्मक रूपरेखा

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

खेलों में अपराध एक अध्ययन

• पवन कुमार पचौरी

सारांश- गुवाहाटी में सम्पन्न हुये राष्ट्रीय खेलों में भारतीय ओलम्पिक संघ द्वारा ऐसे 1000 खिलाड़ियों जिन्होंने किसी न किसी प्रतियोगिता में मैडल लिया हो का डोपिंग टेस्ट हेतु ब्लड सैम्पल लिया है। ऐसा इलाहाबाद आये जिम्नास्टिक के 7 खिलाड़ियों जिन्होंने मैडल प्राप्त किये का कहना है, मगर प्रश्न यह उठता है कि क्या अन्य खिलाड़ी उन्होंने मैडल प्राप्त नहीं किया है और चौथे पाँचवे, छठवें, सातवें आदि स्थानों पर आये और कहीं उन्होंने डोपिंग ली है तो क्या वे उस स्थान के हकदार है? और क्या इससे डोपिंग पर प्रतिबंध लगाया जा सकता है वहीं यह तथ्य भी शोधकार्य करते समय स्पष्ट हुआ है कि आयोजन स्थल पर डोपिंग की कोई व्यवस्था नहीं होती केवल नेहरू स्टेडियम दिल्ली स्थित वाडा द्वारा मान्यता प्राप्त एकमात्र भारत में लैब है। परंतु वहीं विश्वविद्यालय स्तर पर रैण्डम सैम्पलिंग चालू हो चुकी है। अभी दूर-दूर तक कोई सम्भावना नहीं है कि डोप टेस्ट लागू होगा और जो भी कीर्तिमान विश्वविद्यालय की अखिर भारतीय प्रतियोगिताओं में बने वे डोपिंग उपरान्त तो नहीं बने है? कहीं न कहीं यह प्रश्न भी मन में उठता है और कीर्तिमानों की प्रमाणिकता पर प्रश्नचिन्ह भी लगाता है शोध पत्र के आँकड़े यह दर्शाते हैं कि नशा और झगड़ालू प्रवृत्ति खिलाड़ियों में लगातार बढ़ रही है जो चिन्तनीय विषय है खिलाड़ियों का किसी हाल में जीतने के लिये निर्णायक, विरोधी टीम के खिलाड़ी यहां तक की दर्शकों तक से झगड़ना खिलाड़ी भावना व खेल भावना दोनों को ही क्षति पहुँचा रही है और खिलाड़ी इन समाज की बुराइयों को लगातार इस स्पर्धी माहौल में आत्मसात करते जा रहे हैं और क्रीड़ा जो मनोरंजन और स्वस्थ प्रतिस्पर्धा का माध्यम था आज शनै-शनै खेल में भी इन सामाजिक बुराइयों का समावेश तेजी से होता जा रहा है।

मुख्य शब्द- अपराध, डोपिंग टेस्ट, ब्लड सैम्पल, रैण्डम सैम्पलिंग

प्रस्तावना- क्रीड़ा के विकास का इतिहास मनुष्य के विकास के साथ-साथ परिवर्तित होता रहा है। यह जन्मजात नैसर्गिक प्रवृत्ति से शुरू होकर मनोरंजात्मक अभिव्यक्ति से फलती-फूलती आज के युग में प्रतिस्पर्धात्मक क्रीड़ा के रूप में विकसित हुई है। खेलों के इतिहास का प्रारम्भ 776 ई. पूर्व यूनानी गणराज्य ऐलिस की पहाड़ियों पर होने वाला वह आयोजन जिसे हम ओलम्पिक के नाम से जानते हैं के साथ प्रारम्भ होता है। जिसके बारे में हम अन्धे कवि होमर के लिखित 'ओडसी' और 'इलियट' ऐतिहासिक ग्रन्थों के माध्यम से जानते हैं। इसी आयोजन के साथ विश्व समुदाय में दो वाक्यों को विश्व बन्धुत्व और अनुशासन के रूप में ख्याति मिली जिनमें एक Sport Spirit (खेल भावना) और दूसरी

• विभागाध्यक्ष एवं एसोसिएट प्रोफेसर, शारीरिक शिक्षा विभाग, कुलभास्कर आश्रम पी.जी. कालेज, प्रयागराज

ैचवतज उंदैचपतपज (खिलाड़ी भावना) जिनके उदाहरण हम तमाम अन्य व्यवसायों में देते रहते हैं। और यही से स्वस्थ प्रतिस्पर्धा का भी चलन बढ़ा। लेकिन इन भावनाओं को कहीं न कहीं चोट पहुँची, और भ्रांतियाँ आने लगी तो रोम के सम्राट के आदेशानुसार ईसवी सन् 394 में इस गौरवमयी खेल परम्परा को बन्द कर देना पड़ा। बन्द करने के पीछे के कारणों में सट्टेबाजी और आपराधिक प्रवृत्ति तथा हिंसक क्रीड़ा व मादक पदार्थों का सेवन प्रमुख कारण था। सन् 1896 में सर कुबर्टिन महोदय के अथक प्रयासों से एथेन्स से नये रूप में फिर उस गौरवमयी ओलम्पिक परम्परा की शुरुआत हुई। परन्तु इसे भी विश्व युद्धों, अपराधों व नशीले पदार्थों के सेवन सम्बन्धी काली छाया ने अपने आगोश में ले लिया।

खेल अपराध एक ऐसा कृत्य है जो खेल समाज में रहने वाले खिलाड़ियों के द्वारा खेल के नियमों एवं कानूनों का उल्लंघन कर किया जाता है। अपराधी भी आपराधिक व्यवहार किसी न किसी मनोशारीरिक एवं मनोसामाजिक विकृति के कारण ही करता है, ठीक उसी प्रकार खिलाड़ी भी उपरोक्त विकृति के कारण खेल में अपराध करता है। शोधार्थी ने इन कारणों पर चर्चा न करते हुए खिलाड़ी की आपराधिक मनोवृत्ति एवं मादक पदार्थ के सेवन पर यह शोध पत्र पूर्ण किया है।

समस्या कथन एवं परिकल्पना- प्राचीन काल से ही खेल का अपराध, मादक पदार्थ के सेवन से प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से सम्बन्ध रहा है। प्राचीन यूनानी एथलीट अपने को उत्तेजित करने एवं शक्ति को बढ़ाने के लिए विशेष प्रकार के भोजन का जिसमें उत्तेजक पदार्थ सम्मिलित होते थे उसका प्रयोग किया करते थे। ईसवी सन् 394 में ओलम्पिक की गौरवमयी परम्पराओं के बन्द होने के कारणों के पीछे भी सट्टेबाजी, भाई भतीजावाद, अपराधिक क्रियाएँ मादक पदार्थों का सेवन और पेन क्रेटियम जैसी हिंसक क्रीड़ाओं की अधिकता ही था।

19वीं शताब्दी में साइक्लिस्ट प्रायः अपने दम-खम को बढ़ाने के लिए कैफीन क्रोमीन स्टायसिन स्पेराईट और अल्कोहल का प्रयोग करते थे। 1904 के ओलम्पिक में मैराथन विजेता थामस हिक्स ने कच्चे अन्डों की मदद से स्ट्रायसना इनइजेक्शन लिया और ब्राण्डी की भी डोज ली। यह दर्शाता है कि आधुनिक ओलम्पिक खेलों में आठ वर्षों के अन्दर ही मादक पदार्थों के सेवन की शुरुआत हो गयी प।।थ् ने सर्वप्रथम 1928 में खिलाड़ियों के मादक पदार्थ सेवन को प्रतिबन्धित किया। डेनमार्क के साइक्लिस्टि जोंस की मृत्यु के उपरान्त थ्प्थ्। एवं न्ब्प् ने 1966 में अपनी अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता में मादक पदार्थों के सेवन को प्रतिबन्धित किया।

आज भी विश्व जगत में मैराडोना, बेन जानसन, शेन वार्न, हैन्सी क्रोनये, अजहरुद्दीन, माइक टायसम, इंजमाम उल हक, डारेल हेपर, सुशील कुमार आदि के नाम अपराधिक गतिविधियों में संलिप्तता एवं मादक पदार्थ के उपयोग को प्रदर्शित करते हैं। वर्ल्ड डोपिंग एजेंसी वाडा के आँकड़ों के अनुसार 2019 में भारत नम्बर एक पर है। यह शोध पत्र शून्य परिकल्पना पर आधारित है।

महत्व- भारतीय परिदृश्य भी इससे अछूता नहीं है। समय-समय पर विभिन्न प्रतियोगिता के समाचारों में इससे सम्बंधित घटना प्रकाशित होती रही है। दुर्भाग्य की बात है 11 फरवरी, 2007 से गुवाहटी में प्रारम्भ हुए राष्ट्रीय खेलों में भी खिलाड़ियों की अपराधिक पृष्ठभूमि एवं मादक पदार्थ के सेवन सम्बन्धी कोई ठोस कदम नहीं उठाये गये। 2019 में भारत नम्बर एक पर आ गया वाडा की टेस्टिंग में 225 खिलाड़ी फसें, साल 2018 में भारत चौथे स्थान पर था। 2019 में 35 एथलिट एवं 32 वेटलिफ्टर डोप पाजीटिव पाये गये। 12 कुश्ती मे भी पाये गये,

वही अमेरिका दूसरे नम्बर पर है।

शोध के माध्यम से विश्वविद्यालयीन खिलाड़ियों की अपराध में संलिप्तता एवं मादक पदार्थों के सेवन सम्बन्धी आंकड़े एकत्र कर निष्कर्ष के माध्यम से वर्तमान स्थिति के सम्बन्ध में विश्लेषण करते हुए सुझावों द्वारा वस्तु स्थिति क्या है तथा इसमें कैसे कमी लायी जा सकती है। इस पर गम्भीर चर्चा की गई है और कुछ निष्कर्ष निकाले गये हैं। यही शोध पत्र का महत्व है।

न्यादर्श एवं सीमांकन:-

उ.प्र. एवं म.प्र. के क्रमशः वाराणसी, झांसी, प्रयागराज एवं मध्य प्रदेश के रीवा सम्भागों के 100 विश्वविद्यालयीन खिलाड़ियों जिनकी आयु 18 से 25 वर्ष है, से अनुसूची के माध्यम से आँकड़े एकत्र कर निष्कर्ष निकाले गये हैं।

पूर्व अध्ययनों का विश्लेषण-

1. वैसे तो समस्त खेल संघों एवं अन्तर्राष्ट्रीय ओलम्पिक संघ द्वारा डोपिंग और अन्य अपराधों पर प्रतिबन्ध लगाया जा चुका है, फिर भी यह सब आपराधिक कृत्य खेलों में होते रहते हैं और इन पर समाचार पत्रों में आलेख व शोध हो चुके हैं। उनका संक्षिप्त अंश यहां पर शोधार्थी द्वारा दिया जा रहा है। इण्डिया टुडे मासिक पत्रिका 2004 के एक सर्वे अनुसार जिन खिलाड़ियों को प्रतिबंधित नशीली दवाईयों का सेवन करते पाया गया हो वह निम्नलिखित हैं। अमर मुरलीधरन तैराकी, लक्ष्मण सिंह नौकाचालन, अमनदीप सिंह जेवलीन थ्रो, सुखविन्दर सिंह त्रिकद, कत्याणी अल्पत्ति–400 मी. बाधा दौड़, जगदीश वंशांक 100 मी. बाधा दौड़, महा सिंह लम्बी कूद आदि 14 (चौदह) खिलाड़ियों की सूची प्रकाशित की गयी थी।
2. वेंकर डब्लू 1972 ने अपने 1000 (एक हजार) खिलाड़ियों पर शोधों में पाया कि सबसे ज्यादा ओलम्पिक में ट्रैक एण्ड फील्ड के खिलाड़ियों द्वारा मादक पदार्थों का सेवन होता है, इसमें उपरान्त भारोत्तोलन, साइकिलिंग, घुड़दौड़ व अन्य खेलों का नाम आता है।
3. अभी हाल में समाचार पत्रों व चौनलों ने नागपुर क्रिकेट मैच के दौरान वेस्टइंडीज खिलाड़ी मार्वन शेमुअल का नाम सामने आया है।
4. माइक टायसन ने अपने अन्तर्राष्ट्रीय हेवीवेट बाक्सिंग चौम्पियनशिप के मुकाबले में हार से घबराकर होलीफील्ड का कान काट लिया था।
5. अन्तर्राष्ट्रीय अर्जेंटीना के फुटबाल खिलाड़ी मैराडोना को मादक पदार्थ की स्मगलिंग में सजा हुई।

शोध पद्धति का विवरण- यह शोध पत्र विश्लेषणात्मक पद्धति का है शोध में प्राथमिक एवं गौण तथ्य सामग्रियों का प्रयोग करते हुए अनुसूची को सांख्यकीय आधार पर बनाकर प्रतिशतांक के माध्यम से उ. प्र. एवं म. प्र. के प्रयागराज, वाराणसी, झांसी एवं मध्य प्रदेश के रीवा संभाग के विश्वविद्यालयीन खिलाड़ियों को अनुसूचित वितरित कर आंकड़ों को एकत्रित कर किया गया है।

आँकड़े का सारणीयन- आँकड़ों की सारणी बनाने व उनके प्रश्नोत्तरों का सांख्यकीय आधार पर प्रतिशतांक निकालने से पहले शोधार्थी खिलाड़ियों को वितरित की गई अनुसूची में पूछे गये प्रश्नों को वर्णित किया जा रहा है जिससे कि सारणी के अध्ययन में सरलता हो सके। अनुसूची निम्नानुसार है।

प्राप्त आँकड़ों की सारणी

पृ. क्र.	खिलाड़ियों की सं. राज्य स्तर एवं वि. वि. स्तर पर	हाँ में उत्तर	प्रतिशत	हाँ में उत्तर	प्रतिशत	सम्पूर्ण योग प्रतिशत में
1.	100	95	95	5	5	100
2.	100	81	81	19	19	100
3.	100	22	22	78	78	100
4.	100	73	73	27	27	100
5.	100	52	52	48	48	100
6.	100	30	30	70	70	100
7.	100	18	18	82	82	100
8.	100	13	13	87	87	100
9.	100	66	66	34	34	100
10.	100	17	17	83	83	100
11.	100	84	84	16	16	100
(i)		34 शौकिया	40			
(ii)		38 आदतन	45			
(iii)		12 खेल के लिये	15			
12.		100	100	00	00	00
13.		53	53	47	47	100
14.		93	93	7	7	100
(i)		43 कम	47			
(ii)		30 सामान्य	32			
(iii)		20 अत्यधिक	21			
15.		67	67	33	33	100
16.	100	84	84	16	16	100
(i)		56 धूम्रपान	66	28	37	
(ii)		06 गांजा	24			
(iii)		00 स्मैक	27			
(iv)		02 अफीम	00			
(v)		00 ब्राउन शुगर	03			
(vi)		00 चरस	00			
(vii)		00 हेरोइन	00			
17.	100	25	25	75	75	100
(i)		12उत्तेजना बढ़ाना				
(ii)		08 दर्द नाशक				
(iii)		02 एनावोलिक टेस्ट				
(iv)		03 बीटा ब्लाकर				
(v)		03 टयूरेटियस				
(vi)		00 पेप्टाइड				
(vii)		00 हार्मोन्स				
(viii)		00 ब्लड डोपिंग				

समंकों का विश्लेषण एवं निष्कर्ष- शोध विषय खेल में अपराध एवं खिलाड़ी द्वारा पदार्थ सेवन (एक अध्ययन विश्वविद्यालयीन खिलाड़ियों पर) की सारणी उपरान्त शोधार्थी ने अध्ययन की सरलता को दृष्टिगत रखते हुए खिलाड़ियों द्वारा दिये गये प्रश्नों के उत्तरों का एक-एक

कर विश्लेषण एवं निष्कर्ष प्रस्तुत किया है।

प्र.सं. 1 : सारणीयिन के आधार पर 100 खिलाड़ियों से पूछे गये सार्वजनिक जीवन में झगड़े सम्बंधी में 95 प्रतिशत ने हाँ में तथा 5 प्रतिशत ने नहीं में जवाब दिया।

निष्कर्ष- शोध आँकड़ों का विश्लेषण दर्शाता है कि 95 प्रतिशत यानी एक बहुत बड़ा खिलाड़ियों का भाग सार्वजनिक जीवन में कभी न कभी झगड़े आदि में संलग्न रहा है। और इसका भी प्रभाव कहीं न कहीं खेलों की प्रतियोगिताओं पर परिलक्षित होता है।

प्र.सं. 2 : अध्ययन के दौरान किसी अन्य के झगड़े में सम्मिलित होने सम्बंधी प्रश्न का 81 प्रतिशत अर्थात् 100 में 81 विश्वविद्यालयीन खिलाड़ियों ने हाँ में तथा 19 प्रतिशत ने नहीं में उत्तर दिया है।

निष्कर्ष- आँकड़ों के विश्लेषण से यह तथ्य भी परिलक्षित हुआ है कि खिलाड़ी अध्ययन काल में दूसरों के झगड़े में भी बड़ी संख्या में शामिल होते हैं, इससे पता चलता है कि अपने शारीरिक बल का कहीं न कहीं गलत उपयोग कर रहे हैं।

प्र.सं. 3 : झगड़े की थाने में शिकायत पंजीकृत होने सम्बन्धी उत्तर में 100 खिलाड़ियों में ले 22 अर्थात् 22 प्रतिशत ने स्वीकार किया है कि उनकी शिकायत थाने में पंजीकृत हुई है।

निष्कर्ष- निष्कर्ष खिलाड़ियों की दादागिरी को यहां प्रदर्शित कर रहा है जिन 100 खिलाड़ियों से आँकड़े लिये गये हैं उनमें से 22 ने स्वीकार किया है कि वे थाने तक गये हैं अर्थात् अत्यधिक वारदातों में सम्मिलित हुए हैं। जो खेल भावना व खेल से संवेगों में नियन्त्रण को क्षति पहुँचाता है और सिद्धु, माईक टाइसन, शोयब अख्तर, . जिड़ान आदि की हिंसक मानसिकता को सिद्ध करता है।

प्र.सं. 4 : विरोधी खिलाड़ियों से खेल के दौरान हाथापाई सम्बन्धी प्रश्न का 100 में से 73 खिलाड़ियों अर्थात् 73 प्रतिशत ने हाँ में जवाब दिया है। 27 प्रतिशत ने नहीं में उत्तर दिया है।

निष्कर्ष – 73 प्रतिशत का हाँ जवाब यह दर्शाता है कि खेल प्रतियोगिता के दौरान मैत्री भाव जैसी सामाजिक शब्दावली को कहीं न कहीं क्षति पहुँचती है यह खिलाड़ियों की अपराधिक मानसिकता व क्रोधी स्वभाव को भी दर्शाती है।

प्र.सं. 5 : खेल के दौरान नियमों की अवहेलना सम्बन्धी प्रश्न का 52 प्रतिशत ने हाँ में जवाब दिया है।

निष्कर्ष- आँकड़ों के विश्लेषण से यह तथ्य भी स्पष्ट हुआ है कि खिलाड़ियों के एक बड़े तबके ने कभी न कभी नियम पालन व अनुशासन का भी उल्लंघन किया है। जो खेल से अनुशासन व नियम बद्धता की भावना को भी क्षति पहुँचाती है।।

प्र.सं. 6 : निर्णायक से हाथापाई सम्बन्धी प्रश्न का भी 30 प्रतिशत अर्थात् 100 में 30 खिलाड़ियों ने हाँ में जवाब दिया है और 70 प्रतिशत ने नहीं में।

निष्कर्ष- विश्लेषण द्वारा प्राप्त आँकड़े यह प्रदर्शित कर रहे हैं कि 100 में 30 जिन्होंने प्रतियोगिता के दौरान निर्णायक से झगड़ा एवं हाथापाई की है। यह भी उनकी हिंसक प्रवृत्ति एवं शारीरिक बल के गुरूर को कहीं न कहीं प्रदर्शित कर रहा है। मगर 70 प्रतिशत खिलाड़ी ऐसे भी हैं जो अनुशासन व खेल भावना का परिचय देते हुए सहज रूप से निर्णायक के निर्णय को स्वीकार करते हैं।

प्र.सं. 7 : अपराधिक प्रकरण न्यायालय में विचाराधीन सम्बंधित प्रश्न का उत्तर 18 प्रतिशत अर्थात् 100 में से 18 खिलाड़ियों ने हाँ में जवाब है और 82 प्रतिशत खिलाड़ियों का नहीं में।

निष्कर्ष- विश्लेषण द्वारा प्राप्त आँकड़े यह दर्शाते हैं कि उपर्युक्त अनुसूचियों में झगड़ा थाने में शिकायत, प्रतियोगिता के दौरान हाथापाई, एवं निर्णायक का विरोध करने पर, 18 प्रतिशत यानी 100 में से 18 खिलाड़ियों के मामले की थाने में की गयी शिकायत न्यायालय तक पहुंची है। वहीं एक बड़ा खिलाड़ियों का समूह इन विषम स्थितियों से दूर रहते हुए खेल को सुचारू रूप से चलाने में सहायता प्रदान करते हैं।

प्र.सं. 8 : विश्वविद्यालय की टीम से निष्काषित किये जाने सम्बंधी प्रकरण में 13 खिलाड़ियों ने हाँ तथा 87 प्रतिशत खिलाड़ियों ने नहीं में जवाब था।

निष्कर्ष - आँकड़ों के विश्लेषण का निष्कर्ष प्रदर्शित कर रहा है कि बहुत बड़ा समूह तो नहीं लेकिन 13 ऐसे खिलाड़ी भी है जो कि विश्वविद्यालय में अनुशासनहीनता करने पर एवं नियमों की अवहेलना करने पर निर्णायक एवं कोच से मारपीट करने पर विश्वविद्यालय टीम से बहिष्कृत किये गये है। 87 प्रतिशत खिलाड़ी खेल में अनुशासित रहकर खेलों में अपना योगदान दे रहे हैं।

प्र.सं. 9 : जान बूझकर विरोधी खिलाड़ियों को चोट पहुँचाने का 66 प्रतिशत अर्थात् 100 में 66 खिलाड़ियों ने हाँ में जवाब दिया है और 34 खिलाड़ियों ने ना में जवाब दिया है।

निष्कर्ष : आँकड़े दर्शा रहे है कि खिलाड़ियों की हिंसक मानसिकता बढ़ रही है और वो येन-केन प्रकारेण केवल जीतने की इच्छा ही रखते हैं और उस दौरान उन्हें विरोधी खिलाड़ी को चोट भी पहुंचाने पड़े तो उन्हें इस बात का कोई प्रभाव नहीं पड़ता जो हार व जीत पर समान व्यवहार वाली भावना को भी नकारता है मगर 34: इस भावना को आत्मसात करते हुए स्वस्थ प्रतिस्पर्धा की भावना से खेल खेलते हैं।

प्र.सं. 10 : हारने व जीतने पर सट्टेबाजी सम्बन्धी प्रश्न के जवाब में 100 में से 17 प्रतिशत खिलाड़ी हां में जवाब देते हैं। वहीं 83 प्रतिशत खिलाड़ी इस अपराध से दूर रहते हैं। अर्थात् उनका जवाब नहीं में आता है।

निष्कर्ष : हारने व जीतने पर सट्टेबाजी कर टीम को हानि पहुँचाने वाले प्रश्न के जवाब में 100 में 17 खिलाड़ियों ने इस बात को ईमानदारी से स्वीकार है कि कभी न कभी उन्होंने प्रतियोगिता में अपने प्रदर्शन के माध्यम से अपनी ही टीम को क्षति पहुँचाने का प्रयास किया है। जो पैसों के लेन देन एवं लालच को इस स्तर पर भी प्रदर्शित करता है।

प्र.सं. 11 : नशीले पदार्थ के सेवन से सम्बन्धित प्रश्न के जवाब में 84 प्रतिशत खिलाड़ियों ने हाँ में जवाब दिया है जिनमें 34 खिलाड़ी शौकिया तौर पर 38 खिलाड़ी आदतन एवं 12 खिलाड़ी प्रदर्शन बढ़ाने के लिए नशीले पदार्थों का सेवन कर रहे है। 100 में 16 प्रतिशत खिलाड़ी ऐसे भी हैं जिनका उत्तर नहीं में है।

निष्कर्ष रू निष्कर्ष शोध आँकड़ों का विश्लेषण दर्शाता है कि 100 में 84 प्रतिशत खिलाड़ी नशीले पदार्थों के सेवन से ग्रसित है। जिनमें कि 34 खिलाड़ी अर्थात् 40 खिलाड़ी शौकिया, 38 खिलाड़ी अर्थात् 45 प्रतिशत आदतन एवं 12 खिलाड़ी अर्थात् 15 प्रतिशत खिलाड़ी अपने प्रदर्शन को बढ़ाने के लिए नशीले पदार्थों का सेवन कर खेल में होने वाले अपराधों को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से बढ़ावा दे रहे हैं।

प्र.सं. 12 : नशीले पदार्थों के सेवन से स्वास्थ्य एवं खेल पर बुरा प्रभाव पड़ता में है। इस प्रश्न के जवाब में 100 में सभी खिलाड़ियों ने हाँ में जवाब दिया है। अर्थात् सम्पूर्ण खिलाड़ी इस तथ्य को समझते हैं।

निष्कर्ष : आँकड़ों का विश्लेषण यह निष्कर्ष दे रहा है कि सम्पूर्ण खिलाड़ियों को यह जानकारी है कि नशीले पदार्थों के सेवन से स्वास्थ्य एवं खेल पर बुरा प्रभाव पड़ता है फिर भी जाने अनजाने में इनके द्वारा यह कृत्य हो रहा है जो खेलों की गरिमा को सम्पूर्ण विश्व पटल पर कम कर रहा है।

प्र.सं. 13 **:** मादक पदार्थों की जानकारी के सम्बन्ध में पूछे गये प्रश्न के जवाब में 53 प्रतिशत खिलाड़ी जानकारी रखते हैं वहीं 47 प्रतिशत खिलाड़ी ऐसे भी हैं जो मादक पदार्थों की जानकारी है कि वे कौन–कौन हैं इससे अनभिज्ञ है।

निष्कर्ष- आँकड़ों के सारणीयन उपरान्त विश्लेषण से यह तथ्य भी परिलक्षित हुआ है कि 53**:** खिलाड़ी अपने खेल जीवन के दौरान मादक पदार्थों से ग्रसित रहते हैं। या इसके सन्दर्भ में जानकारी रखते हैं। वहीं इस समूह से थोड़े कम खिलाड़ी मादक पदार्थों से अनभिज्ञ हैं। इन आँकड़ों से हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि मादक पदार्थों की जानकारी समूहों के अधिकतर हिस्से को है।

प्र.सं. 14 **:** मादक पदार्थों के सेवन की जानकारी के सन्दर्भ में 93 प्रतिशत खिलाड़ियों ने जानकारी होने की बात स्वीकारी है। वहीं 7 प्रतिशत खिलाड़ियों अर्थात् 100 में 7 खिलाड़ी हैं जिन्होंने इसका उत्तर नकारात्मक रूप में दिया है।

निष्कर्ष- आँकड़ों का विश्लेषण प्रदर्शित कर रहा है कि 93 प्रतिशत खिलाड़ी मादक पदार्थों की जानकारी रखते हैं। जिनमें 43 खिलाड़ी अर्थात् 47 प्रतिशत कम जानकारी 30 खिलाड़ी अर्थात् 32 प्रतिशत सामान्य जानकारी एवं 20 अर्थात् 21 प्रतिशत खिलाड़ी अत्यधिक रूप से इस व्यसन की जानकारी रखते हैं।

प्र.सं. 15 **:** खेल प्रदर्शन को बढ़ावा देने के सन्दर्भ में पूछे गये प्रश्न के जवाब में 67 प्रतिशत अर्थात् 100 में 67 खिलाड़ियों ने हाँ में तथा 33 खिलाड़ियों ने नहीं में उत्तर दिया है।

निष्कर्ष- विश्लेषण द्वारा प्राप्त आँकड़े यह दर्शाते हैं कि खिलाड़ियों का एक बहुत बड़ा समूह अपने खेल प्रदर्शन को बढ़ाने के लिए मादक पदार्थों का सेवन करता है। यह मादक पदार्थ खिलाड़ी पर किस तरह प्रभाव डालते हैं। यह खिलाड़ी की क्षमता पर निर्भर करता है। वहीं खिलाड़ियों का 33 फीसदी समूह ऐसा भी है जो अपने स्वाभाविक प्रदर्शन क्षमता पर निर्भर करता है। वहीं खिलाड़ियों का 33 फीसदी समूह ऐसा भी है जो अपने स्वाभाविक प्रदर्शन क्षमता से अपनी टीम को लाभ पहुंचाना चाहते हैं न कि मादक पदार्थ सेवन में सम्मिलित होकर।

प्र.सं. 16 **:** मादक पदार्थों के सेवन की जानकारी में सकारात्मक रूप में 84 प्रतिशत खिलाड़ी रहे हैं। वहीं 16 प्रतिशत खिलाड़ी मादक पदार्थों के सेवन को चिन्हित करने में असफल रहे हैं।

निष्कर्ष : आँकड़े के सारणीयन उपरान्त विश्लेषण से यह तथ्य परिलक्षित हुआ है कि मादक पदार्थों का सेवन खिलाड़ी अलग–अलग पदार्थों के रूप में करते हैं। जिनमें धूम्रपान करने वाले 56 खिलाड़ी अर्थात् 66 प्रतिशत एल्कोहल का सेवन करने वाले 20 अर्थात् 24 प्रतिशत गांजा का सेवन करने वाले 6 अर्थात् 7 प्रतिशत अफीम लेने वाले 2 अर्थात् 3 प्रतिशत और स्मैक, ब्राउन शुगर, चरस, हेरोइन इत्यादि मादक पदार्थों का सेवन करने वाले की संख्या एक भी नहीं पायी गयी।

प्र.सं. 17 **:** वाड़ा द्वारा प्रतिबन्धित दवाईयों की जानकारी के सन्दर्भ एवं द्य प्रतियोगिता से पहले इनके सेवन करने वालों की संख्या 25 प्रतिशत यानी 100 में 25 खिलाड़ी थी वहीं इनमें 75 खिलाड़ी इस प्रकार के प्रतिबंधित मादक पदार्थों के सेवन से दूर रहते हैं।

निष्कर्ष – आँकड़ों के विश्लेषण से यह स्पष्ट हो जाता है कि 100 में से 25 खिलाड़ी ऐसे हैं। जो कि वाड़ा द्वारा प्रतिबन्धित मादक पदार्थों का सेवन एवं प्रतियोगिता से पूर्व इनका उपयोग करने में भी इनको संकोच नहीं है। जिनमें 12 खिलाड़ी अर्थात् 48 प्रतिशत खिलाड़ी उत्तेजना बढ़ाने वाली दवाईयां 8 खिलाड़ी अर्थात् 32 प्रतिशत दर्द नाशक दवाएँ, 02 खिलाड़ी 8 प्रतिशत एनाबोलिक टेस्टराइट 03 खिलाड़ी अर्थात् 12 प्रतिशत बीटा ब्लॉकर्स का सेवन करते हैं, वहीं ड्यूरेटिक्स, पेप्थराइट हार्मोन्स, ब्लड डोपिंग, सीनीकस प्रेटिक्स, कार्डियोस्राइड का कोई भी सेवन नहीं करता है। खेल समाज से जुड़े तीन चौथाई खिलाड़ियों का इन प्रतिबन्धित दवाइयों से दूर–दूर तक का लेना–देना नहीं है ऐसा शोध आँकड़े प्रदर्शित करते हैं। जो कि खेल संचालन व्यवस्था एवं खेल समाज को सही रूप से गति व दिशा दे रहे हैं। नहीं तो स्थिति पाकिस्तान क्रिकेट टीम के ताजा उदाहरण स्वरूप शोएब अख्र एवं मोहम्मद आसिफ की जैसे होती इस प्रकार से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि मादक पदार्थों के सेवन द्वारा खिलाड़ियों के समाज पर बुरा प्रभाव पड़ा है जिस कारण राज्य, राष्ट्र एवं सम्पूर्ण विश्व के खेल जगत को इस अपराधिक कृत्यों के कारण क्षति उठानी पड़ रही है।

सुझाव– सुझाव इस शोध पत्र के आँकड़ों से जो प्रश्न एवं समस्याएं सामने आयी है, उन पर सुझाव प्रस्तुत करना इन समस्याओं के निराकरण एवं प्रश्नों के उत्तरों के लिए अतिआवश्यक है, वे सुझाव निम्नानुसार है।

1. जहाँ भी राष्ट्रीय प्रतियोगितायें हो चाहे वो विश्वविद्यालयीन हो ओपेन हो या आमंत्रित कप हों उनमें डोप टेस्ट सभी खिलाड़ियों का होना अनिवार्य कर देना चाहिए इसके लिये सरकार को हर हाल में केन्द्रीय बजट में प्रावधान करना चाहिए।
2. हर राज्य में राज्य ओलम्पिक एशोसिएशन और स्पोर्ट एथारिटी ऑफ . इण्डिया के द्वारा डोपिंग टेस्ट लैब बनायी जानी चाहिए।
3. अपराधिक प्रवृत्तियों वाले एवं प्रशिक्षक खिलाड़ियों या अन्य से झगड़ा करने वाले खिलाड़ियों को तत्काल खेल से निष्कासित कर उनके सर्टीफिकेट और मैडल वापस लेना चाहिए।
4. टीम मैनेजरों एवं प्रशिक्षकों का उत्तरदायित्व है कि वे अपने खिलाड़ियों को समझाये कि वे अपने क्रोध पर संयम रखे।
5. राष्ट्रीय स्तर पर खेले जाने वाली प्रतियोगिता से पहले एक कार्यशाला आयोजित कर खिलाड़ियों को हिंसात्मक व्यवहार न करने का मनोवैज्ञानिक सुझाव परामर्शदाता द्वारा देना आवश्यक किया जाना चाहिए।
6. खिलाड़ियों को डोपिंग की श्रेणी में आने वाली मेडिकल दवाओं के बारे में जानकारी देने एवं उन्हें जागरुक करने हेतु सेमिनार, क्लिनिक को आयोजित करना चाहिए और प्रतियोगिता में जाने से पहले इसकी पूर्ण जानकारी उन्हें दे देनी चाहिए।
7. जो खिलाड़ी अपने कोच से झगड़ा करता है या महाविद्यालय में अपराधिक गतिविधियों में सम्मलित होता हो उसे उस महाविद्यालय के क्रीड़ा अधिकारियों एवं विश्वविद्यालय के संचालक शारीरिक शिक्षा एवं प्राचार्य को तत्काल महाविद्यालय व विश्वविद्यालय की टीम से जब तक वह सुधर न जाय प्रतिबंधित कर देना चाहिए।

8. ऐन केन प्रकारेण जीतने की प्रवृत्ति को हतोत्साहित करने का उत्तरदायित्व भी जिम्मेदार अधिकारियों का है उन्हें इस हेतु सकारात्मक प्रयास करना चाहिए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. सिंह अमजेर एण्ड जगतार सिंह गिल, जगदीश वैश्य, सतपाल सिंह बराड, निर्मलजीत राठी लिखित "शारीरिक शिक्षा एक परिचय" कल्याणी पब्लिकेशन
2. घोष आलोक हैण्डबुक ऑफ स्पोर्ट्स मेडिसिन और फिजिकल फिटनेश
3. डॉ. शर्मा आर. के. खेल क्रिया एवं औषधि विज्ञान
4. डॉ. शैलजा, डॉ. जैन जवाहर लाल ड्रक्स इन स्पोर्टस (डिक्सनरी) 2004
5. राय पारसनाथ अनुसंधान एक परिचय।
6. कमलेश एवं संग्राल शारीरिक शिक्षा के सिद्धान्त एवं इतिहास।
7. डॉ. कंवर आर. सी. शारीरिक शिक्षा का इतिहास अमित ब्रदर्श प्रकाशन
8. इण्डिया टुडे मासिक पत्रिका 2004
9. प्रतियोगिता दर्पण खेल अतिरक्तॉंक 2005, 06, 07
10. डॉ. पचौरी पवन कुमार शोध ग्रन्थ रीवा के उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में शारीरिक शिक्षा कार्यक्रमों का आलोचनात्मक अध्ययन महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ बनारस द्वारा प्रदत्त 2001
11. नेगी रंजन लघु शोध ग्रन्थ विश्वविद्यालयीन स्तरीय खिलाड़ियों में मादक पदार्थों व उनके प्रभाव सम्बंधी जानकारी का अध्ययन, अ. प्र. सि. वि. वि. रीवा के शारीरिक शिक्षा विभाग द्वारा प्रदत्त 2005

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

रीवा विकासखण्ड के अंतर्गत ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं की बालिका शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन

•रीता निगम
•पी. एन. मिश्र

सारांश- शिक्षा एक चिरंतन प्रक्रिया है। जो शरीरिक एवं मानसिक दृष्टि से विकसित स्वतंत्र एवं चेतनाभूति मानव को ईश्वर के प्रति उच्च अनुकूलन कराती है। हमारा देश लोकतांत्रिक देश है, इसलिए शिक्षा को प्राप्त करने का अधिकार बालक एवं बालिकाओं को समान रूप से है, हमारे देश में ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाली महिलाओं का शैक्षिक स्तर निम्न है, प्राचीन काल से ही महिलाओं की शिक्षा स्थिति अलग-अलग रही है। क्योंकि हमारा देश पुरुष प्रधान समाज का रहा है, इस कारण से महिलाओं द्वारा शिक्षा के महत्व को नजर अंदाज किया गया एवं अपनी अगली पीढ़ी को भी शिक्षा प्रदान करने में पीछे रही परिणाम स्वरूप बालिका शिक्षा का स्तर भी निम्न ही रहा, इसलिए बालिका शिक्षा के प्रति ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं को जागरूक करने हेतु प्रस्तुत शोध कार्य में जोर दिया गया है। जिससे बालिकाएं शिक्षा प्राप्त कर सकें, उनके विद्यालय में नामांकन एवं साक्षरता दर में वृद्धि हो, बालिकाओं की महिला अभिभावक की सोच बालिका शिक्षा के प्रति सकारात्मक हो, वो शिक्षा के महत्व को जाने रूढ़िवादी परंपराओं को पीछे छोड़ कर पुरुषों के बराबर स्थान प्राप्त कर सकें। इस हेतु साक्षात्कार, अभिलेख अवलोकन एवं प्रश्नावली के माध्यम से प्रदत्त का संकलन कर परिणाम एवं निष्कर्ष प्राप्त किए गये हैं। जिससे रीवाविकासखण्ड के अंतर्गत ग्रामीण क्षेत्र के विद्यालयों, उनमें अध्ययनरत बालिकाओं, उनकी महिला अभिभावकों की शिक्षा के प्रति धारणा का आकलन हो पाएगा। बालिका शिक्षा में आने वाली समस्याओं से अवगत हो सकेंगे वहां की स्थिति एवं परिस्थितियों की जानकारी प्राप्त हो पाएगी। रीवा विकासखण्ड के अंतर्गत ग्रामीण क्षेत्रों में रूढ़िवादी परंपराएं व्याप्त है, जो महिलाओं को जकड़े हुई है, इसलिए उस क्षेत्र की शिक्षा स्थिति में सुधार लाने की आवश्यकता हेतु प्रस्तावित विषय को चयनित किया गया है।

मुख्य शब्द- शिक्षा, प्रक्रिया, अभिवृत्ति, रूढ़िवादी परंपराआ

प्रस्तावना- ''ज्ञानं तृतीयं मनुजस्य नेत्रं'' ज्ञान मनुष्य का तीसरा नेत्र है अर्थात ज्ञान के द्वारा ही मनुष्य के अंत:चक्षु खुल जाते हैं और उसे आध्यात्मिक तथा अलौकिक प्रकाश मिलता है। जो प्रत्येक मानव के विकास का लक्ष्य है। शिक्षा मानव जीवन का प्रमुख अंग है। यह मानव समाज की प्रमुख विशेषता है, शिक्षा के बिना मानव अधूरा है और शिक्षा ही उसे पशुत्व के संकीर्णघेरे से निकालकर देवत्व के उच्च शिखर पर पहुँचाती है।

• शोधार्थी-शिक्षा, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा (म. प्र.)
•• प्राध्यापक, शासकीय शिक्षा महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)

विभिन्न पहलुओं का पोषक होता है, वर्तमान में शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य का सर्वांगीण विकास कर आदर्श नागरिक बनाना है। ''शिक्षा एक चिरंतनप्रक्रिया है'' जो शारीरिक और मानसिक दृष्टि से विकसित स्वतंत्र एवं चेतनाभूति मानव को ईश्वर के प्रति उच्च अनुकूलन कराती है। अरस्तू के अनुसार ''शिक्षा मनुष्य की शक्ति का विशेष रूप से मानसिक शक्ति का विकास करती है, जिससे कि वह परम सत्य, शिव और सुंदरम् का चिंतन करने योग्य बन सके।''[1] कृष्णमूर्ति ने लिखा है कि ''शिक्षा केवल ज्ञान को अर्जित करना तथ्यों को इकट्ठा करना तथा संबंधित करना नहीं है यह तो संपूर्ण जीवन के महत्व को देखना है।''

हमारा देश लोकतांत्रिक देश है, इसलिए शिक्षा को प्राप्त करने का अधिकार बालक एवं बालिकाओं को समान रूप से है चाहे वो किसी भी राज्य, धर्म, जाति, लिंग, भाषा के हो, किसी भी शिक्षण संस्था में शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं। बालिकाओं को अच्छी से अच्छी शिक्षा प्रदान करके उनका भी विकास किया जा सकता है, जिससे हमारा समाज भी विकसित होगा एवं बालिकाओं में जागरुकता आएगी। शिक्षा के द्वारा ही महिलाओं की बालिका शिक्षा के प्रति रूढ़िवादी संकुचित दृष्टिकोण एवं सोच भी परिवर्तित होगी प्राचीन भारत में स्त्रियों को अत्यधिक आदर, सम्मान, प्रेम प्रदान किया जाता था, उन्हें पूज्य माना जाता था चाहे वह पुत्री के रूप में हो, मां के रूप में हो, या बहन के रूप में हो, उनके हर स्थान का सम्मान किया जाता था।-मनुस्मृति के वचनानुसार[2]

''यत्र नार्यस्तु पूज्यते रेमंते तत्र देवताः।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः।।''

अर्थात-जहाँ स्त्री जाति का आदर सम्मान होता है, उनकी आवश्यकता और अपेक्षाओं की पूर्ति होती है, उस स्थान, समाज, परिवार पर देवतागण प्रसन्न रहते हैं। प्राचीन काल से अब तक स्त्रियों की दशा पर दृष्टि डालें तो ज्ञात होगा, कि विभिन्न कालों में शिक्षा के संदर्भ में स्थिति अलग-अलग रही है। वर्तमान में ग्रामीण महिलाओं के क्रियाकलाप घर गृहस्थी तक सीमित हो गए हैं, अभी भी महिलाओं को पुरुषों के बराबर अधिकार और स्वतंत्रता प्राप्त नहीं है, ना ही किसी प्रकार के निर्णय लेने की स्वतंत्रता प्राप्त है क्योंकि हमारा समाज विगत कई वर्षों से पुरुष प्रधान समाज रहा है।

वर्तमान में स्त्रियाँ कई क्षेत्रों में आगे बढ़कर अपनी पहचान सुनिश्चित कर रही हैं, अब शिक्षा के द्वारा महिलाओं एवं बालिकाओं को अपने अधिकारों के प्रति अवगत कराया जा रहा है, नारी उत्थान हेतु बालिका शिक्षा पर जोऱ दिया जा रहा है। हमारे देश की अत्यधिक जनता गाँवों में निवास करती है। ग्रामीण अंचलों में बालिका शिक्षा के प्रति महिलाओं की सोच सकारात्मक नहीं है, उनकी सामाजिक, पारिवारिक, व्यक्तिगत कारक,सार्थक सोच विकसित करने में बाधक होते हैं, ऐसी स्थिति में शोधार्थी को ''ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं की बालिका शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन'' करना आवश्यक एवं महत्वपूर्ण विषय के रूप में अनुभव किया गया है।

शोध शीर्षक में प्रयुक्त शब्दों का परिभाषीकरण -

1. ग्रामीण क्षेत्र-ग्रामीण क्षेत्र ग्रामीण क्षेत्र से आशय वह क्षेत्र जहां नगरीय निकाय में उपलब्ध सुविधाएं ना होकर ग्रामीण स्तर की सुविधाएं पाई जाती हैं तथा वहाँ की

जनसंख्या की सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से है।

2. ग्रामीण महिलाओं-ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाली महिलाएँ।
3. बालिका शिक्षा-बालिका शिक्षा से तात्पर्य शिक्षा के क्षेत्र में बालिकाओं की स्थिति संबंधित जानकारी से है।
4. अभिवृत्ति-अभिवृत्ति से आशय विचारों की अनुभूति के धनात्मक एवं ऋणात्मक पक्ष के प्रति व्यापक प्रतिक्रिया से है जो व्यक्ति का मनोवैज्ञानिक उद्दीपक के प्रति –ष्टिकोण होता है।
5. अध्ययन-अध्ययन किसी विषय के सब अंगों या गूढ़ तत्वों का ज्ञान प्रदान करने के लिए उसे देखना समझना तथा पढ़ना अध्ययन कहलाता है।

शोध कार्य की आवश्यकता एवं महत्व- माँ बच्चों की प्रथम गुरु होती है, उसके द्वारा बच्चों को प्रदान किए गए संस्कारों का प्रभाव उनके संपूर्ण जीवन काल में रहता है। इसलिए माँ का पढ़ा-लिखा होना आवश्यक है, इसीलिए कहा भी गया है। "पढ़ी-लिखी यदि होगी माता। घर की होगी भाग्य विधाता।।" महाकवि जयशंकर प्रसाद ने नारी के विषय में लिखा है, कि -"नारी तुम केवल श्रद्धा हो, विश्वास-रजत-नग पगतल में। पीयूष-स्रोत सी बहा करो, जीवन के सुंदर समतल में।।"[3] लोकतांत्रिक समाजवादी व्यवस्था में शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान होता है शिक्षा ही लोकतंत्र के विकास में सहायक है। अत: इस हेतु बालिकाओं को शिक्षित करना नितांत आवश्यक है। अतएवयह कार्य शोध एवं सर्वेक्षण द्वारा ही संभव है। प्रस्तावित शोध के महत्व का निर्धारण सुनिश्चित किए गए प्रतिपूर्ति पर आधारित है इस दृष्टि से प्रस्तुत शोध कार्य का निम्नलिखित महत्व है-

1. शोध अध्ययन क्षेत्र में ग्रामीण महिलाओं में शिक्षा के प्रति जागरूकता में वृद्धि हो सकेगी।
2. शोध अध्ययन के परिणामस्वरुप बालिकाओं के नामांकन दर में वृद्धि हो सकेगी।
3. बालिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि में वृद्धि हो सकेगी।
4. शोध क्षेत्र में साक्षरता प्रतिशत में वृद्धि हो सकेगी।
5. बालिकाओं की शिक्षा के प्रति जागरूकता विकसित हो सकेगी।

शोध के उद्देश्य- यह एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है, कि अच्छे सुयोग्य नागरिक के निर्माण हेतु प्रारंभिक अवस्था में ही बालिकाओं के विकास के अवसर प्रदान किए जाएं। प्रकृति एवं विशेषताओं की दृष्टि से सामाजिक विधियां मनोविज्ञान एवं शिक्षा के क्षेत्र में किए जाने वाले अनुसंधान कार्य स्वमेव उद्देश्यपूर्ण होते हैं। शैक्षिक अनुसंधान के अंतर्गत बालिका शिक्षा को बढ़ावा देना, उनके शिक्षण स्तर में वृद्धि करना एवं शिक्षण समस्याओं के निदान के प्रयास किया जाना सम्मिलित है फिर भी प्रत्येक समस्या के शीर्षक संबंधी सामान्य एवं विशिष्ट उद्देश्य योजना में निहित होते हैं। प्रस्तुत शोध के निम्नलिखित महत्वपूर्ण उद्देश्य निर्धारित किए गए हैं-

1. ग्रामीण क्षेत्र में महिलाओं की बालिका शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन।
2. विगत वर्षों की तुलना में वर्तमान में बालिकाओं के नामांकन की स्थिति ज्ञात करना।
3. बालिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि को प्रभावित करने वाले कारक ज्ञात करना।
4. ग्रामीण महिलाओं को बालिका शिक्षा की अनिवार्यता एवं महत्व से अवगत कराना।

5. बालिकाओं को शिक्षा के सभी पक्षों जैसे-सामाजिक, व्यक्तिगत, आर्थिक पक्ष स्पष्ट कराना।

शोध की परिकल्पनाएँ- समस्या की अभिव्यक्ति का महत्वपूर्ण साधन परिकल्पना होती है परिकल्पना एक प्रकाश स्तंभ है जो किसी भी समस्या के संभावित परिणाम का आधार होती है। शोध कार्य में अपने अध्ययन विषय के संबंध में ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं की बालिका शिक्षा के प्रति जो सोच थी, शोध अध्ययन के उपरांत सुधार आया प्रस्तुत शोध कार्य में संभावित निष्कर्षों को शोधकर्ता ने अपने अनुभव अध्ययन एवं पूर्ववर्ती शोध कार्य का अध्ययन परिकल्पनाओं के रूप में निम्नानुसार निर्धारित किया है। चयनित विषय को दृष्टिगत रखते हुए शोध अध्ययन हेतु निम्नांकित परिकल्पनाओं का सूत्रीकरण किया गया है।

1. वर्तमान में बालिकाओं के नामांकन दर में वृद्धि हुई है।
2. ग्रामीण महिलाओं में बालिका शिक्षा के प्रति जागरूकता विकसित हुई है।

शोध क्षेत्र का परिसीमन- प्रस्तुत कार्य का विषय मुख्य रूप से बालिका शिक्षा पर है एवं ग्रामीण महिलाओं की इसके प्रति क्या अभिवृत्ति है विषय-वस्तु पर केंद्रित है। अनुसंधान कार्य की गुणवत्ता को मानक स्तर तक प्राप्त करने के लिए शोधार्थी द्वारा शोध अध्ययन हेतु भौगोलिक एवं विषय-वस्तु के विस्तार को निम्नानुसार परिसीमित किया गया है।

(1) **भौगोलिक परिसीमन-** प्रस्तुत शोध कार्य रीवा जिले के राजस्व सीमा तक भौगोलिक दृष्टि से परिसीमित किया गया है।

(2) **विषयवस्तु का परिसीमन-**इसके अंतर्गत रीवा विकासखण्ड के ग्रामीण क्षेत्रान्तर्गत में आने वाली उच्च प्राथमिक स्तर की शालाओं में अध्ययनरत बालिकाओं एवं उनकी महिला अभिभावकों पर परिसीमित रखा है।

शोध विधियाँ-शोध विधि अनुसंधान क्रिया को संपादित करने का एक ढंग है जो समस्या की प्रकृति के द्वारा निर्धारित होती है।शोध कार्य को सफल बनाने के लिए विभिन्न शोध विधियां प्रयोग में लाई जाती हैं जिनकी निर्भरता प्रमुख रूप से दो पक्षों पर निर्भर करती है।

- शोध कार्य की प्रगति तथा उद्देश्यों की प्राप्ति पर।
- समय की अवधि पर।

शोधार्थी द्वारा चिन्हित समस्या के लिए 'सर्वेक्षण विधि' का चयन किया गया है जिसका उद्देश्य यह ज्ञात करना है कि वर्तमान समय में बालिका शिक्षा के प्रति ग्रामीण महिलाओं की अभिवृत्ति क्या है।

सर्वेक्षण विधि - शोधार्थी द्वारा उक्त विधियों में से चयनित शोध संपादन हेतु सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। इस विधि का प्रयोग शैक्षिक अनुसंधान में बहुत अधिक किया जाता है यह विधि शैक्षिक समस्याओं को समझने एवं उनके निराकरण करने में उपयोगी है। प्रस्तुत शोध में उच्च प्राथमिक स्तर की ग्रामीण क्षेत्र के 10 विद्यालयों उनमें अध्ययनरत 100 छात्राएं एवं उनकी महिला अभिभावकों से साक्षात्कार एवं बालिका प्रश्नावली तथा संधारित अभिलेख अवलोकन के माध्यम से जानकारी एकत्रित की गई है।

शोध उपकरण- शोध कार्य हेतु परिकल्पनाओं के परीक्षण एवं उद्देश्यों की पूर्ति एवं विश्वसनीय आंकड़ों के संग्रह हेतु निम्नलिखित उपकरणों का प्रयोग किया गया है।

1. **साक्षात्कार अनुसूची-**इसके अंतर्गत साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति के बारे में सभी सूचनाएँ तथा तथ्य एकत्र किए जा सकते हैं एवं इसी आधार पर साक्षात्कारकर्ता किसी निष्कर्ष पर पहुंचता है। "दो व्यक्तियों के आमने-सामने

का मिलन होता है तथा किसी विषय पर विचारों का आदान-प्रदान करते हैं।''[4]

2. **अभिलेख अवलोकन प्रपत्र-** न्यादर्श विधि द्वारा चुने गए विद्यालयों में शोध संबंधी आंकड़ों के संकलन हेतु चयनित बालिकाओं की शिक्षा स्थिति, नामांकन उपस्थिति एवं उपलब्धि ज्ञात करने हेतु शाला अभिलेख अवलोकन उपकरण का प्रयोग किया गया है।
3. **प्रश्नावली-** इस उपकरण का उपयोग दूर फैले विभिन्न स्रोतों से सूचना प्राप्त करने के लिए पढ़े-लिखे लोगों पर किया जाता है शिक्षा के क्षेत्र में कार्य करने वालों के द्वारा वर्तमान परिस्थितियों तथा क्रियाओं के बारे में अभिवृत्ति तथा मत जानने के लिए व्यापक रूप से प्रयोग किया जाता है। ''सामान्य रूप से प्रश्नावली शब्द से तात्पर्य एक ऐसी युक्ति से है जिसमें प्रश्नों के उत्तर स्वयं उत्तर दाता द्वारा की गई प्रतिक्रिया की पूर्ति के माध्यम से प्राप्त किए जाते हैं।''[5]

न्यादर्श- प्रस्तुत शोध कार्य रीवा विकासखण्ड के प्रारंभिक स्तर में अध्ययनरत बालिकाओं से संबंधित है 'दैव निदर्शन' विधि द्वारा न्यादर्श प्रक्रिया का चयन किया गया है। रीवा विकासखण्ड के क्षेत्रान्तर्गत परिसीमन में संचालित एवं न्यादर्श द्वारा चयनित विद्यालय कुल -10, उच्च प्राथमिक स्तर की कक्षाओं में कक्षा 6,7,8 की छात्राएँ जिनकी संख्या 100 है। बालिका महिला अभिभावक संख्या कुल 100 को न्यादर्श में चयन किया गया है एवं जानकारी एकत्रित की गई है।

पूर्ववर्ती शोध कार्यो का संक्षिप्त विवरण- प्रस्तुत अनुसंधान की समस्या एवं संबंधित उन पत्र-पत्रिकाओं, अभिलेखों, पुस्तकें जिनका अध्ययन कर शोधार्थी को समस्या चयन, परिकल्पनाओं के निर्माण, अध्ययन की रूपरेखा तैयार करने एवं कार्य को आगे बढ़ाने में सहायता प्राप्त हुई है। कुछ पूर्ववर्ती शोध कार्यों का संक्षिप्त विवरण :-

1.''रीवा संभाग में अल्पसंख्यक समुदाय की बालिकाओं के शैक्षिक विकास का समीक्षात्मक अध्ययन।''

शोधार्थी	-	श्री पंकज नाथ मिश्र
शोध निर्देशक	-	डॉ के. के. सिंह
महाविद्यालय	-	शासकीय शिक्षा महाविद्यालय रीवा मध्य प्रदेश
विश्वविद्यालय	-	अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा
कक्षा	-	पी-एच.डी. सत्र 2005

2. ''सीधी जिले के विकासखण्ड देवसर में बालिका शिक्षा की वर्तमान स्थिति उसमें आने वाली कठिनाइयां एवं समाधान का अध्ययन।''

शोधार्थी	-	श्री रामकृष्ण शुक्ला
शोध निर्देशक	-	श्रीमती माधवी श्रीवास्तव
महाविद्यालय	-	शासकीय शिक्षा महाविद्यालय रीवा मध्य प्रदेश
विश्वविद्यालय	-	अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा मध्य प्रदेश
कक्षा	-	एम. एड. सत्र 1997-1998

शोध क्षेत्र रीवा जिले का शैक्षिक परिदृश्य- स्वाधीनता के पूर्व रीवा विकासखण्ड में शिक्षण संस्थाओं की संख्या कम थी परंतु स्वतंत्रता पश्चात प्राथमिक स्तर के नामांकन दर में वृद्धि हुई है।

परिणामों का विश्लेषण एवं व्याख्या- प्रदत्तों के संकलन के लिए अनुसंधान उपकरणों का प्रशासन न्यादर्श की इकाइयों पर किया गया जाता है। कोई भी शोध कार्य तभी सही मायने

में कसौटी पर खरा उतरता है, जब प्राप्त आंकड़ों का क्रमबद्ध सारणीयन तथा वर्गीकरण कर तथ्यात्मक तार्किक एवं संख्यकी विवेचना के आधार पर उनकी पुष्टि हो सके।

तालिका क्रमांक - 1.1
न्यादर्श मे बालिकाओं के कक्षावार नामांकन की संबंधित स्थिति की जानकारी परिकल्पना क्रमांक 1 से सम्बंधित
(1) **वर्तमान में बालिकाओं के नामांकन दर में वृद्धि हुई है।**

स. क्रं.	जानकारी संकलन के स्त्रोत	न्यादर्श संख्या	वर्ष	कक्षा				नामांकन दर में अंतर	प्रतिशत अंतर
				6	7	8	कुल		
1.	अभिलेख अवलोकन प्रपत्र (द्वितीयक स्त्रोत)	100	2006-07	270	215	238	723	-	-
2.	““		2007-08	293	255	210	758	35	4.61
3.	““		2008-09	298	288	253	839	81	9.65
4.	““		2009-10	315	308	290	910	71	7.80
5.	““		2010-11	428	312	300	1040	130	12.5

तालिका क्रमांक -1.2
सरल दर्ज अनुपात (GER)

सत्र	दर्ज छात्रा संख्या	11 से 14 आयु वर्ग
2006-07	723	766
2007-08	758	803
2008-09	839	864
2009-10	910	933
2010-11	1040	1054

विश्लेषण- उपर्युक्त तालिका शोध क्षेत्र के विद्यालयों के शाला अभिलेख के माध्यम से विगत पांच (5) वर्षो के नामांकन संबंधित आंकड़े लिए गए है। आंकड़ों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि बालिकाओं के नामांकन मे क्रमश: वृद्धि हुई है। जो बालिकाओं की शिक्षा के प्रति सकरात्मक सोच को परिलक्षित करती है। अत: शोधार्थी द्वारा परिकल्पित बिंदु क्रं. 1 को उक्त आंकड़ों की सहायता से पुष्टि प्राप्त होती है।

व्याख्या- आंकड़ो की गणितीय एवं सांख्यिकीय विवेचना नामांकन दर एवं प्रतिशत अंतर तथा दर्ज अनुपात के परिपेक्ष्य मे की गई है।

1. 2005-06 सत्र में (GER)

   $100766723\times = 94.3864\%$
2. 2006-07 सत्र में (GER)

   $100803758\times = 94.3960\%$
3. 2007-08 सत्र में (GER)

   $100864839\times = 97.1064\%$
4. 2009-10 सत्र में (GER)

   $100933910\times = 97.5348\%$

5. 2010-11 सत्र में (GER)

1009331040× = 98.6717%

तालिका क्रमांक - 2.0

ग्राम स्तर पर बालिका शिक्षा के प्रति जागरूकता का अध्ययन

स.क्र.	जानकारी संकलन के स्त्रोत	न्यादर्श	संगत प्रश्न	ग्राम स्तर पर बालिका शि क्षा के प्रति जागरूकता सम्बन्धित अध्ययन			
				हाँ		नही	
				संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1.	छात्राएं (छात्रा प्रश्नावली)	100	प्रश्न क्र. 13,14,20	76	76	24	24
2.	अभिभावक साक्षात्कार (महिला साक्षात्कार)	100	प्रश्न क्र. 1.1, 1 .3, 1 .4, 1.8, 12,1415	80	80	20	20

परिकल्पना क्रमांक - 02 से सम्बन्धित गामीण महिलाओं मे बालिका शिक्षा के प्रति जागरूकता विकासित हुई है।

विश्लेषण- उपर्युक्त तालिका मे ग्राम स्तर पर बालिका शिक्षा के प्रति जागरूकता के अध्ययनंतर्गत बालिकाओं एंव महिला अभिभावकों से नियमित विद्यालय जाना पढ़ाई के प्रति दृष्टिकोण प्रेरणा, अध्ययन हेतु समय आदि बिंदुओं पर जानकारी प्राप्त करने पर 76 प्रतिशत बालिकाओं एवं 80 प्रतिशत माताओं ने सकारात्मक अभिवृत्ति दर्शाई जबकि 24 प्रतिशत बालिकाओं एवं 20 प्रतिशत माताओं ने बालिका शिक्षा की गंभीरता के प्रति उदासीनता का भाव दर्शाया।

80 प्रतिशत माताओं की बालिका शिक्षा के प्रति सकारात्मक सोच उनके जागरूक होने का प्रमाण है।

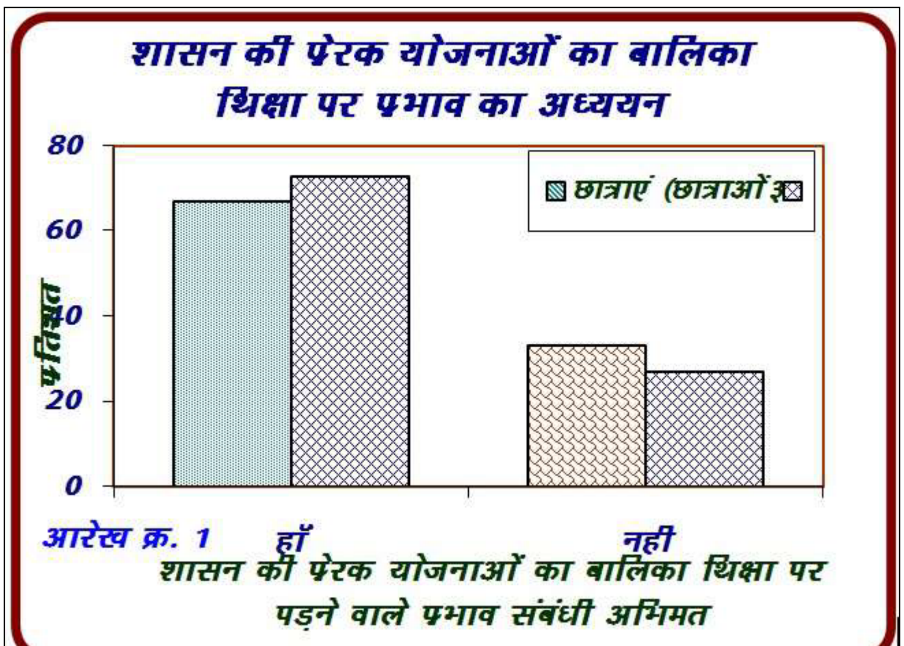

आरेख क्र. 1 शासन की प्रेरक योजनाओं का बालिका थिक्षा पर पड़ने वाले प्रभाव संबंधी अभिमत

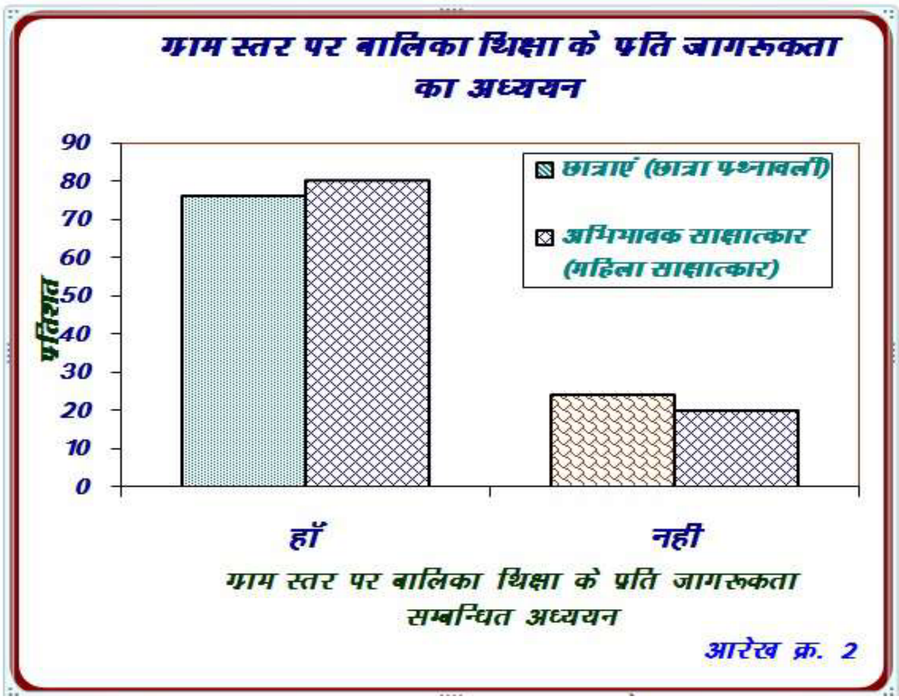

आरेख क्र. 2

व्याख्या- उपरोक्त विश्लेषित तथ्यों से स्पष्ट होता है कि ग्राम स्तर पर बालिका शिक्षा के प्रति जागरूकता आई है। अत: परिकल्पित बिंदु 2 सार्थक है।

परिकल्पनाओ का सत्यापन एवं निरसन -

परिकल्पना क्रमांक 01- इस परिकल्पना के अनुसार - "वर्तमान में बालिकाओं के नामांकन दर में वृद्धि हुई है।" यह परिकल्पना मुख्य रूप से पूर्व माध्यमिक विद्यालयों की कक्षा 6, 7 एवं 8 की छात्राओं की नामांकन स्थिति ज्ञात करने के उद्देश्य से की गई थी। तालिका के गणितीय एवं सांख्यिकीय विश्लेषण एवं व्याख्या से स्पष्ट है कि सत्र 2005-06 से सत्र 2010-11 बालिकाओं के नामांकन में क्रमश: वृद्धि हुई है, जो नामांकन दर में प्रतिशत अंतर एवं सकल दर्ज अनुपात (GER) से सिद्ध होती है। अत: उपरोक्त व्याख्या के अनुसार शोधार्थी की परिकल्पना स्वीकृत होती है।

परिकल्पना क्रमांक 02- शोधार्थी की परिकल्पना क्र. 2 के अनुसार -"ग्रामीण महिलाओं में बालिका शिक्षा के प्रति जागरुकता विकसित हुई है।" तालिका क्र. 02 से प्राप्त आँकड़ो के अनुसार यह ज्ञात हुआ कि ग्राम स्तर पर बालिका शिक्षा के प्रति लोग जागरुक है, उन्हें छात्राओं का नियमित विद्यालय आना, पढ़ाई में रुचि, प्रेरणा, अध्ययन के लिए समय आदि के बारे में जानकारी है। 76 प्रतिशत बालिकाओं का एवं 80 प्रतिशत महिला अभिभावकों का दृष्टिकोण सकारात्मक है। अत: शोधार्थी की ये परिकल्पना स्वीकृत होती है।

निष्कर्ष- बालिका शिक्षा के प्रति ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं की अभिवृत्ति का समीक्षात्मक अध्ययन विषय पर शोध अध्ययन हेतु सर्वेक्षण के द्वारा संग्रहित प्राथमिक एवं द्वितीयक स्त्रोतों के द्वारा प्रदत्तों का संकलन, सारणीयन, विश्लेषण एवं व्याख्या कर

परिकल्पना सत्यापन अथवा निरसन उपरान्त अन्तिम निष्कर्षों को निम्नानुसार तथ्यांकित किया जा रहा है–

1. सांख्यिकीय विश्लेषण के आधार पर पाया गया है कि विगत वर्षो की तुलना में वर्तमान में बालिकाओं की विद्यालय में नामांकन दर में क्रमश: वृद्धि हुई है।
2. न्यादर्श विद्यालयों के अभिलेख अवलोकित करने पर निष्कर्षत: यह कहाँ जा सकता है कि बालिकाओं की विद्यालयों में उपस्थिति संतोषजनक है।
3. ग्राम स्तर पर बालिकाओं का शैक्षिक अधिगम स्तर एवं उपलब्धि सामान्य स्तर को दर्शाती है।
4. वर्तमान परिवेश में ग्राम स्तर पर बालिका शिक्षा के प्रति जागरुकता विकसित हुई है।
5. बदलते परिवेश में वर्तमान में भी बालिका शिक्षा की उन्नति में अनेक समस्याएं विद्यमान है, जो बाधक तत्व के रूप में नकारात्मक प्रभाव दर्शाती है।

सुझाव- प्रस्तुत शोध के निष्कर्षो एवं कार्य के दौरान प्राप्त स्वअनुभव से अनेक ऐसे तथ्य उभरकर आये है जो छात्राएँ, अभिभावक तथा समाज के लिए उपयोगी हो सकते है, अत: उनका उल्लेख करना मैं अपना कर्तव्य समझती हूँ। प्रस्तुत शोध में शोध के परिणामों को ध्यान में रखते हुए निम्न सुझाव दिये जा रहे है–

1. बालिका शिक्षा के प्रति समाज की परम्परागत सोच को व्यापकता प्रदान करने के उपाय पर जोर देना।
2. ग्रामीण महिलाओं में बालिका शिक्षा के प्रति जागरुकता विकसित करने हेतु प्रेरक कार्यक्रमों का आयोजन प्रति माह किया जाना चाहिए।
3. बालिकाओं को शिक्षा के उचित अवसर प्रदान किए जाएं।
4. बालिकाओं पर घरेलू कार्यो का अत्यधिक भार नही डालना चाहिए।
5. बालिकाओं को घरेलू कार्य में संलग्न न रहकर प्रतिदिन विद्यालय आने का प्रयास किया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. त्यागी, ड, गुरसरन दास एवं पाठक, पी. डी., 1986 भारतीय शिक्षा के आधार, पृष्ठ क्रमांक 8 प्रथम संस्करण विनोद पुस्तक मंदिर, 11/7, रांगेय राघव मार्ग आगरा-2
2. पाठक, पंडित श्री गणेश दत्त (ज्योतिषाचार्य), मनुस्मृति(सुबोधिनी व्याख्योपेता,) अध्याय 3,श्लोक 56, पृष्ठ 79,ज्येष्ठ कृष्ण पक्ष 12, शनिवार संवत 2031 ठाकुर प्रसाद एंड संस पुस्तक विक्रेता राजा दरवाजा ब्रांचकचौड़ी गली वाराणसी उत्तर प्रदेश
3. प्रसाद, जयशंकर सन, 1935 लज्जा भाग-2, कामायनी (महाकाव्य)प्रकाशक, डायमंड पाकेट बुक्स, प्रथम संस्करण जनवरी 2006
4. शर्मा, राजकुमारी एवं दुबे, एस. के. एवंबरोलिया, अनीता, 2015 बाल्यावस्था और वृद्धि विकास, पृष्ठ संख्या 55, राधा प्रकाशन मंदिर प्राइवेट लिमिटेड सेक्टर 8, केंद्रीय कारागार परशुरामपुरी नगला अजीता, आगरा 282002
5. चौहान, रीता एवं पाठक, पी. डी., 2016-2017 बाल्यावस्था एवं उसका विकास पृष्ठ संख्या 61 अग्रवाल प्रकाशन 28/115 पोस्ट ऑफिस के पीछे, संजय पैलेस ज्योति ब्लाक, सिविल लाइन, आगरा 282002 उत्तर प्रदेश

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

सारण जिला में (बिहार) में जनसंख्या वृद्धि एवं पर्यावरण अवनयन

•संजय कुमार

सारांश- तीव्र जनसंख्या वृद्धि पर्यावरण अवनयन का प्रमुख कारण है। मानवीय क्रियाकलापों ने पारिस्थितिकी तंत्र की स्थिरता तथा पारिस्थितिकीय संतुलन की व्यवस्था में असंतुलन उत्पन्न किया गया है। सारण बिहार का प्रमुख जिला है, जिसका क्षेत्रापफल 2641 वर्ग किलोमीटर है और 2011 की जनगणना के अनुसार कुल जनसंख्या 3951862 है। लगातार बढ़ती जनसंख्या की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अध्ययन क्षेत्र में विभिन्न प्रकार के विकासात्मक गतिविधियों को बढ़ावा मिला है, परिणामस्वरूप पर्यावरणीय प्रदूषण एवं पारिस्थितिकीय असंतुलन जैसी समस्याएँ बढ़ती जा रही है।

मुख्य शब्द- जनसंख्या, पर्यावरण, प्राकृतिक, संसाधन, वन, पर्यावरण अवनयन

प्रस्तावना- जनसंख्या वृद्धि का तात्पर्य किसी क्षेत्र विशेष में लोगों की संख्या के वृद्धि से है, सारण जिला एक उपजाउ मैदानी प्रदेश है जहाँ कि भौगोलिक परिस्थितियाँ मानवीय अधिवास के अनुकूल होने के कारण मानव बसाव आदि काल से ही रहा है और यह क्षेत्र सघन बसाव का क्षेत्र भी है। आजादी के बाद सारण जिला में स्वास्थ्य सुविधाओं की निरंतर उपलब्धता के कारण जनसंख्या में लगातार वृद्धि हो रही है। परिणामस्वरूप प्राकृतिक संसाधनों के उफपर दिन-प्रतिदिन दबाव बढ़ता ही जा रहा है। 1951 से 2011 के बीच सारण जिला की जनसंख्या में 5 गुनी वृद्धि हुई, और इस बढ़ती जनसंख्या के भरण पोषण के लिए खाद्यान्न, आवास तथा अन्य दैनिक आवश्यकताों की मांग दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है, परिणामस्वरूप प्राकृतिक संसाधनों का विदोहन तेजी से हो रहा है और साथ ही साथ पर्यावरण अवनयन में भी तेजी से वृद्धि हो रही है।

अध्ययन का उद्देश्य- प्रस्तुत अध्ययन बिहार के सारण जिला में जनसंख्या वृ(एवं उसके प्रभावों का अध्ययन अनेक उद्देश्यों को ध्यान में रखकर किया गया है।

1. सारण जिला के जनसंख्या वृद्धि के दशकीय प्रतिरूप का अध्ययन करना है।
2. सारण जिले में जनसंख्याँ वृद्धि के स्थानिक प्रतिरूप का विश्लेषण करना है।
3. जनसंख्या वृद्धि से पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभाव को इंगित करना है।
4. सारण जिले के बढ़ती जनसंख्या में नकारात्मक प्रभाव की ओर जनप्रतिनिध्, नौकरशाही एवं जनता का ध्यान आकृष्ट करना है।

परिकल्पना -

1. जनसंख्या के समूहन पर प्राकृतिक कारणों का प्रभाव पड़ता है।

• विभागाध्यक्ष, भूगोल विभाग, राजेन्द्र कॉलेज, छपरा

2. सारण जिले में जनसंख्या वृद्धि का क्षेत्राीय प्रतिरूप समरूप नहीं है।
3. सारण जिले में तीव्र जनसंख्या वृद्धि ने पर्यावरणीय संकट को जन्म दिया है।

आँकड़ों का संग्रह एवं विधि तंत्र- प्रस्तुत शोधपत्र में द्वितीयक आँकड़ों का प्रयोग करते हुए 1901 से 2011 तक की जनसंख्या को लेकर दशकीय वृद्धि का विश्लेषण किया गया है। इसके अतिरिक्त जिला सांख्यिकीय पत्रिका, जनसंख्या संबंधी रिपोर्ट, इंटरनेट आदि का भी सहारा लिया गया है। शोधपत्र के अध्ययन को प्रासंगिक बनाने के लिए स्वयं द्वारा क्षेत्र में किए गए सर्वेक्षण एवं भ्रमण द्वारा प्राप्त अनुभवों के साथ विवरणात्मक विश्लेषणात्मक विधि का प्रयोग किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र- सारण जिला की आकृति त्रिभुजाकार है, इसका आधार पश्चिमोत्तर में है, इसका अक्षांशीय विस्तार 25^{0} 40^{0} उत्तरी अक्षांश से लेकर 26^{0} 15^{0} तक तथा देशांतरीय विस्तार 84^{0} 25^{0} पूर्वी देशांतर से लेकर 85^{0} 15^{0} पूर्वी देशांतर के मध्य है। सारण जिला का कुल क्षेत्रापफल 2641 वर्ग किलोमीटर है जो बिहार के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 2.8 प्रतिशत है।

Location Map of Saran District

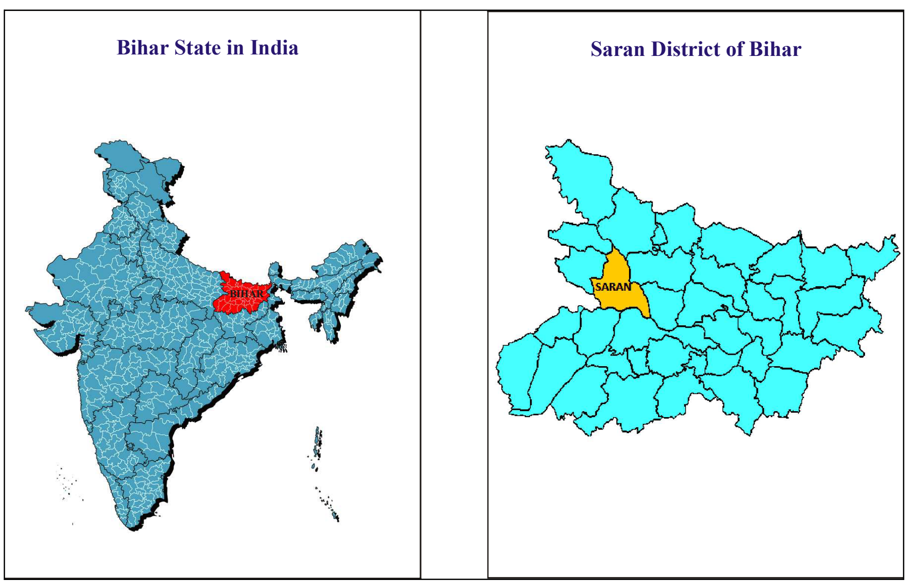

Saran District with Sub-Districts

विश्लेषण एवं व्याख्या-

तालिका संख्या-1.1

सारण जिला में दशकीय जनसंख्या वृद्धि में परिवर्तन (1901-2011)

जनगणना वर्ष	जनसंख्या	दशकीय जनसंख्या में विविधता		पुरूष	महिला
		निरपेक्ष वृद्धि	जनसंख्या वृद्धि दर (प्रतिशत में)		
1901	959390	-	-	436207	52383
1911	911695	-47695	-4.97	423841	487854
1921	931796	+20101	+2.20	450938	480858
1931	990147	+58351	+6.26	485860	504287
1941	1138986	+148839	+15.03	547161	591825
1951	1256306	+117320	+10.30	589277	667029
1961	1447297	+190991	+15.20	673854	773443
1971	1709722	+262425	+18.13	833146	876576
1981	2084322	+374600	+21.91	1032230	1052092
1991	2572980	+488658	+23.44	1310635	1262345
2001	3248701	+675721	+26.26	1652661	1596040
2011	3951862	+703161	+21.64	2022821	1929041

Source : District Census Handbook, Saran, 2011

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि 1901 में सारण जिला की कुल आबादी 9.6 लाख थी जो 2011 में बढ़कर 39.51 लाख हो गई, जबकि 1901 में सारण जिला के ही अन्तर्गत सिवान तथा गोपालगंज जिले भी आते थे। 1901 से 1911, 110 वर्षों में सारण जिला की जनसंख्या में 312 प्रतिशत की वृद्धि हुई लेकिन 10 साल 1901 से 1911 के बीच फैलने वाली जानलेवा बीमारी के कारण बड़े पैमाने पर लोगों की मृत्यु हुई और सारण जिला में जनसंख्या की वृद्धि 4.97 प्रतिशत नकारात्मक रही।

अध्ययन क्षेत्र विश्व के सबसे अधिक जनघनत्वों में से एक है, वर्ष 2011 से सारण जिला का औसत जनघनत्व 1496 व्यक्ति वर्ग कि.मी. था। 1921 ई. का वर्ष भारत के जनगणना के इतिहास का विभाजन रेखा सिद्व हुआ जिसके बाद 1947 के देश बंटवारे को छोड़कर जनसंख्या मंद या तीव्रगति से निरंतर बढ़ती गई है। इस संपूर्ण अवधि में जनसंख्या की सर्वाधिक दशकीय वृद्वि 1991-2001 की अवधि में हुई है।

जनसंख्या वृद्धि का क्षेत्रीय प्रतिरूप- जनसंख्या वृद्धि का क्षेत्रीय प्रतिरूप यानि प्रखण्डवार दशकीय वृद्धि सर्वत्रा समरूप नहीं है। विभिन्न प्रखण्डों में पर्याप्त विभिन्नता पाई जाती है, जो नीचे की तालिका से स्पष्ट है।

तालिका संख्या-1.2

सारण जिला में दशकीय जनसंख्या वृद्वि में प्रखण्डवार विविधता 2001-11

क्र.स.	प्रखंड का नाम	दशकीय जनसंख्या		
-	-	कुल	ग्राम	शहर
1	2	3	4	5
1.	मशरक	20.4	18.4	2.00
2.	पानापुर	21.1	21.1	0.0
3.	तरैया	17.4	17.4	0.0
4.	इसुआपुर	21.1	21.1	0.0
5.	बनियापुर	20.9	20.9	0.0
6.	लहलादपुर	14.1	14.1	0.0
7.	एकमा	18.1	18.1	0.0
8.	मांझी	19.0	19.0	0.0
9.	जलालपुर	26.5	25.5	2.0
10.	रिविलगंज	20.9	24.1	14.7
11.	छपरा	21.9	24.5	19.3
12.	नगरा	28.7	28.7	0.0
13.	मढ़ौरा	23.9	24.1	21.9
14.	अमनौर	19.0	19.0	0.0
15.	मकेर	11.1	11.1	0.0
16.	परसा	24.6	24.6	0.0
17.	दरियापुर	29.9	29.7	0.0
18.	गरखा	21.1	21.1	0.0
19.	दिघवारा	20.1	20.2	19.6
20.	सोनपुर	22.6	24.4	12.8
-	सारण	21.6	22.0	18.3

Source : District Census Handbook, Saran 2011

तालिका संख्या-1.2 से स्पष्ट है कि दरियापुर (29.7) एवं नगरा (28.7) प्रखण्डों में सर्वाधिक दशकीय वृद्धि हुई है जबकि न्यूनतम दशकीय वृद्धि दर मकेर (11.1) एवं लहलादपुर (14.1) प्रखण्डों में परिलक्षित हो रही है। सभी प्रखण्डों की विकास दर को ध्यान में रखते हुए उसको निम्न वर्गो में बाँटा जा सकता है।

- अधिकतम दशकीय वृद्धि (25 प्रतिशत से अधिक)
- मध्यम दशकीय वृद्धि (20 प्रतिशत से 25 प्रतिशत तक)
- निम्न दशकीय वृद्धि (15 प्रतिशत से 20 प्रतिशत तक)
- अति निम्न दशकीय वृद्धि (15 प्रतिशत से कम)

25 प्रतिशत से अधिक वृद्धि दर के अंतर्गत दरियापुर, नगरा, एवं जलालपुर प्रखण्ड आता है। 20 प्रतिशत से 25 प्रतिशत के बीच वृद्धि दर वाले प्रखण्डों की संख्या सर्वाधिक है मशरख, पानापुर, इसुआपुर, बनियापुर, रिविलगंज, छपरा, मढ़ौरा, परसा, गरखा, दिघवारा तथा सोनपुर प्रखण्ड इस समूह के प्रतिनिधि प्रखण्ड है अर्थात् 20 प्रखण्डों में से 11 प्रखण्डों में 20 प्रतिशत से 25 प्रतिशत के बीच जनसंख्या की दशकीय वृद्धि दर देखने को मिली है।15 प्रतिशत से 20 प्रतिशत के बीच वृद्धि दर वाले प्रखण्डों की संख्या केवल तीन है, जैसे तरैया (17.4 प्रतिशत), अमनौर (19 प्रतिशत) तथा मांझी (19 प्रतिशत) चतुर्थ श्रेणी में केवल दो प्रखण्ड आते हैं, जैसे मकेर (11.1 प्रतिशत) एवं लहलादपुर (14.1 प्रतिशत) जिन प्रखण्डों में 20 प्रतिशत से कम वृद्धि दर परिलक्षित हो रही है। वहाँ बाढ़ की समस्या बनी रहती है, जिस कारण व्यापक स्तर पर जनसंख्या का पलायन हो रहा है। बिहार की औसत वृद्धि की तुलना में सारण जिला में कम वृद्धि का होना निश्चित रूप से जनसंख्या पलायन से जुड़ना है। **जनंसख्या वृद्धि का पर्यावरण पर प्रभाव-** आज से बीस लाख पूर्व जब मानव का उद्‌भव हुआ था तो हमारे पास प्रचुर मात्रा में प्राकृतिक संसाधन उपलब्ध थे जैसे-जैसे मानव समुदाय की जनसंख्या बढ़ी, मानव समुदाय द्वारा अपनी बढ़ती जनसंख्या की विभिन्न आवश्यकताओं को पूर्ति करने के लिए प्राकृतिक संसाधनों का अंधधुंध दोहन किया गया, जिसके चलते प्राकृतिक संसाधनों को अवक्रमण हुआ और आज प्राकृतिक संसाधन खत्म होने के कगार पर पहुंच गए है और आज अगर हम चारों तरफ नजर दौड़ाते हैं तो अपने वातावरण के संदर्भ में विचार पाते है कि वातावरण ने अपना विरोध प्रकट कर दिया है, आज सबसे बड़ा संकट ग्रीन हाउस गैस से उत्पन्न हुआ है जिसके प्रभाव से पृथ्वी का ताप बढ़ने लगा है। अध्ययन क्षेत्र में निरंतर बढ़ती जनसंख्या की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु उद्योगों की संख्या बढ़ रही है, आवास की समस्या के निराकरण हेतु पेड़-पौधे को काटकर भवन निर्माण हो रहा है, शहर का अनियोजित रूप में विस्तार हो रहा है, दूर बसे शहरों से संपर्क स्थापित करने के लिए वाहनों की संख्या में निरंतर वृद्धि हो रही है, फलत: वायु प्रदूषण की समस्या उतना ही विकट होती जा रही है।

वनों पर प्रभाव - सारण जिले में जनसंख्या वृद्धि का वनों पर बहुत ही व्यापक रूप में प्रभाव पड़ा है, मानव समुदाय द्वारा अपनी विलासिता पूर्ण जीवन के लिए वनों का अंधधुंध दोहन किया जा रहा है। सारण की कुल जनसंख्या 1951 में जहाँ 12.56 लाख थी वही 2011 में बढ़कर 39.51 लाख हो गई। जबकि 1951 में सारण जिले के अंतर्गत ही सिवान,

गोपालगंज अनुमंडल के रूप में आते थे। आज सारण जिले अति सघन वन 0.00 वर्ग किलोमीटर, मध्यम सघन वन 26.30 वर्ग किलोमीटर, खुले वन 32.83 वर्ग किलोमीटर तथा कुल वन क्षेत्र मात्रा 59.13 वर्ग किलोमीटर शेष रह गया है। अध्ययन क्षेत्रा में वनों में कमी का प्रमुख कारण बढ़ती जनसंख्या द्वारा वनों की कटाई कृषि पर योग्य भूमि तबदिल करना तथा अन्य कार्य हेतु उपयोग में लाना है।

सड़क निर्माण और पर्यावरण अवनयन- किसी भी देश के आर्थिक विकास को परिवहन के साधनों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है और मनुष्य द्वारा आदिकाल से ही सभी परिवहन के साधनों का आधार स्तंभ सड़क मार्ग का निर्माण किया जा रहा है, इसी अनुरूप अध्ययन क्षेत्र में भी सड़कों का निर्माण जारी है। 2015 में सारण जिले में राष्ट्रीय राजमार्ग कुल लंबाई 181 किलोमीटर थी जो सितंबर 2020 तक बढ़कर 245 कि.मी. हो गई। 2015 में राज्य स्तरीय राजमार्ग की कुल लंबाई 196 किलोमीटर थी, जिसकी सितंबर 2020 तक कुल लंबाई 148 किलोमीटर थी, हालांकि राज्य राजमार्ग की वृद्धि नकारात्मक रही इसका मुख्य कारण अध्ययन क्षेत्र के कुछ राज्य राजमार्ग को राष्ट्रीय मार्ग में तब्दील किया गया है, वही जिला स्तरीय सड़कों की कुल लंबाई 2015 में 200 किलोमीटर थी जो सिंतबर 2020 में बढ़कर 431 किलोमीटर हो गई। इसी तरह अध्ययन क्षेत्र में ग्रामीण स्तरीय पक्की सड़कों की कुल लंबाई 2015 में 2373 किलोमीटर थी जो सिंतबर 2020 में बढ़कर 4587 किलोमीटर हो गई।

इस तरह उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि सारण जिला में निरंतर सड़कों का निर्माण जारी है। यह सत्य है कि इन सड़कों का निर्माण वनों को विनाश करके किया गया है। विशेषज्ञों के अनुसार "एक पेड़ प्रतिदिन 230 लीटर ऑक्सीजन छोड़ता है जिससे सात लोगों की जिन्दगी बचती है।" पेड़ लगाने के कई पफायदे होते है प्रथम ऑक्सीजन के जरिए मानव जीवन का बचाव होता है, दूसरा मिट्टी क्षरण होने से बचाव होता है, तीसरा भू-जलस्तर बढ़ाने में मदद मिलता है, चौथा वायुमंडल का तापक्रम नियंत्रण करने में मदद मिलता है। इस तरह हम अनुमान लगा सकते है अध्ययन क्षेत्र में वनों के विनाश से कितने बड़े पैमाने पर पर्यावरण अवनयन हुआ है।

वाहनों की वृद्धि और पर्यावरण अवनयन- अध्ययन क्षेत्र की बढ़ती जनसंख्या और उनकी बढ़ती आवश्यकता ने समस्या को और विकट कर दिया है, भौतिक सुख-सुविधा आजकल उच्च जीवनशैली का सूचक है, हर कोई अच्छी जीवन शैली चाहता है, इस क्रम में सबसे पहले स्थान पर घर आता है उसके बाद गाड़ी का स्थान आता है।अध्ययन क्षेत्र में ट्रक, बस, कार, टैक्सी, जीप, तीनपहिया, दुपहिया, ट्रैक्टर तथा अन्य निबंधित गाड़ियों की संख्या मार्च 2020 तक 37, 657 थी। इसके अलावा दूसरे राज्य तथा दूसरे जिलों से प्रतिदिन सारण जिले में हजारों की संख्या विभिन्न प्रकार की गाड़ियाँ गुजरती है, इन वाहनों से जहरीली गैस निकलती है जैसे नाइट्रोजन ऑक्साइड, कार्बन मोनोऑक्साइड, सल्फर ऑक्साइड आदि जिनका पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है तथा साथ ही ध्वनि प्रदूषण में भी वृद्धि होती है।

भवन निर्माण और पर्यावरण अवनयन- अध्ययन क्षेत्र में निरंतर बढ़ती जनसंख्या के साथ मकानों की संख्या में भी तीव्र गति से वृद्धि हो रही है। 2011 में सारण जिला में कुल

मकानों की संख्या 6, 31097 थी। इन मकानों के निर्माण में प्रयुक्त होने वाली मुख्य साम्रगियाँ, बालू, सीमेंट, ईंट-इस्पात, एल्युमिनियम, इस्पात, पेंट, पेपर, कंक्रीट आदि का प्रयोग होता है। ये सभी निर्माण सामग्रियाँ उच्च स्तर के धूल उत्पन्न करते है ;सीमेंट, कंक्रीट, पत्थर, सिल्का आदि सेद्ध इन धूलकणों को PM-10 के रूप में वर्गीकरण किया गया है। इन कणों का व्यास 10 माइक्रोन या कम होता है। "एक शोध के अनुसार PM-10 श्वसन द्वारा फेफड़ों में पहुंचकर अनेक स्वास्थ्य समस्याएँ जैसे श्वसन रोग, दमा, ब्रॉकाइटिस, कैंसर आदि उत्पन्न करते है।

उद्योगों की बढ़ती संख्या और पर्यावरण अवनयन- बढ़ती जनसंख्या की बढ़ती आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु विभिन्न प्रकार के उद्योगों की स्थापना हो रही है। अध्ययन क्षेत्र में 2013 में खनन उद्योगों की संख्या 240 तथा विनिर्माण उद्योगों की संख्या 23658 थी। इन उद्योगें से कार्बन डाइऑक्साइड सहित सभी प्रकार की ग्रीन हाउस गैस जैसे-नाइट्रस ऑक्साइड, मेथेन, क्लोरोफ्रलोरो कार्बन, वाष्प ओजोन आदि का उत्सर्जन वायुमंडल में हो रहा है। इन उद्योगों से वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, मृदा प्रदूषण, तापीय प्रदूषण तो हो ही रहा है, तो दूसरी तरपफ पेड़ और पसलों की बर्बादी भी हो रही है।

निष्कर्ष- मनुष्य एवं पर्यावरण के बीच आदिकाल से ही संतुलित एवं मैत्रिपूर्ण संबंध रहा है, लेकिन पिछले कुछ दशकों से मनुष्य द्वारा अपने विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्राकृतिक संसाधनों का अंधधुंध दोहन किया गया है फलतः मानव तथा प्रकृति के इस आदर्श संबंध में असंतुलन उत्पन्न हो गया है जैसा कि उपर वर्णन किया जा चुका है। अध्ययन क्षेत्र में जिन पर्यावरणीय संकटों का विश्लेषण किया गया है, उसका मुख्य कारण जनसंख्या वृद्धि है, आज जरूरत इस बात की है कि इस बढ़ती जनसंख्या पर प्रभावी तरीके से रोक लगाई जाये ताकि वर्तमान एवं भविष्य में आने वाली मानव पीढ़ियाँ स्वस्थ्य पर्यावरण में जीवन व्यतीत कर सके।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. पाण्डा, बी.पी. , 1998, जनसंख्या भूगोल, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल, पृ. 78
2. यादव, हीरालाल , 2000, जनसंख्या भूगोल, राध पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृ. 66
3. जिला सांख्यिकी पत्रिका, सारण जिला, 2011
4. सिंह, सर्वेश्वर नाथ, 2010, जनसंख्या एवं अधिवास भूगोल, राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृ. 134
5. डिस्ट्रिक्ट फैक्ट बुक सारण 79, 141
6. बिहार आर्थिक सर्वेक्षण 2020-21, पृ. 242, 243, 244, 245
7- Indiawater portal.org

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

कोविड-19 के परिप्रेक्ष्य में सूक्ष्म, लघु एवं कुटीर उद्योग की भूमिका एवं संभावनाएं

•ऋचा पाण्डेय
••आशुतोष सिन्हा

सारांश- कोविड-19, 12 मार्च 2020 को विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा एक वैश्विक आपदा घोषित किया गया ऐसी आपदा जिसने जन-धन एवं मन तीनों प्रकार से वैश्विक समाज को न केवल प्रभावित किया, वरन् एक ऐतिहासिक संकट के जाल में फंसा दिया। हालिया प्रकाशित अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिका लेंसेंट के अनुसार तकरीबन 40 लाख लोगों ने अपनी जान गवां दी है तथा विश्व बैंक एवं तमाम रेटिंग कम्पनियों ने इस आपदा को वैश्विक आर्थिक मंदी 1930 से भी ज्यादा नुकसानदायक बताया है।कोरोना वायरस के कारण मुश्किल दौर से गुजर रही भारतीय अर्थव्यवस्था की स्थिति में इस साल भी सुधार होने की उम्मीद भविष्य के गर्भ में है। समाचार एजेंसी रायटर्स के एक पोल के मुताबिक, भारत की अब तक दर्ज सबसे गहरी आर्थिक मंदी इस पूरे साल बरकरार रहने वाली है। भारत सरकार में अर्थव्यवस्था को गति देने के लिए मई में 20 लाख करोड़ के आर्थिक राहत पैकेज की घोषणा की थी। भारतीय रर्जव बैंक भी मार्च के ब्याज दरों में 115 बेसिक प्वांइटस की कमी कर चुका है। इसका संकेत स्पष्ट है कि भारतीय अर्थव्यवस्था का पूरा दारोमदार अब लघु सूक्ष्म एवं मध्यम उद्योग के कन्धों पर टिका हुआ है।

मुख्य शब्द- रोजगार , सूक्ष्म, लघु , कुटीर उद्योग, एमएसएमई

प्रस्तावना- वर्तमान समय में 5,000 सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों (एमएसएमई) के एक सर्वेक्षण में पाया गया कि उनमें से 71प्रतिशत उद्यम मार्च 2020 में भारत में कोविड-19 लॉकडाउन के कारण अपने कर्मचारियों को वेतन नहीं दे पाये। हाल ही में सरकार ने एमएसएमई पर एक प्रोत्साहन राशि की घोषणा की है जो जल्द ही आने वाली है।

एमएसएमई जहाँ देश के 45 प्रतिशत लोगों को रोजगार देता है, वर्तमान समय की इस कोविड-19 महामारी ने इस पर बहुत बुरा प्रभाव डाला है। यह क्षेत्र (एमएसएमई) देश के 11.4 करोड़ लोगों को रोजगार देता है और इसका प्रभाव देश के जीडीपी (सकल घरेलू उत्पाद) में 30 प्रतिशत का योगदान करता है। इसके साथ देश के निर्यात का 50 प्रतिशत भाग इस क्षेत्र के अंतर्गत आने वाले उत्पादों तथा सेवाओं का है। मध्यम एवं दीर्घकालिक तथ्यों का हल करने में भी सहायता करेगी इस क्षेत्र में सहायता के लिए

• शोधार्थी, डॉ. राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय अयोध्या, (उ. प्र.)
•• प्रोफेसर, अर्थशास्त्र एवं ग्रामीण विकास विभाग, डॉ. राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय अयोध्या, (उ. प्र.)

वर्तमान योजनाओं में भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा घोषित व्यापार निरंतरता के उपाय, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों (पीएसबी) द्वारा शुरू की गई आपातकालीन क्रडिट लाइनें, भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक (एस आई डी बी आई या सिडवी) द्वारा विशेष रूप से एम एस एम ई के लिए वस्तुओं की आपूर्ति या कोविड-19 से संबंधित सेवांए प्रदान करने के लिए घोषित रियायती ब्याज दर पर ऋण, और अन्य उपाय जी एस टी (वस्तु एवं सेवा कर) का भुगतान जून 2020 तक विलंबित करना शामिल है, जो कि अल्पकालिक समस्याओं को कम करने में सहायक होंगें।

विश्व की सभी सरकारें अपने लघु व्यवसायों (उद्यमों) में अधिक विश्वास पैदा करने और ऋण देने के लिए कई प्रकार से शुरूआत कर चुके हैं। इन प्रमुख प्रकारों में अभी केवल अल्पकालिक तरलता प्रदान करना शामिल है, जो वर्तमान में भारत में प्रदान की जा रही है। इसके तहत 3 से 6 महीने की अवधि के लिए मजदूरी सहायता/सब्सिडी, एक व्यक्ति द्वारा चलाए जा रहे व्यवसायों और सूक्ष्म उद्यमों को सब्सिडी, किराया एवं अन्य उपयोगिता भुगतानों को लंबित करना है, इस लॉकडाउन समयावधि के दौरान विभिन्न कारोबार राजस्व आदि में कमी के लिए क्षतिपूर्ति भी शामिल है देश को प्रारम्भिक दौर में ही इस वित्तीय समस्या से निपटने के लिए प्रमुख प्रयास करना चाहिए था। मुख्य समस्या तो उन 6.34 करोड़ अनगिनत एम एस एम ई की पहचान करने में निहित है, जिनमें से 99 प्रतिशत सूक्ष्म उद्यम हैं और जो अनौपचारिक है।

कोविड-19 की इस महामारी (लॉकडाउन) के दौरान सबसे ज्यादा प्रभावित समूहों में से कुछ इस प्रकार हैं- स्व-नियोजित व्यवसायी, गलियों के दुकानदार, फेरीवाले, निर्माण, परिवहन, घरेलू कामगार आदि। इन श्रमिकों का कोई आय प्रतिस्थापन नहीं है और ये इस लॉकडाउन से सीधे प्रभावित हुए।

एमएसएमई और उनके रोजगार पर एक व्यापक डेटा की कमी इस संकट में लक्षित राहत वितरण के मुद्दों को बढ़ायेगी। वर्तमान में इन उद्यमों के बारे में जानकारी उद्योग आधार ज्ञापनों, एमएसएमई डेटा बैंक, और वस्तु एवं सेवा कर नेटवर्क में बिखरी हुई है।

कोविड-19 में सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योग का योगदान- वर्तमान समय में (ZM S M E) एम एस एम ई पर भारत सरकार अपना वक्तव्य दिया और कहा कि अब एमएसएमई को बढ़ावा देंगें। अपने बजट भाषण में वित्तमंत्री ने बताया है कि कोविड 19 की अवधि में निर्धनों व अन्य संवेदनशील वर्गों लघु एवं मध्यम उद्योगों व अन्य प्रभावितों को राहत पहुंचाने के लिए मई 2020 व उसके पश्चात् तीन बार आत्मनिर्भर पैकेज (ANB 1.0, 2.0, 3.0) की घोषणा सरकार ने की । सभी आत्मनिर्भर भारत पैकेजों, जिनमें भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा किये गये उपाय भी शामिल हैं, का कुल वित्तीय प्रभाव लगभग रूपये 27.1 लाख करोड़ अनुमानित है। जो जीडीपी का 13 प्रतिशत से अधिक बनता है।

जन-धन, आधार और मोबाईल के उपयोग द्वारा सरकार लॉकडाउन में घोषित प्रथम प्रोत्साहन पैकेज के तहत प्रत्यक्ष नकद अंतरण प्रदान करने के लिए किया जा रहा है। जेएएम पर राज्वार उपस्थिति अलग-अलग होती है। किन्तु ऐसे दैनिक वेतनभोगी और आकस्मिक श्रमिकों के वेतन सहायता अंतरण के लिए उपयोग करने हेतु एक अच्छा तंत्र हो सकता है, जो लॉकडाउन में आवाजाही प्रभावित होने के कारण अपने नियोक्ताओं से

भुगतान एकत्र करने में असमर्थ रहे। अनौपचारिक श्रमिकों तथा 5 से 10 श्रमिकों वाले छोटे, सूक्ष्म उद्यमों के लिए राहत को इस तरह से लक्षित करने की आवश्यकता होगी कि यह उनके जीवन और आजीविका को बचाने के लिए समय पर उन तक पहुंचे।

देश में इन श्रमिकों की पहचान उनके यूनियन और अन्य श्रम बाजार संस्थान द्वारा की जा सकती है। सरकार को विनिर्माण तथा खुदरा व्यापार संघो के साथ सहयोग करने और उनके द्वारा अपने सदस्य व्यवसायों के साथ किये जा रहे सर्वेक्षणें के निष्कर्षों पर ध्यान देने की आवश्यकता होगी।

एक जुलाई 2020 में विद्यमान उद्यमों और नये उद्यमों के लिए पंजीकरण की सुविधा आसान बना दी गई। इस पंजीकरण व्यवस्था का नाम उद्यम रजिस्ट्रेशन रखा गया। वर्तमान आंकड़ों के अनुसार देश में 20 लाख से अधिक उद्यमी नए पोर्टल पर उद्यम रजिस्ट्रेशन करा चुके हैं। इस कोविड-19 के समय में ही चैंपियंस पोर्टल को एमएसएमई में आरंभ किया गया है। इसके अन्तर्गत समस्या का समाधान आनॅलाइन प्रक्रिया से किया जाता है। इस संकटकाल से सामना करने के लिए आत्मनिर्भर भारत अभियान के अन्तर्गत एमएसएमई में कई कार्यक्रम चलाये गये। जिसके एमरजेंसी क्रेडिट लाइन गारंटी स्कीम प्रमुख है। इसमें गारंटी और कॉलटरल फ्री ऋण दिये जाते हैं इसे भारत सरकार का वित्त सेवा विभाग देखता है।

इस महामारी के दौरान नवयुवकों को रोजगार के प्रति आकर्षित करने के देश भर में 31एमएसएमईडी आई और उनके शाखा कार्यालयों में नोडल अधिकारी नियुक्त किये गये हैं।

वर्तमान समय (कोविड काल) की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए सैनिटाइजर, मास्क, गाउन, पीपीकिट, हॉस्पिटल फर्नीचर इत्यादि के उत्पादन के लिए विशेष अभियान चलाया जा रहा है, जिसमें बेरोजगार युवाओं को रोजगार के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा है और युवा बड़ी संख्या में भाग ले रहे हैं। एमएसएमई के तहत विभिन्न शहरों कन्नौज, मुंबई, रामनगर, जमशेदपुर, इंदौर आदि स्थानों पर हेल्प डेस्क खोले गए हैं।

कोरोना काल के इस संकट की दशा में एमएसएमई के माध्यम से भारत को आत्मनिर्भर बनाने की दशा में सरकार निरन्तर प्रयास कर रही है। वोकल फॉर लोकल की विचारधारा से स्वदेशीकरण की प्रक्रिया को गति प्रदान की गई है। इसके माध्यम से ग्रामीण-स्तर पर देश अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाने का प्रयास किया जा रहा है। इसके तहत् ग्रामीण तथा शहरी युवाओं को रोजगार मिल सकेगा, जिससे कुशल एवं योग्य युवाओं का पलायन रूक सकेगा और भारत का ग्रामीण स्तर पर औद्योगिक एवं समावेशी विकास हो सकेगा।

केन्द्र एवं राज्य सरकारें एमएसएमई से जुड़ी अनेक योजनाएं चला रही हैं। इन सभी योजनाओं को विभिन्न विभागों द्वारा संचालित की जाती है। देश में बेरोजगार युवाओं के लिए यह वरदान साबित हुई है।

एमएसएमई क्षेत्र में कोविडकाल में सरकार द्वारा उठाए गए कदम- सूक्ष्म एवं लघु और मध्यम उद्योग (एमएसएमई) मंत्रालय ने 2020 के दौरान कई अग्रणी और

महत्वपूर्ण कदम उठाये गये। इनमें फंड ऑफ फंड के द्वारा वत्तीय सहायता प्रक्रिया, एमएसएमई की परिभाषा का विस्तार, एमएसएमई के मामलों का समाधान करने के लिए आईटी आधारित चैंपियन प्लेटफार्म की शुरूआत, खादी और ग्रामोद्योग के बीच उद्यमशीलता और स्व-रोजगार को सम्मिलित है। मंत्रलाय द्वारा वर्ष 2020 की विभिन्न पहलों का विवरण निम्नलिखित है।

1. आत्मनिर्भर भारत पहल
2. संकटग्रस्त परिसंपत्ति फंड- एमएसएमई के लिए उपऋण, उपऋण के लिए क्रेडिट गारंटी योजना (सीजीएसएसडी)

26 जून 2020 को संकटग्रस्त एमएसएमई को पूंजीगत समर्थन देने के लिए उपऋण के रूप में 20 हजार करोड़ रूपये का प्रावधान किया गया है। इसमें केन्द्र सरकार द्वारा 4 हजार करोड़ की सहायता दी गई है। इस वर्ष नवम्बर 2020 तथा 121 ऋणधारकों को 12.49 करोड़ रूपये की गारंटी दी गई।

लघु एवं सूक्ष्म और मध्यम् उद्योग के लिए फंड योजना- एमएसएमई के लिए 50 हजार करोड़ रूपये की इक्विटी सहायता देने के लिए 10 हजार करोड़ रूपये की राशि से आत्मनिर्भर भारत (एसआरआई) फंड (एमएसएमई योजना के लिए फंड ऑफ फंड योजना) के दिशा निर्देश 5 अगस्त 2020 को जारी किए गए। निधि प्रबंधन के लिए कंपनी अधिनियम 2013 के अन्तर्गत राष्ट्रीय लघु उद्योग कार्पोरेशन लिमिटेड (एनएसआईसी) की सहायक कंपनी एमएसआईसी वेंचर कैपिटल फंड लिमिटेड (एनवीसीएल) गठित की गई। एसआरआई फंड को क्रियाशील करने के लिए मंत्रालय कदम उठा रहा है।

एमएसएमई और उद्यम पंजीकरण- एमएसएमई मंत्रालय ने 26 जून 2020 को अधिसूचना संख्या एस ओ 2119 (ई) द्वारा संयत्र मशीन और उपकरण में निवेश और एमएमएमई के टर्नओवर के आधार पर एमएमएमई वर्गीकरण के आधार पर संयुक्त मानदंड अधिसूचित किये गये। वर्गीकरण के लिए संयुक्त मानदंड के आधार पर मंत्रालय द्वारा पूर्व विकसित किये गये। पोर्टल पर उद्यम पंजीकरण द्वारा उद्योग आधार पत्रक दाखिल करने की प्रक्रिया में बदलाव कर दिया। सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्योगों को निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया गया है।

1. सूक्ष्म उद्यम संयन्त्र, मशीन और उपकरणों पर निवेश पर एक करोड़ से अधिक न हो और टर्न ओवर पांच करोड़ से अधिक न हो।
2. लघु उद्यम-संयन्त्र मशीन और उपकरणों पर निवेश 10 करोड़ रूपये से अधिक न हो और टर्नओवर 50 करोड़ से अधिक न हो।
3. मध्यम उद्यम संयन्त्र मशीन और उपकरणों पर निवेश 50 करोड़ रूपये से अधिक न हो और टर्नओवर 250 करोड़ से अधिक न हो।

1 जुलाई 2020 से प्रभावी हुआ। यह समयानुसार होने वाले परिवर्तमन, वर्गीकरण की वस्तुगत प्रणाली स्थापित करने में सुगमता करने के उद्देश्य से किया गया। एमएसएमईडी अधिनियम 2006 के अंतर्गत एमएसएमई के वर्गीकरण के पूर्ववर्ती मानदंड संयन्त्र मशीन और उपकरणें के निवेश पर आधारित थी। इसके बाद से अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण बदलाव आए हैं। यह निर्माण और सेवा इकाईयों के लिए

विभिन्न है और वित्तीय सीमा के संबंध में बेहद कम था। इससे कई लाभ मिले हैं, जिससे उम्मीद की जाती है कि इससे एमएसएमई का विस्तार करने में सहायता मिलेगी। इसके साथ ही निर्यात के संबंध में टर्नओवर की सूक्ष्म, लघु या माध्यम श्रेणी की एमएसएमई टर्नओवर की सीमा को नहीं जोड़ा जायेगा। यह व्यवसाय की दृष्टि से एक नई पहल है। इस क्षेत्र को और अधिक विस्तार देने और नये रोजगार को बढ़ावा देने में सहायता मिलेगी। एमएसएमई क्षेत्र में परिवर्तन करने से निर्यात को आसान एवं सुगम बनाया जा सकेगा तथा उसे बढ़ावा मिल सकेगा।

चैंपियन पोर्टल की शुरूआत प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी द्वारा 1 जून 2020 को की गई। इसके माध्यम से छोटी इकाईयों को सहायता प्रदान कर उन्हें बड़ा बनाने के लिए आईसीटी पर आधारित एक प्रौद्योगिक प्रणाली तैयार की गई। इस पोर्टल के माध्यम से एमएसएमई की वर्तमान स्थिति में सहायता करने के साथ व्यापार में नये अवसर प्रदान कर एक नई दिशा में मार्गदर्शन दिया है। इसका कार्यालय नई दिल्ली में स्थापित किया गया है। जो कि मुख्य कार्यालय (हब) है। जबकि राज्यों में मंत्रालय के विभिन्न कार्यालयों और संस्थानों में स्पांक स्थापित किये गये हैं।

प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम (PMEGP)- एक मुख्य क्रेडिट-लिंक्ड सब्सिडी कार्यक्रम है। इस योजना के उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों के साथ-साथ शहरी क्षेत्रों में पारंपरिक कारीगरों और बेरोजगार युवाओं की मद्द करके गैर-कृषि क्षेत्र में सूक्ष्म उद्योगों की स्थापना के माध्यम से स्वरोजगार के अवसर पैदा करना है। खादी और ग्रामोद्योग (केवीआईसी। राष्ट्रीय स्तर पर नोडल एजेंसी है। राज्य/जिला स्तर पर केवीआईसी के राज्य कार्यालय, कॉपर बोर्ड, केवीआईबी और जिला उद्योग केन्द्र डीआईसी) क्रियान्वयन एजेंसी है।

कोविड-19 की परिस्थिति को देखते हुए आर्थिक व्यवहारिकता में बढ़ोत्तरी होगी। पीएमईजीपी इकाईयों को उत्पादों के विविधीकरण की अनुमति दी गई। जियो-टैंगिग पोर्टल को तैयार किया गया और इसका संचालन किया जा रहा है। इसके अन्तर्गत स्थापित हुए सूक्ष्म उद्यमों की जियो-मैपिंग की जायेगी।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. योजना, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, अगस्त 2020
2. कुरुक्षेत्र, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, जनवरी 2021
3. क्रानिकल
4. इकोनामिक टाइम्स
5. एमएसएमई रिपोर्ट, भारत सरकार, 2019- 2020
6. मिश्र एस.के. एवं पुरी वी.के., भारतीय अर्थव्यवस्था, 2017
7. आर्थिक समीक्षा, भारत सरकार, 2020-2021

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

औपनिवेशिक काल में शिक्षा : एक वर्णनात्मक अध्ययन

• धर्मेन्द्र यादव

सारांश- औपनिवेशिक काल के आरंभिक वर्षो में ईस्ट इंडिया कंपनी सहित अन्य विदेशी कम्पनियों का मुख्य उद्देश्य भारत के साथ व्यापार करना और अधिक से अधिक लाभ कमाना था। इन उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए उन्होंने लम्बे समय तक भारत की परंपरागत सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक और शैक्षिक पद्धतियों में हस्तक्षेप नहीं किया। प्राचीन काल से लेकर यूरोपियों के आगमन तक भारतीय शिक्षा बहुत ही समृद्ध थी लेकिन पाश्चात्य शिक्षा के दृष्टिकोण से यहां की शिक्षा व्यवस्था निश्चित रूप से पिछड़ी हुई थी। अपनी शासन व्यवस्था को चलाने व उसे सुदृढता प्रदान करने के लिए सन् 1813 में आज्ञा-पत्र के द्वारा भारत में पाश्चात्य शिक्षा प्रारंभ किया गया। नि:सन्देह कुछ साहसी अंग्रेज अधिकारियों और भारतीय समाज सेवकों के प्रयास से शिक्षा के क्षेत्र में सुधार हेतु अनेक महत्वपूर्ण कदम उठाए गये। इस दौरान अनेक स्कूल और कॉलेजों के माध्यम से भारत में आधुनिक शिक्षा प्रणाली का श्रीगणेश हुआ। ब्रिटिश काल में विभिन्न आयोगों के प्रतिबंधों और सरकारी अधिनियमों के माध्यम से भारतीय शिक्षा व्यवस्था में क्रमिक विकास हुआ। भारतीयों का बौद्धिक विकास करना इनका मुख्य उद्देश्य था। ब्रिटिश शिक्षा की मुख्य विशेषताएं यह थी कि इस शासन के दौरान संपूर्ण शिक्षा जिसमें प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च शिक्षा, व्यावसायिक व तकनीकी शिक्षा का विकास हुआ। अध्यापक शिक्षण प्रशिक्षण के संस्थान तथा नगरी शिक्षा की व्यवस्था की गई। इन विशेषताओं के अतिरिक्त ब्रिटिश शिक्षा की कुछ कमियां भी थी, जिसमें प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली व जनसाधारण की शिक्षा की अपेक्षा, शिक्षा का अंग्रेजी माध्यम, साम्राज्यवादी नीति का अनुसरण, शिक्षा के अस्पष्ट उद्देश्य व योजना आदि।

मुख्य शब्द- औपनिवेशिक काल, ईस्ट इंडिया कम्पनी, शैक्षिक नीतियां, विशेषताएं तथा कमियां

प्रस्तावना- भारत में औपनिवेशिक राज्य की स्थापना ने क्षेत्रीय नियंत्रण की स्थापना की और जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में परिवर्तन लाया। अन्य क्षेत्रों के समान ही शिक्षा भी एक ऐसा ही क्षेत्र था, जिसने ब्रिटिश राज्य के शक्ति हस्तांतरण के स्वरूप में व्यापक परिवर्तन लाने का कार्य किया। इस शासन व्यवस्था में अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए एवं नये मूल्यों तथा औचित्यों को विकसित करने के लिए शिक्षा को एक माध्यम के रूप मे इस्तेमाल किया। इस दौर में संचालित उपनिवेशी शिक्षा का उद्देश्य ईस्ट इंडिया कम्पनी के अधीन देश के विकास के स्थान पर उसका बेहतर नियंत्रण था। यही कारण है कि इस दौर में औपनिवेशिक शिक्षा के प्रचार-प्रसार पर विशेष ध्यान केन्द्रित किया गया,

* **असि.प्रोफेसर (गेस्ट), इतिहास विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कुणीधार मानिला (अल्मोड़ा) उत्तराखण्ड**

जो आज भी बदलते स्वरूप एवं प्रभावों के साथ समाज में अपनी एक अलग पहचान बना चुका है। इसी कारण समकालीन परिप्रेक्ष्य में इस शैक्षिक व्यवस्था का अध्ययन प्रासंगिक हो जाता है।

अध्ययन के उद्देश्य

1. औपनिवेशिक काल की शैक्षिक नीतियों का अध्ययन करना
2. औपनिवेशिक काल की शिक्षा की विशेषताओं अध्ययन करना
3. औपनिवेशिक काल की शिक्षा की कमियों अध्ययन करना

औपनिवेशिक काल की शैक्षिक नीतियां- ईस्ट इंडिया कम्पनी मूलतः वाणिज्यिक कम्पनी थी, इसलिए प्रारम्भिक वर्षो में इसका आधारभूत उद्देश्य व्यापार और लाभ कमाना था। प्रारम्भ में उन्होंने राज्य या क्षेत्र के विस्तार पर ध्यान केन्द्रित किया। शिक्षा के क्षेत्र में उनकी कोई भूमिका नहीं थी, यद्यपि मिशनरियों द्वारा धर्मार्थ विद्यालय स्थापित किया तथा शिक्षा का संवर्धन करने का प्रयास किया। ब्रिटिश सरकार ने सम्भवतः प्रतिकूल प्रतिक्रिया के भय और स्थानीय लोगों द्वारा उनकी भूमिका के विरोध के भय से तत्कालीक समाज के धर्म और संस्कृति के क्षेत्र में तटस्थता और अहस्तक्षेप बनाए रखने का प्रयास किया। लेकिन देश के विभिन्न क्षेत्रों, मिशनरियों, उदारवादियों, प्राच्यवादियों और लाभार्थियों द्वारा कम्पनी पर लगातार दबाव बनाया और तटस्थता छोडने और शिक्षा के उन्नयन का उत्तरदायित्व ग्रहण करने के लिए बाध्य किया।[1]

शिक्षा बहुत अधिक खर्चीली होने के कारण लोगों के ऐसे समूह को शिक्षित करने की बात कही गई जो धीरे-धीरे समाज के अन्य लोगों को शिक्षित करेंगे शिक्षा अभिजात वर्ग से होते हुए नीचे जनसाधारण तक जायेगी और इस तरह से नई सांस्कृतिक मूल्य और ज्ञान भारत में विकसित करने में सहायक होंगे, जिसे निस्यंदन (फिल्टरेशन) सिद्धांत कहा गया। पहली बार ब्रिटिश संसद ने कम्पनी के चार्टर में एक व्यापक खण्ड शामिल किया जिसके तहत गवर्नर जनरल इन काउंसिल को शिक्षा के लिए प्रति वर्ष कम से कम एक लाख रूपये की राशि निश्चित की गई। सन् 1813 ई. के चार्टर एक्ट की विशेषता यह थी कि इसमे पहली बार भारत में शिक्षा के विकास के लिए राज्य के उत्तरदायित्व को स्वीकार किया। बाद के वर्षो मे पश्चिमी शिक्षा और भारतीय प्राचीन शिक्षा के संबंध में विविध विषय पर विवाद हो गया।[2]

मैकाले और बाद के वर्षों मे बैंटिक ने 1935 ई. में एक प्रस्ताव के जरिये यह घोषणा की कि भारत में शिक्षा के लिए स्वीकृत समस्त निधि केवल अंग्रेजी शिक्षा पर ही खर्च की जायेगी। उनका मुख्य उद्देश्य ब्रिटिश सरकार और भारतीय जनता के बीच मध्यस्थ और भारत में भारतीय अंग्रेज पैदा करना था। मैकाले ने अधोगामी निस्यन्दन सिद्धान्त पर बल देते हुए कहा कि उच्च वर्ग को शिक्षित करने पर समाज के निम्न वर्ग तक शिक्षा स्वतः पहुँच जाएगी।

अंग्रेजी शिक्षा के विकास के संबंध में अगला प्रमुख ऐतिहासिक कदम अंग्रेजी सरकार द्वारा सन् 1854 ई. का वुड का डिस्पैच था। जिसे भारत मे सरकार के शिक्षा कार्यक्रम का मार्गदर्शी सिद्धांत कहा गया। डिस्पैच में स्पष्ट रूप से इस बात की घोषणा की गई है कि जिस शिक्षा को हम भारत मे प्रसारित करना चाहते हैं, उसका उद्देश्य यूरोप की

उन्नत कला विज्ञान दर्शन और साहित्य का विस्तार करना है। इस अधिनियम ने भारत मे आधुनिक शिक्षा को बुनियादी ढाँचा प्रदान किया।[3]

सन् 1857 ई. में कलकत्ता, बम्बई व मद्रास में तीन विश्वविद्यालयों की स्थापना की गई थी। श्रेणीबद्ध विद्यालयों, उच्च-माध्यमिक विद्यालयों, माध्यमिक विद्यालयों और प्रारंभिक विद्यालयों के बीच संजाल की स्थापना की गई। इन सरकारी प्रयासों के साथ-साथ मिशनरियों और कुछ व्यक्तियों द्वारा भी शिक्षा के प्रोत्साहन के लिए पहल की गई। सन् 1882 ई. में सर विलियम हण्टर की अध्यक्षता मे भारतीय शिक्षा आयोग की स्थापना की गई। इसनें जो अनुशंसा प्रस्तुत की उसमें प्राथमिक शिक्षा का विस्तार करने, स्त्री शिक्षा को प्रोत्साहन देने व शिक्षण संस्थाओं को अर्थिक अनुदान देने की अनुशंसा प्रमुख थी। लार्ड कर्जन ने शिक्षा के क्षेत्र में सरकार की उदासीन नीतियों की आलोचना करते हुए सरकार के शिक्षा के क्षेत्र में सक्रिय योगदान पर बल दिया। सन् 1902 ई. में सर थामस रेले की अध्यक्षता में भारतीय विश्वविद्यालय आयोग की स्थापना की गयी। इस आयोग ने भारत के विभिन्न प्रांतो का सर्वेक्षण एवं विश्वविद्यालयों का अध्ययन करके अपना प्रतिवेदन सन् 1902 ई. में प्रस्तुत किया। इस आयोग के मुख्य सुझावों और सिफारिशों के आधार पर सन् 1904 ई. में भारतीय विश्वविद्यालय अधिनियम पारित किया गया। इस अधिनियम द्वारा भारतीय विश्वविद्यालय के प्रशासन, अधिकार व कार्यक्षेत्र आदि में महत्वपूर्ण परिवर्तन किया गया। जिसमें मुख्य रूप से विश्वविद्यालय के कार्यक्षेत्र में विस्तार करते हुए परीक्षा संचालन के साथ-साथ शिक्षण अधिकार भी प्रदान किया गया। विश्वविद्यालयों से मान्यता प्राप्त करने के इच्छुक महाविद्यालयों के लिए नियम कठोर कर दिये गये। गर्वनर जनरल को विश्वविद्यालयों की क्षेत्रीय सीमाओं को निश्चित करने का अधिकार दिया गया।4 सन् 1917 ई. में सैडलर की अध्यक्षता में कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग की नियुक्ति की गयी। जिसने अपनी सिफारिशों में मुख्य रूप से स्नातक पाठ्यक्रम को तीन वर्षीय बनाने, प्रत्येक प्रान्त में माध्यमिक व इन्टरमीडिएट बोर्ड स्थापित करने, कला, इंजीनियरिंग, चिकित्सा, कानून, कृषि, वाणिज्य, शिक्षक प्रशिक्षण आदि विषयों को उच्च शिक्षा के क्षेत्र में रखने, आवासीय विश्वविद्यालय की स्थापना, स्त्री शिक्षा और प्रोद्यौगिकी एवं व्यवसायिक शिक्षा पर बल दिया। सन् 1929 ई. में सर फिलिप हर्टांग की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया गया। जिसमें प्राथमिक शिक्षा को राष्ट्रीय आवश्यकता मानते हुए इसका उत्तरदायित्व सरकार पर होने की सिफारिश की। माध्यमिक स्तर की शिक्षा के व्यावसायीकरण पर बल दिया गया और विश्वविद्यालयों में प्रवेश के नियमों को कठोर बनाने की सिफारिश की। सन् 1936-37 ई. में सरकार ने मेसर्स एबार्ड वुड को आमंत्रित किया। इन्होंने अपने प्रतिवेदन में व्यावसायिक शिक्षा और औद्योगिक शिक्षण संस्थाओं का अधिनियंत्रण स्वतंत्र होने और शिशु शिक्षा और नारी शिक्षा पर बल दिया।[5]

सन् 1944 ई0 में पूर्व माध्यमिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक सभी स्तरो की शिक्षा तथा उनके विभिन्न पहलुओं पर विचार करने के लिए सर जान सार्जेण्ट की अध्यक्षता में सार्जेण्ट योजना प्रस्तुत की गयी। जिसकी मुख्य सिफारिशों में प्राथमिक शिक्षा मातृभाषा में दी जाए, 14 वर्ष तक के बच्चों के लिए अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान,

विकलांगों के लिए विशिष्ट विद्यालय एवं विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की स्थापना व राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली की स्थापना।[6]

भारत में शिक्षा के सुधार हेतु समय-समय पर अनेक आयोगों की नियुक्ति की गयी। जिसका मुख्य उद्देश्य भारतीय शिक्षा में संख्यात्मक व गुणात्मक सुधार करना था। औपनिवेशिक शिक्षा ने ज्ञान के क्षितिज को अधिक व्यापक बनाया। विशेषकर मुद्राणालयों की स्थापना और पुस्तकों की आसान उपलब्धता ने परम्परागत बाधाओं को दूर किया।

औपनिवेशिक शिक्षा की विशेषताएँ- औपनिवेशिक शासन के दौरान भारत में शिक्षा का उद्देश्य भारतीयों का बौद्धिक विकास करना था साथ ही यूरोपियन साहित्य तथा विज्ञान संबंधी ज्ञान का प्रचार-प्रसार करना था। शिक्षा के प्रसार ने भारत में आर्थिक विकास को प्रोत्साहित किया और अनेक उद्योग-धन्धे स्थापित किए गये। शिक्षा में निम्नवत् छन्नीकरण सिद्वान्त अथवा अधोगामी निस्यन्दन सिद्वान्त का प्रयोग किया गया। उनका विचार था कि अंग्रेजी माध्यम से शिक्षित सम्भ्रान्त वर्ग के रहन-सहन, आचार-विचार तथा सभ्यता का प्रभाव निम्न वर्ग पर पड़ेगा तथा इस प्रकार से निम्न वर्ग स्वत: ही कुछ न कुछ अंशों में शिक्षित हो जायेगा।[7]

ब्रिटिश शासन के दौरान भारत में स्तरीकृत शिक्षण-प्रशिक्षण की व्यवस्था प्रचालित की गई। संपूर्ण शिक्षा को प्राथमिक, माध्यमिक तथा उच्च शिक्षा के तीन स्पष्ट स्तरों में विभक्त किया गया था। उच्च शिक्षा के लिए डिग्री कॉलेजों तक विश्वविद्यालयों की स्थापना की गई। शिक्षा में औपचारिक शिक्षा प्रणाली का प्रारम्भ किया गया। मौखिक, लिखित तथा क्रियात्मक परीक्षा के द्वारा छात्रों के शैक्षिक विकास का मापन किया जाता था।[8]

ब्रिटिश शासन के दौरान व्यवसायिक तथा तकनीकी शिक्षा का विधिवत् प्रारम्भ किया गया। इंजीनियरिंग कॉलेज, तकनीकी शिक्षा संस्थान, कृषि कॉलेज आदि संस्थायें खोली गई। हाईस्कूलों के पाठ्यक्रमों में भी तकनीकी व व्यावसायिक शिक्षा को स्थान दिया गया।[9]

प्रारम्भिक, माध्यमिक, उच्च, व्यवसायिक व तकनीकी शिक्षा के शिक्षण व प्रशिक्षण पर किये जाने वाले व्यय की व्यवस्था को क्रमबद्ध, स्थायी तथा वैज्ञानिक बनाया गया। शैक्षिक वित्त के प्रमुख साधन- सहकारी सहायता, स्थानीय संस्था कोष, नगरपालिका कोष, शिक्षा शुल्क तथा धर्मस्व उपहार व निधि दान थे।[10]

शिक्षा के क्षेत्र में आधुनिक विज्ञान के प्रवेश से भारतीय शिक्षा का क्षेत्र विस्तृत हुआ, तथा भारतीय ज्ञान व शिक्षा विश्व के अन्य विकसित देशों की शिक्षा के सम्पर्क में आ सकी। शिक्षा के क्षेत्र में अनेक नूतन प्रयोग किए गए जिससे शिक्षा की गुणवत्ता में वृद्धि हुई तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण व शिक्षा प्रसार के नवीन साधनों का विकास हुआ।[11]

औपनिवेशिक शिक्षा की कमियाँ- ब्रिटिश काल में प्रचलित शिक्षा व्यवस्था देश की शैक्षिक आवश्यकता को पूरा करने में असफल रही थी। शिक्षा की योजना बनाते समय राष्ट्रीय आवश्यकताओं व क्षमताओं को अनदेखा करके ब्रिटिश हितों का ध्यान रखा गया था। शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी होने के कारण भारतीयों के मौलिक चिंतन का ह्रास हुआ।[12]

भारतीय संस्कृति की अवहेलना से भारतीयों का धार्मिक व नैतिक पतन हुआ। शिक्षा के क्षेत्र में निम्नवत् छन्नीकरण का सिद्वान्त अपनाया गया जिससे जनसाधारण को

शिक्षा का कोई लाभ नहीं हुआ और इससे सामाजिक रूप से पिछड़े वर्गों तथा समुदायों का पिछड़ापन स्थायी बन गया। समाज में विद्यमान विभाजन अधिक चौड़ा हो गया।[13]

निष्कर्ष- शिक्षा किसी भी समाज में नियंत्रण एवं विकास की गति को बल देने का सर्वाधिक महत्वपूर्ण आधार कारक है। यह कोई नवीन विचारधारा नही है। वैदिक कालीन एवं बौद्ध कालीन शिक्षा व्यवस्था से लेकर आधुनिक शिक्षा व्यवस्था पर दृष्टि डालने से इस बात की स्पष्ट झलक मिलती है। इसी महत्व को स्वीकार करते हुए औपनिवेशिक काल में बदले स्वरूप में शिक्षा व्यवसथा के बदलाव पर जोर दिया गया। इस काल में शिक्षा का क्रमिक विकास हुआ। शिक्षा को प्रोत्साहित तथा विकसित करने के लिए वित्तीय व्यवस्था तथा नए विद्यालय और विश्वविद्यालयों की स्थापना की गईं। जिसने देश में नए सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक वयवस्था और विचार का विकास किया। इस शिक्षा के लाभाभोगी अधिकतर समाज के उच्च वर्ग के थे निम्न वर्ग को उससे ज्यादा लाभ नहीं हुआ।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. गुप्ता,एस.पी. एवं गुप्ता,ए. (2015) भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एवं समस्यायें, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, प्र. सं. 91-92
2. वर्मा, जी.एस. (1997) आधुनिक भारतीय शिक्षा एवं समस्यायें, लायल बुक डिपो, मेरठ, प्र. सं. 27-28
3. पाठक, पी.डी. (2005) भारतीय शिक्षा और उनकी समस्याएँ, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, प्र. सं. 65-67
4. भार्गव, एल. (2004) भारतीय शिक्षा व्यवस्था: एक परिदृश्य, वंदना पब्लिकेसन, नई दिल्ली, प्र. सं. 54-64
5. सिंह, वी.बी. (2001) भारतीय में शिक्षा व्यवस्था का विकास, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ, प्र. सं. 162-175
6. त्यागी, जी. (2005) भारतीय शिक्षा का परिदृश्य, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, प्र. सं. 115-120
7. वर्मा, जी.एस. (1997) आधुनिक भारतीय शिक्षा एवं समस्यायें, लायल बुक डिपो, मेरठ, प्र. सं. 38-39
8. शर्मा, एल.एम. (1999) भारतीय में शिक्षा प्रणली का उद्भव एवं विकास, एस. के. पब्लिकेशर्स, गुडगांव, प्र. सं. 139-141
9. जौहरी, बी.पी. एवं पाठक, पी.डी. (2006) भारतीय शिक्षा का इतिहास, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, प्र. सं. 166-169
10. भटनागर, एस. (2008) धुनिक भारतीय शिक्षा एवं समस्यायें, लायल बुक डिपो, मेरठ, प्र. सं. 49-51
11. शर्मा, एल.एम. (1999) भारतीय में शिक्षा प्रणली का उद्भव एवं विकास, एस. के. पब्लिकेशर्स, गुडगांव, प्र. सं. 134-139
12. वर्मा, जी.एस. (1997) आधुनिक भारतीय शिक्षा एवं समस्यायें, लायल बुक डिपो, मेरठ, प्र. सं. 38-39
13. गुप्ता,एस.पी. एवं गुप्ता,ए. (2015) भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एवं समस्यायें, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, प्र. सं. 95-96

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

उच्च शिक्षा में गुणवत्ता उन्नयनः एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

• सुधा गुप्ता

सारांश- किसी भी राष्ट्र के उत्तरोत्तर विकास के लिए शिक्षा सर्वोत्कृष्ट साधन है। शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य व्यक्ति, समाज एवं राष्ट्र का उत्थान करना है। उच्च शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थी के व्यक्तित्व का समग्र विकास करना तथा उसे राष्ट्र की सेवा में एक ऐसी उत्पादक इकाई के रूप में तैयार करना है जो राष्ट्र की आवश्यकताओं एवं विशिष्टताओं के अनुरुप हो। 21वीं सदी के ज्ञान आधारित समाज में शिक्षा का गुणवत्ता पूर्ण होना अति आवश्यक है। वर्तमान में उच्च शिक्षा के क्षेत्र में निरन्तर गिरावट आ रही है और उसकी गुणवत्ता कम हो रही है। शिक्षा की गुणवत्तापूर्ण बनाने में बहुत से अवरोधक तत्व है, जैसे उच्च शिक्षा का व्यवसायीकरण आधारभूत सुविधाओं का अभाव, अव्यावहारिक पाठ्यक्रम, स्तरहीन शोध, शिक्षा के मापदण्डों में असमानता, शिक्षा के क्षेत्र में बढ़ता राजनीतिक हस्तक्षेप आदि। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के तहत शिक्षा क्षेत्र में क्रान्तिकारी बदलाव लाने की बात की गई है। उच्च शिक्षा को गुणवत्ता पूर्ण एवं सार्थक बनाने के लिए उच्च शिक्षा विभाग में एक पंचवर्षीय विजन योजना, शिक्षा, गुणवत्ता, उन्नयन तथा समावेशी कार्यक्रम आरम्भ की है, जिसका उद्देश्य शिक्षा को गुणवत्तापूर्ण और रोजगार परक बनाना है, इसके अतिरिक्त शोध एवं नवाचार की संस्कृति को बढ़ावा देने के लिए कई महत्वपूर्ण कदम उठाने का संकल्प लिया गया है। उच्च शिक्षा को सार्थक एवं गुणवत्तापूर्ण बनाने के लिए व्यवहार में ठोस एवं सार्थक योजनाएँ कार्यान्वित की जाती है, तो निश्चित रूप से उच्च शिक्षा 21वीं सदी की आवश्यकताओं के अनुरूप सफल एवं सार्थक हो सकती है।

मुख्य शब्द- शिक्षा, गुणवत्ता, समग्र विकास, योजना, शिक्षा, गुणवत्ता

प्रस्तावना- शिक्षा मानव जीवन के उन्नयन हेतु आधारशिला है। महान दार्शनिक एवं शिक्षाविद् डॉ. राधाकृष्णन मनुष्य को सही अर्थों में मनुष्य बनाने के लिए शिक्षा को सर्वाधिक आवश्यक मानते थे। उनका मत था कि शिक्षा वह है जो मनुष्य को ज्ञान प्रदान करने के साथ-साथ उसके हृदय एवं आत्मा का भी विकास करती है। शिक्षा ही व्यक्ति को सभी सांसारिक बन्धनों से मुक्त कराती है। इसीलिए कहा गया है कि, ''सा शिक्षा या विमुक्तयैः।'' शिक्षा व्यक्ति को स्वयं के विकास के साथ-साथ समाज एवं राष्ट्र के विकास के लिए भी प्रेरित करती है। शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति विभिन्न सामाजिक वर्गों तथा विभिन्न क्षेत्रों में व्याप्त असमानताओं को समाप्त कर एक ज्ञानवान

*** प्राध्यापक, राजनीतिशास्त्र, महारानी लक्ष्मीबाई कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय (शासकीय स्वशासी उत्कृष्ट महाविद्यालय) ग्वालियर (म.प्र.)**

समाज की रचना करना है। इस प्रकार शिक्षा मानव समाज को विकास के मार्ग पर अग्रसर करती है, शिक्षा सम्पन्न व्यक्ति ही राष्ट्र की अमूल्य निधि है।

उच्च शिक्षा का उद्देश्य छात्र के व्यक्तित्व का विकास करना तथा उसे राष्ट्र की सेवा में एक ऐसी उत्पादक इकाई के रूप में तैयार करना है जो राष्ट्र की आवश्यकताओं एवं विशिष्टताओं के अनुरूप हो। इस प्रकार उच्च शिक्षा के द्वारा समुदाय एवं राष्ट्र का चहुँमुखी विकास होता है, जिससे मानवता पर आधारित विकास गतिमान होता है और सामाजिक समरसता तथा सामाजिक न्याय को बल मिलता है। 21वीं सदी की आवश्यकताओं को देखते हुए शिक्षा का गुणवत्तापूर्ण होना अति आवश्यक है, जिससे श्रेष्ठ, चिन्तनशील, बहुमुखी प्रतिभा वाले रचनात्मक व्यक्तियों का विकास हो सके। कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर महाविद्यालयों को देश की बौद्धिक क्षमता का केन्द्र कहा करते थे। उनके शब्दों में विश्वविद्यालय किसी जीवित कोशिश का केन्द्र बिन्दु, राष्ट्रीय मानस की रचनात्मक क्षमता का केन्द्र होते हैं।

21वीं सदी का समाज ज्ञान आधारित समाज होगा, अत: मानव जाति के विकास के लिए शिक्षा अपरिहार्य सम्पदा है, क्योंकि किसी भी व्यक्ति, समाज अथवा राष्ट्र की शक्ति का निर्धारण उसके ज्ञान की पूँजी के आधार पर होगा। आने वाले युग में युद्ध, तोप, टैंक या मिसाइल से नहीं वरन् सूचना एवं ज्ञान की ताकत से बाजार में लड़े जाएँगे। हमारे देश में आज भी आजादी का बहुत बड़ा हिस्सा शिक्षा से वंचित है। वैश्वीकरण, उदारीकरण और निजीकरण के युग में शिक्षा को पूरी तरह से बाजारोन्मुखी बना दिया है। शिक्षा धन कमाने का व्यवसाय बन गई है। शिक्षा का वास्तविक अर्थ भुला दिया गया है।

उच्च शिक्षा के क्षेत्र में भी निरन्तर गिरावट देखने को मिल रही है, जिसके कारण उसकी गुणवत्ता कम हो रही है। वास्तव में गुणवत्तापूर्ण शिक्षा ही आधुनिक समाज की माँग है। गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा का अर्थ है, शिक्षा में गुणों का समावेश करना जिससे शिक्षा और विद्यार्थियों के उद्देश्यों की प्राप्ति हो सके। परन्तु यह एक लम्बी एवं श्रमसाध्य प्रक्रिया है, जिसके लिए निरन्तर ठोस प्रयास करने की आवश्यकता है। वर्तमान समय में यद्यपि देश में उच्च शिक्षा के विस्तार में शैक्षणिक संस्थानों तथा विद्यार्थियों की पंजीकृत संख्या के आधार पर तेजी आई है, लेकिन उत्कृष्टता एवं गुणवत्ता स्थापित करने में हम बहुत पीछे रह गए हैं।

गुणवत्ता के निर्धारण हेतु देश में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने 1994 में राष्ट्रीय मूल्यांकन एवं प्रत्यायन परिषद् 'नैक' की स्थापना की है, जिसके द्वारा उच्च शिक्षा में गुणवत्ता निर्धारण के मापदण्ड निश्चित किए गए, परन्तु दुर्भाग्यवश आज उच्च शिक्षा को गुणवत्ता बनाने में बहुत से अवरोधक है, जिसके कारण उच्च शिक्षा में गिरावट आ रही है।

उच्च शिक्षा की गुणवत्ता में गिरावट के कुछ प्रमुख कारण

1. उत्कृष्ट शोध पत्रों की संख्या बहुत कम- हमारे यहाँ उत्कृष्ट शोध-पत्रों की संख्या न के बराबर है क्योंकि हमारे यहाँ शोध को गम्भीरता से नहीं लिया जाता केवल अध्यापन पर विशेष बल दिया जाता है। शोध कार्यों में दोहराव की बहुत बड़ी समस्या है, अधिकांश शोध ग्रन्थ मानकों पर खरे नहीं उतरते। सामाजिक विज्ञानों में किए गए शोध गुणवत्ता की दृष्टि से बहुत पीछे है, जबकि प्राकृतिक

विज्ञानों में किए गए शोधों की स्थिति कुछ बेहतर है। विश्व में ऑकसफोर्ड, कैम्ब्रिज, हार्वर्ड, जैसे महत्वपूर्ण शिक्षा के केन्द्र हैं, जो अपने शोध के उच्च स्तर एवं शोधार्थियों की गुणवत्ता के कारण जाने जाते हैं। अमर्त्य सेन (हार्वर्ड विश्वविद्यालय) जगदीश भगवती (कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय) आदि ने अपने उच्च स्तर के शोध के कारण न केवल भारत का मान बढ़ाया वरन् जिन विश्वविद्यालयों से ये जुड़े उनकी प्रतिष्ठा को भी बढ़ाया।

वर्ष 2018 में पूरे विश्व में करीब 25 लाख शोध-पत्र प्रकाशित हुए, इनमें चीन के शैक्षणिक संस्थानों के 5.25 लाख, अमेरिका से 4.22 लाख तथ भारत से 1.35 लाख शोध-पत्र प्रकाशित हुए, परन्तु भारत में अच्छे शोध-पत्रों की संख्या केवल 800 ही है। शोध की गुणवत्ता पूरी दुनिया में प्रकाशित होने वाली श्रेष्ठ 100 शोध पत्रिकाओं के आधार पर तय होती है। इन श्रेष्ठ 100 शोध पत्रिकाओं में चीन में प्रकाशित होने वाले शोध-पत्रों की संख्या हर साल करीब 9000 होती है, जबकि भारत से प्रकाशित होने वाले शोध-पत्रों की संख्या केवल 1500। इन 100 श्रेष्ठ पत्रिकाओं में भी 'नेचर' सर्वश्रेष्ठ है, जिसमें भारत से एक वर्ष में औसतन महज 5 शोध-पत्र ही प्रकाशित हो पाते हैं, कहने का तात्पर्य यह कि शोध-पत्रों की गुणवत्ता के हिसाब से हम बहुत पीछे हैं।

2. **शिक्षक-विद्यार्थी अनुपात-** भारत में लगभग 40,000 महाविद्यालय हैं, जहाँ परास्नातक एवं स्नातकोत्तर शिक्षण होता है। विश्वविद्यालय, मुख्य रूप से शोध केन्द्र होने चाहिए, परन्तु भारत के इन विश्वविद्यालयों में करीब चार करोड़ विद्यार्थी पढ़ते हैं, इन्हें पढ़ाने वाले शिक्षकों की संख्या लगभग 15 लाख है। अतः शिक्षक विद्यार्थी अनुपात 1.25 या 1.26 है, जो कि उचित नहीं है। विश्व में प्रथम रैकिंग प्राप्त एम.आई.टी. (कैम्ब्रिज यू.एस.ए.) में देखने पर पता चलता है कि उच्च कोटि की पढ़ाई एंव शोध कार्य के अतिरिक्त शिक्षक विद्यार्थी अनुपात 1:4 है। प्राध्यापकों की कुल संख्या 3065 है और अन्तर्राष्ट्रीय विद्यार्थियों की संख्या 3730 है। इस संस्थान का कुल स्कोर 100 है। भारत में यदि आई.आई.टी. मुम्बई की तुलना की जाए तो पता चलता है कि यद्यपि यहाँ की पढ़ाई भी उच्च कोटि की है परन्तु शिक्षक विद्यार्थी का अनुपात 1.11 है। पढ़ाने वाले प्राध्यापकों की संख्या 1015 है और अन्तर्राष्ट्रीय विद्यार्थियों की संख्या केवल 166 है। अतः आई.आई.टी. मुम्बई का स्कोर 46.4 है और वह 177वें स्थान पर है। इससे स्पष्ट है कि हमारे यहाँ की स्थिति संतोषजनक नहीं है।

3. **राजनीतिक हस्तक्षेप-** हमारे यहाँ वर्तमान में कुलपति का पूरा कार्यकाल राजनीति के दलदल में फसे रहने, अपनी सत्ता बरकरार रखने में बीत जाता है। इस प्रकार उच्च शिक्षा के प्रबन्ध में राजनेताओं का बढ़ता दखल उच्च शिक्षा संस्थानों की स्वायत्ता को खतरे में डालता है। ऐसी स्थिति में शिक्षा में गुणवत्ता शिक्षा कैसे हो सकती है।

4. **आधारभूत संरचना एवं सुविधाओं की स्थिति असन्तोषपूर्ण असन्तोषजनक-** भारत की उच्च शिक्षा में बुनियादी ढाँचे की स्थिति बहुत शोचनीय है। मुख्य रूप से सार्वजनिक क्षेत्र द्वारा संचालित संस्थानों में आधारभूत संरचना तथा भौतिक सुविधाओं की स्थिति अच्छी नहीं है। वर्तमान में यू.जी.सी. के अन्तर्गत भारत में 988 विश्वविद्यालय हैं, जिनमें केन्द्र के 54, राज्यों के 429, MhEM 125 तथा प्राइवेट

380 सम्मिलित है। इनमें से एक भी टॉप 500 की सूची में शामिल नहीं है। टॉप 500 में केवल 7 आई.आई.टी. और इण्डियन इन्स्टीट्यूट ऑफ साइंस है जो यू.जी.सी. के अन्तर्गत नहीं आते हैं।

उच्च शिक्षा संस्थाओं की गुणवत्ता को मापने के लिए क्यूज रैंकिंग सबसे प्रतिष्ठित रैंकिंग है, इसके द्वारा विश्व में 1000 संस्थानों का आंकलन किया जाता है। इनमें टॉप 100, टॉप 500, टॉप 1000 आदि रैंकिंग की जाती है। सन् 2022 में क्यू.एस. टॉप 100 के आधार पर अमेरिका के 29वाँ, यू.के. का 17वाँ, ऑस्ट्रेलिया का 11वाँ, दक्षिण कोरिया का 8वाँ, चीन का 7वाँ और भारत का 0वाँ स्थान रहा। इससे स्पष्ट होता है कि क्यू.एस. रेंकिंग के आधार पर भारत के उच्च शिक्षा संस्थानों की स्थिति अत्यधिक चिन्तनीय है और उसकी गुणवत्ता निम्न स्तर की है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति में उच्च शिक्षा- राष्ट्रीय शिक्षा नीति- 2020, शिक्षा के क्षेत्र में आमूल-चूल परिवर्तन का लक्ष्य रखती है। यह 21वीं शताब्दी की पहली शिक्षा नीति है, जिसका लक्ष्य देश के विकास के लिए अनिवार्य आवश्यकताओं को पूरा करना है। यह नीति भारत की परम्परा और सांस्कृतिक मूल्यों के आधार को बनाए रखते हुए 21वीं सदी की शिक्षा के लिए आकांक्षात्मक लक्ष्यों, जिसमें एस.डी.डी.-4 शामिल है, के संयोजन में शिक्षा व्यवस्था, उसके नियमन तथा गवर्नेन्स सहित सभी पक्षों के सुधार एवं पुनर्गठन का प्रस्ताव रखती है। उच्च शिक्षा में गुणवत्ता लाने के उद्देय से मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने देश में शोध एवं नवाचार की संस्कृति को बढ़ावा देने के लिए उच्च शिक्षा विभाग में कई नई योजनाएँ प्रारम्भ की हैं। इसी के अन्तर्गत एक पाँच वर्ष की विजन योजना तय की गई है- शिक्षा, गुणवत्ता उन्नयन तथा समावेशी कार्यक्रम (ई.क्यू.आई. सी.) इस योजना के द्वारा उच्च शिक्षा में गुणवत्ता तथा उत्कृष्टता लाने और उसे रोजगार परक बनाने का लक्ष्य रखा गया है।

सतत् विकास लक्ष्यों में SDG-4 उच्च शिक्षा में गुणवत्ता से सम्बन्धित है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने मई 2018 में उच्च शिक्षा के लिए गुणवत्ता अधिदेश का शुभारम्भ किया। इस अधिदेश का उद्देश्य उच्च शिक्षा संस्थानों की गुणवत्ता में सुधार करना है और उच्च शिक्षा का इस तरह से विकास करना है जो देश की अगली पीढ़ी को महत्वपूर्ण कौशल ज्ञान एवं नैतिक मूल्यों से समृद्ध कर सके।

गुणवत्ता अधिदेश के प्रमुख कार्य क्षेत्र-

(1) **मूल्यांकन सुधार-** इस अधिदेश का उद्देश्य शिक्षार्थी मूल्यांकन को अधिक सार्थक एवं प्रभावपूर्ण बनाना है तथा इसे सीखने के प्रतिफल (Learning Out Comes) से जोड़ना है, क्योंकि शिक्षार्थी मूल्यांकन देश की उच्च शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है ओर सम्बन्धित समस्याओं के समाधान का प्रयास करता है।

(2) **सतत-** यह उच्च शिक्षण संस्थानों में पर्यावरण अनुकूल एंव सतत परिसर विकास की एक रूपरेखा है, जो विश्वविद्यालयों को चिन्तनशील नीतियों और अभ्यासों को अपनाने के लिए प्रोत्साहित करता है। इसका उद्देश्य हरित और सतत् विधियों को अपनाकर परिसर की पर्यावरण गुणवत्ता में वृद्धि करना है।

(3) **मूल्य प्रवाह-** यह उच्च शिक्षा संस्थानों में मानवीय मूल्यों और पेशेवर नैतिकता के विकास के लिए जारी दिशा निर्देश हैं। यह शैक्षिक संस्थानों में शिक्षा की प्रक्रिया पर चर्चा करने और उनहें व्यवस्थित करने की आवश्यकता को चिन्हित करता है तथा उन बातों पर ध्यान केन्द्रित करता है, जो मानव मूल्यों, नैतिकता की संस्कृति के प्रवेश में मदद कर सकते हैं।

(4) **गुरु दक्षता-** यह एक माह का थ्ंबनसजल प्दकनबजपवद च्तवहतंउउम ;थ्प्च्द्ध है। इसका उद्देश्य नवनियुक्त सदस्य के उच्च शिक्षा में शिक्षार्थी केन्द्रित दृष्टिकोण, सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (ICT) एकीकृत शिक्षण और अध्यापन/ शिक्षण के लिए नए शिक्षण दृष्टिकोणों को अपनाने हेत जागरूक एवं प्रेरित करना है। यह नवनियुक्त शिक्षकों के लिए एक अनिवार्य कार्यक्रम है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग इस क्षेत्र में Recruit Return and Role Model दृष्टिकोण को आगे बढ़ाने का लक्ष्य रखता है। चूँकि शिक्षक किसी भी शिक्षा प्रणाली में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अतः ज्ञानवान शिक्षकों की नियुक्ति और उन्हें सेवा में बनाए रखना महत्वपूर्ण है। ऐसे शिक्षकों को छात्रों के लिए रोल मॉडल के रूप में पेश करने की आवश्यकता है और इसके लिए संकाय प्रेरण कार्यक्रम महत्वपूर्ण एवं आवश्यक है।

(5) केयर@Consortium वित Academic and Research Ethics (CARE)& यह कार्यक्रम उच्च गुणवत्ता युक्त शोध को बढ़ावा देने संकाय सदस्यों की समग्रता बनाए रखने और ज्ञान के सृजन को बढ़ावा देने के महत्व पर बल देता है ताकि विभिन्न विषयों सम्बन्धी गुणवत्तापूर्ण शोध-पत्रिकाओं (Journals) की निगरानी और पहचान हो सके।

(a) इस कार्यक्रम के अन्तर्गत एक अधिकार प्राप्त समिति का गठन किया गया है, जिसमें भारतीय कृषि शोध परिसर (ICAR) भारतीय आयुर्विज्ञान शोध परिषद् (ICMR) आदि जैसे सभी नियामक प्राधिकरणों के प्रतिनिधि शामिल है।

(b) यह उन अच्छी शोध-पत्रिकाओं की पहचान करता है, जिसमें शिक्षकों के शोध लेख प्रकाशित किए जा सकते हैं।

(c) इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए UGC ने पुणे विश्वविद्यालय को नोडल विश्वविद्यालय और तेजपुर विश्वविद्यालय (असम) MSU (बड़ौदा), हैदराबाद विश्वविद्यालय, JNU (दिल्ली) को 4 क्षेत्रीय विश्वविद्यालयों के रूप में चुना है।

(d) इस सम्बन्ध में CARE वेबसाइट और गुणवत्तापूर्ण शोध-पत्रिकाओं की सन्दर्भ सूची अधिक जागरूकता पैदा करने और अकादमिक, गुणवत्ता, समग्रता एंव नैतिक प्रकाशन (पैसे लेकर शोध लेख छापने वाली पत्रिकाओं (Predatory Journals) के महत्व को कम करते हुए) को बढ़ावा देने में उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

(e) अच्छे शोध (जो पेशेवर, नैतिक एवं अच्छी गुणवत्ता का हो) के उद्देश्य की पहचान करने की आवश्यकता है। यह सूची उन वैज्ञानिक पत्रिकाओं की पहचान करती है, जिनमें अधिक सार्थक, गुणवत्तापूर्ण और नैतिक शोध प्रकाशित किए जा सकते है।

गुणवत्ता बढ़ाने हेतु कुछ अन्य कार्यक्रम-

(1) दीक्षारम्भ- यह छह दिवसीय छात्र-प्रेरण कार्यक्रम (Programme) है, जिसका उद्देश्य नए छात्रों में लोकाचार एवं संस्कृति का ज्ञान कराने के साथ-साथ उन्हें नए वातावरण के प्रति सहज एवं अनुकूल बनाने में सहायता करता है।

(2) परामर्श- यह उच्च शिक्षा में गुणवत्ता आश्वासन (Quality Assurance) को बढ़ावा देने के लिए राष्ट्रीय प्रत्यायन और मूल्यांकन परिषद (National Accrediation and Assessment Council : NAAC) की मान्यता चाहने वाले संस्थानों को परामर्श सहयोग देने की योजना है यह परामर्श सहयोग प्राप्त करने वाले उन संस्थानों में शोध सहयोग एवं संकाय विकास के लिए ज्ञान, सूचना और अवसरों को साझा करने की सुविधा भी देगा। सरकार ने वर्ष 2022 तक सभी उच्च शिक्षा संस्थानों के NAAC द्वारा मान्यता प्राप्त कर लेने का लक्ष्य निर्धारित किया है।

(3) स्कीम फॉर ट्रांस डिसिप्लनरी रिसर्च फॉर इण्डियाज डेवलपमेन्ट इकॉनॉमी (Scheme for Trans Disciplinary Research for India's Developing Economy : STRIDE) यह बहुविषय और अंततः विषय शोध के प्रोत्साहन के लिए कार्यान्वित एक योजना है, इसके तीन घटक हैं -

(a) विविध विषयों में शोध क्षमता निर्माण हेतु।

(b) सभी कार्यक्रमों/स्रोतों में सामाजिक नवोन्मेष और शोध की मदद से समस्या समाधान कौशल की वृद्धि हेतु।

(c) मानविकी एवं मानव विज्ञान में चिन्हित महत्व वाले क्षेत्रों में सामाजिक रूप से प्रासंगिक स्थानीय रूप से आवश्यकता आधारित, राष्ट्रीय स्तर पर महत्वपूर्ण एवं विश्व स्तर पर उल्लेखनीय प्रभाव शोध परियोजनाओं के वित्त पोषण के लिए सहायता प्रदान करने हेतु। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, ऐसी परियोजनाओं की पहचान और मूल्यांकन करने में मदद कर रहा है।

इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय शिक्षा नीति में उच्च शिक्षा को गुणवत्तापूर्ण बनाने के उद्देश्य से कई और ठोस कदम उठाए गए है, जैसे उच्च शिक्षा में एक मजबूत अनुसन्धान संस्कृति तथा अनुसन्धान क्षमता को बढ़ाने के लिए एक शीर्ष निकाय के रूप में National Research Foundation की स्थापना, बहुविषयक् विश्वविद्यालय की स्थापना, सकल नामांकन अनुपात (GER) को वर्ष 2033 तक 27 प्रतिशत से बढ़कर 50 प्रतिशत करने का लक्ष्य बनाना, उच्च शिक्षा संस्थानों के लिए श्रेणीबद्ध स्वायत्ता स्थापित करना, इसके अतिरिक्त नई शिक्षा नीति में उच्च शिक्षा के लिए शिक्षा के मद में सबल घरेलू उत्पाद के 6 प्रतिशत के एक निश्चित प्रतिशत के रूप में बजट आवंटन की भी बात कही है।

निष्कर्ष- इसमें कोई सन्देह नहीं कि सर्वांगीण विकास की आकांक्षा रखने वाले राष्ट्र को निश्चित रूप शिक्षा को सर्वोच्च महत्व देना होगा। देश के चहुमुखी विकास के लिए और उसे विश्व में प्रतिष्ठा दिलाने के लिए उच्च शिक्षा का सार्थक एवं गुणवत्तापूर्ण होना अति आवश्यक है। नई शिक्षा नीति के तहत निश्चित रूप से उच्च शिक्षा को सफल एवं गुणवत्तापूर्ण बनाने हेतु कई ठोस एवं व्यवहारिक कदम उठाने की बात कही गई है। यदि वास्तव में इन प्रयासों को व्यवहार रूप में लाया जाता है, तो निश्चित रूप में उच्च शिक्षा 21वीं, सदी की आवश्यकताओं के अनुकूल सार्थक बन सकेगी, एवं देश के सर्वांगण विकास में योगदान देने में सफल हो सकेगी।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची -

1. इण्डिया टुडे, मई 2002
2. राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020, मानव संसाधन विकास मंत्रालय
3. दैनिक भास्कर, 4 जुलाई 2021
4. https://www.dristias.com हिन्दी

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

आधुनिक सभ्यता पर गाँधी के विचारः पर्यावरण के विशेष संदर्भ में

• अनुराधा सिंह

सारांश- गाँधी जी को आमतौर पर उनके आदर्शो, मूल्यों और नैतिकता के संदर्भ में देखा जाता है। लोग स्वार्थरहित सेवा और अधिकतम लोगों के अधिकतम लाभ पर गाँधी के विचारों को याद करते हैं। गाँधी किसी वर्ग विशेष की विचारधारा का प्रतिनिधित्व नही करते बल्कि उनके चिंतन में मनुष्य से लेकर मनुश्येत्तर प्राणी तक के लिए करूणा का भाव दिखायी देता है। उन्होने दर्शन ओर राजनीति के क्षेत्र में पूरब और पश्चिम की परम्पराओं को एक किया। गाँधी ने आधुनिक सभ्यता को विकास के बजाय विनाश के रूप देखा इसके अगर सकारात्मक पहलू है तो बहुत से तत्व नकारात्मकता की ओर भी ले जाते हैं। आधुनिक औद्योगिक सभ्यता का जब से विकास हुआ है उसके साथ ही साथ पर्यावरण जनित समस्याएँ भी नित नये रूप में हमारे सामने आ रही है। गाँधी को इन समस्याओं का आभास बहुत पहले ही हो गया था। गाँधी ने जिन जीवन मूल्यों को हमारे सामने प्रस्तुत किया वह प्रकृति और मनुष्य के सहअस्तित्व की बात करता है। प्रस्तुत शोधपत्र का उद्देश्य आधुनिक सभ्यता के उन पहलुओं को सामने लाना है जिसे गाँधी ने मानवता के अवरोध के रूप में देखा। उनका मानना था कि विकास की जिस अंधी दौड़ में हम भाग रहे है अंततः उसका क्या हश्र होगा? इसमें कहीं हम अपने मानव होने का अर्थ ही न खो दें? इस पत्र में विकास और पर्यावरण के इन्ही अन्र्तसंबंधों को गाँधीवादी दृश्टिकोण से देखने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द- सतत् विकास, औद्योगिक सभ्यता

प्रस्तावना- आज यदि विश्व स्तर पर देखें तो विकसित और औद्योगिक राष्ट्रों में संसाधनों और ऊर्जा की प्रति व्यक्ति खपत और उनकी बर्बादी अधिक है। आर्थिक रूप से उन्नत पश्चिम के देशों ने अपने प्राकृतिक संसाधनों का इतना अधिक दोहन किया है कि यह लगभग हर जगह समाप्त हो गया है। अब वे पिछड़े देशों से अपेक्षाकृत कम कीमत पर ये संसाधन खरीद रहे हैं। इससे विकासशील देशों के वे संसाधन समाप्त हो रहे हैं जिन पर गरीब अपनी आजीविका के लिए निर्भर होते हैं। औद्योगिक रूप से विकसित देशों के इतिहास से जाहिर हे कि औद्योगिक सभ्यता के फायदे हैं लेकिन यह किस कीमत पर है इसको पूर्णरूप से नही आंका गया। व्यापक स्तर पर मानव एवं पर्यावरण संबंधी नुकसान को देखते हुए आधुनिक औद्योगिक विकास के वस्तुपरक एवं संतुलित मूल्यांकन के लिए इनके लाभ व हानि पर विचार करना आवश्यक हो जाता है। इस तरह

• **असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीतिशास्त्र, सी.एम. पी. डिग्री कॉलेज, संघटक महाविद्यालय इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज**

का मूल्यांकन करते समय न केवल आर्थिक नहीं बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक एवं मानवीय पहलुओं पर विचार करना आवश्यक हो जाता है। व्यवहारिक तौर पर आर्थिक विकास को मानवीय पहलुओं से अलग नहीं किया जा सकता। आर्थिक उद्यमों के परिणामों का मूल्यांकन मानव जीवन की समग्रता में किया जाना चाहिए।[1]

गाँधीवादी सिद्धांन्त की आवश्यकता उस समय महसूस हुई जब देश औपनिवेशिक दासता के अधीन था और साम्राज्यवाद की पकड़ गहरे तक समायी थी। गाँधी के समक्ष चुनौती थी कि किस प्रकार आधुनिक सभ्यता के पक्षपोषक ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरूद्ध विकल्प प्रदान किया जाय। गाँधी अंग्रेजों द्वारा शासन किए जाने से ज्यादा अंग्रेजी शासन के विरोधी थे, और राष्ट्रवादी (स्वतंत्रता की माँग करने वाले अन्य समूह) अंग्रेजों द्वारा शुरू किये गए आधुनिक शासन को बरकरार रखते हुए अंग्रेजों को बाहर निकालना चाहते थे। अंग्रेजी शासन की क्या कमियां थी ? गाँधी के अनुसार उनकी कमी थी भारत में आधुनिक सभ्यता लाना।[2] राष्ट्रवादी और महात्मा दोनों ने ही भारत में ब्रिटिश शासन का अंत करने की कोशिश की। राष्ट्रवादियों ने ऐसा इसलिए किया क्योंकि यह विदेशी था और महात्मा ने इसलिए किया क्योकि यह आधुनिक था।[3]

आधुनिक एक रेखीय विकास मॉडल को उदारवादी और समाजवादी दोनों खेमों ने अपनाया है लेकिन विकास के इस औद्योगिक प्रतिमान ने पर्यावरण के संकट को भी पैदा किया है। जिसकी चर्चा सत्तर के दशक से हमें विश्वस्तर पर सुनायी देती है। गाँधी ने इसके पूर्व ही अपनी पर्यावरणीय चिंता को अपने लेखों में अप्रत्यक्ष रूप से दिखाने का प्रयास किया था। गाँधी कोई पर्यावरणविद् नहीं थे लेकिन उन्होने जिन आदर्शों व मूल्यों को हमारे समक्ष रखा वे उनके पर्यावरणविद् होने का संकेत देते है। गाँधी प्रकृति और मनुष्य के सहअस्तित्व की बात करते हैं। उनका चिन्तन मनुष्य से लेकर मनुष्येत्तर जगत तक से संबंधित है। उन्होने उम्रभर प्राकृतिक संसाधनों के अपव्यय, पुनर्भरण और न्यूनतम उपभोग के मूल्यों को प्रस्तुत किया। इसके विपरीत आज की भोग प्रधान सभ्यता ने वाह्यय पर्यावरण को तो दूषित किया है, लोगों की कलात्मक व सृजनात्मक क्षमता को हतोत्साहित तथा नैतिक अवमूल्यन भी किया है।

मानव स्वार्थ पर आधारित भोगवाद की संस्कृति ने पारिस्थितकी संतुलन को इतना बिगाड़ दिया है कि पर्यावरण का संकट, परमाणु संकट से भी बड़ा दिखाई देने लगा है। हमारे विश्व की अवधारणा में मानव और मानव ही मुख्य हो जाता है। यह भूल जाते हैं कि विश्व केवल मानव विश्व नहीं है, इसमें मानव के साथ मानवेत्तर प्राणी, पशु-पक्षी और वनस्पति एवं उद्भिज तथा पृथ्वी, वायु, प्रकाश और आकाश सब का समायोजन है, दूसरे शब्दों में जड़, जीव, चेतन और आत्मचेतन के चतुर्व्यूह से निर्मित ही, विश्व बनता है। इन चारों के बीच पारिस्थिति संतुलन आवश्यक है। विश्व के संरक्षण एवं विकास में मानव पशु-पक्षी, वनस्पति ओर भौतिक पदार्थों को हम अलग-अलग करके नहीं सोच सकते। यह तत्वज्ञान तो है ही, यही आध्यात्म भी है।[4]

गाँधी जी द्वारा 'प्राकृतिक जीवन' उदघोष किसी हारे हुए मनुष्य का पलायनवाद नहीं बल्कि पर्यावरण-असंतुलन के लिए एक रक्षाकवच था। जहाँ भोगवाद की उद्दास धारा से प्रभावित होकर हम नृंशस होकर प्राकृतिक संपदा का अनुचित दोहन करके

मानव अपनी ही आत्महत्या का प्रयास कर रहा हो वह सादगी एवं संयम की संस्कृति के अलावा विकल्प ही क्या है ? और यही तो गाँधी का संदेश है आज इस भोगवाद से ऊबकर पाश्चात्य जगत में भी 'स्वैच्छिक दरिद्रता' या 'आवश्यकताओं के परिसीमन' का आंदोलन शुरू हो गया है जो गाँधी के संयम और सादगी की सार्थकता सिद्ध करता है।[5]

औद्योगिक विकास का मॉडल पर्यावरण के प्रश्नों की अनदेखी करता है और इसका असर हाशिए पर स्थित लोगों पर गहरा पड़ा है इसलिए आज सतत विकास की बात की जा रही है। सतत या निवर्हनीय विकास की परिभाषा एक ऐसे विकास के रूप मे की गयी जो आवश्यकताओं की पूर्ति के बारे में भावी पीढ़ियों की क्षमता को प्रभावित किये बिना वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकता को पूरा करे। इसमें एक ओर सामाजिक विकास और आर्थिक अवसर तो दूसरी ओर पर्यावरण की आवश्यकताएँ शामिल हैं। यह पर्यावरण संबंधी दुष्प्रभावों को कम करके बेहतर जीवन की ओर ले जाने वाली प्रक्रिया है। इसकी शक्ति यह है कि इसमें मानवीय आवष्यकताओं और पर्यावरणीय आवश्यकताओं की आपसी निर्भरता स्वीकार की जाती है।

सतत विकास का सार यह है कि पृथ्वी पर प्राकृतिक संसाधन अत्यंत सीमित मात्रा में है और हमें इनका प्रयोग मितव्ययिता से करना चाहिए अन्यथा यह भावी पीढ़ी को अप्राप्त होगा। गाँधी जी का भी मानना था कि प्रकृति हमारी आवश्यकताओं की तो पूर्ति कर सकती है परन्तु हमारे लोभ या बढ़ती आवश्यकताओं की माँग को वह पूरा नहीं कर सकती। वर्तमान विकास प्रक्रिया में प्रकृति का अनियंत्रित शोषण और इसका गरीब वर्गों पर दुष्प्रभाव (सामाजिक कीमत के परिप्रेक्ष्य में) के कारण आज सतत विकास की अवधारण का सामाजिक न्याय के साथ निकट का सम्बन्ध बन गया है। विकास की एक सीमा होने के कारण आधुनिक सुख-सुविधाओं का कुछ लोगों तक सीमित होना अवश्यंभावी है। विकासवादी मॉडल में विलासिता की वस्तुओं का उत्पादन प्रायः आवश्यक वस्तुओं की कीमत पर होता है। प्रकृति के समाप्त हो जाने वाले संसाधनों का अनियंत्रित दोहन प्रकृति के साथ अन्याय है ही भावी पीढ़ी के साथ अन्याय की संभावना भी इसमें निहित है।

आज विश्व के समक्ष सबसे प्रमुख चुनौती यह है कि पृथ्वी की विनाश से कैसे रक्षा हो ? विकास प्रक्रिया को कैसे संपोशी बनाया जाय जो धरती की धारण क्षमता के अनुकूल हो, और किस तरह उसे स्थायित्व प्रदान किया जाय ताकि प्रकृति, मनुष्य और समाज का संतुलन कायम हो सके ? सतत विकास का संबंध केवल प्राकृतिक उर्जा के सतत तथा स्थायी पूर्ति या औद्योगिक प्रगति के कारण हुई पर्यावरणीय क्षति से नहीं है, बल्कि इसके अंतर्गत मानव जीवन तथा सभ्यता के नैतिक आधार का आदर्श मूल्यांकन भी आता है। वर्तमान संकट के प्रश्न को विकास एवं पर्यावरण के दायरे में रखा गया है परन्तु वास्तविकता यह है कि इसका संबंध मानव जीवन की उस दृष्टि से है जिसकी जड़े परस्पर सहयोग और संतोष, शांति और अहिंसा तथा मनुष्य-प्रकृति के बीच सामंजस्य से है।[7]

प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध दोहन के कारण मानव अस्तित्व को खतरा पहुँच रहा है। प्रकृति के जीवनदायी तत्वों के बीच संतुलन का अभाव हो रहा है। गाँधी ने लोभ-लालच भ्रष्टाचार, जाति और धर्म के नाम पर टकराव, हिंसा आदि का मूल भौतिक

समृद्धि और आधुनिक सभ्यता में देखा। हिन्द स्वराज में गाँधी ने इसी आधुनिक सभ्यता की आलोचना प्रस्तुत की। पश्चिम सभ्यता और विकास का मॉडल गाँधी की दृष्टि में शोषण ओर लोभ पर आधारित था। डॉ. राम जी सिंह वैश्विक पर्यावरण संकट पर गाँधी को उद्घृत करते हुए कहते है कि, हिंसा शून्य से उद्‌भूत नही हुई है, वह तो हमारी सभ्यता की विकृति के दुष्परिणाम है। असंयमित जीवन, असंतुलित समाज एवं असंतुलित पर्यावरण के कारण ही हिंसा इतनी व्यापक एवं गहरी हुई है।[8] गाँधी की दृष्टि में पर्यावरण प्रदूषण, प्रकृति के साथ की जाने वाली हिंसा का ही एक रूप है। उनका अहिंसा का सिद्धान्त सिर्फ मानवीय समुदाय पर ही लागू नही होता बल्कि उसका संबंध पूरे जैव समुदाय से है।

गाँधी ने अन्धाधुन्ध यंत्रीकरण का विरोध किया। उनका कहना था कि 'मेरा विरोध यंत्रों के संबंध में फैलै हुए दीवानेपन से है, यंत्रों से नही। परिश्रम का बचाव करने वाले यंत्रों के संबंध में लोगों का जो दीवानापन है, उसी से मेरा विरोध है।...मुझे भी समय और परिश्रम का बचाव करना है, लेकिन वह मुट्‌ठी भर आदमियों के लिए नहीं बल्कि समस्त मानव जाति के लिए....यंत्रों के चलाने के मूल में मनुष्य का लोभ है, धन-तृष्णा है जनकल्याण की भावना नही है।[9] गाँधी के अनुसार यंत्रों को मानवीय श्रम में सहयोगी होना चाहिए। उन्होंने ऐसे समस्त औजारों, साधनों ओर यंत्रों का जो व्यक्ति की मेहनत बचाए और झोपड़ियों में रहने वाले लाखों-करोड़ों का बोझ कम करें, उनका स्वागत किया है।[10]

यह कह सकते है कि गाँधी ने केन्द्रित और वृहद उद्योगों के बदले कुटीर एवं लघु उद्योगों के लिए यंत्रों की मर्यादाएँ स्थिर की थी। वे यंत्रों के पीछे भागने के विरोधी थे, यंत्रों के नही। विज्ञान तो उनका जीवन धर्म था क्योकि प्रयोग के बिना उन्होने कभी कोई बात रखी ही नहीं। हाँ विज्ञान की दिशा होनी चाहिए। 'कौन कहना है कि गाँधी शत्रु थे विज्ञान के? वे मनुज से मात्र इतना चाहते थे- रेल, मोटर, यान चाहे जो चढ़ो सोच लो, पहले तुम्हें जाना कहां है?' (राष्ट्रकवि दिनकर) संयम का विज्ञान केवल भौतिकवादी उपभोक्ता संस्कृति की निरोधक औषधि नही वह आध्यात्मिक उन्नयन का भी पारपत्र है।[11]

मशीन या तकनीक ऐसी हो जो मनुष्य का स्वामी न होकर उसकी सेवक हो और प्रकृति और मनुष्य के बीच सामंजस्य स्थापित करें और आवश्यकताओं को बढ़ाते जाने की अपेक्षा उनको सीमित संतुलित और नियंत्रित करना ही मानव जाति का अभीष्ट है और इन आदर्शों की प्राप्ति स्वशासित, स्वालम्बी, सहयोगी ग्रामीण प्राकृतिक समुदायों में ही साकार हो सकती है।

स्वतंत्रता के अवसर पर गाँधी जी ने आशा व्यक्त करते हुए कहा था कि, 'आधुनिक तकनीक जरिए प्रत्येक व्यक्ति को रोजगार देने के लिए पचास वर्ष पर्याप्त हो सकता है लेकिन हमें इससे बहुत पहले ही प्रत्येक व्यक्ति को रोजगार देना होगा। हम लोग इसे उस आधुनिकता की धुन को ही त्याग कर प्राप्त कर सकते है, जो आज बेरोजगारी और गरीबी पैदा कर रही है।[12]

गाँधी ने भौतिक तत्वों को तिलांजलि नही दी अपितु उन्होने भौतिकता या भौतिकवाद के पीछे भागने की अपेक्षा आध्यात्म व नैतिकता को तरजीह दी। मनुष्य प्रकृति का एक अंग है और उसे इस प्रकार का व्यवहार करना चाहिए ताकि प्रकृति के सभी अंगों में सामंजस्य बना रहे है। यह धरती जितना मानवों के लिए जरूरी है उतनी ही

पृथ्वी पर रहने वाले अन्य प्राणियों के लिए भी आवश्यक है। प्रकृति चक्र में संतुलन बना रहे यह मनुष्य के लिए ही उपयोगी है अन्यथा हम अपना ही सर्वनाश कर लेंगे। आज पर्यावरण को बचाने के लिए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अनेक सम्मेलन हो रहे है लेकिन उनका भाव राजनीतिक अधिक है। निहित स्वार्थों के कारण किसी ठोस कार्ययोजना पर प्रगति नही हो पा रही है। गाँधी की दृष्टि में आज की सभ्यता एकपक्षीय है इसलिए वह शरीर सुख को ही अपना आदर्श मानती है। शरीर सुख की तृप्ति नहीं हो सकती। गाँधी जी वाह्रय जगत की खोज के साथ-साथ अन्तः जगत की खोज करने के लिए आध्यात्म के साथ विज्ञान के समन्वय का विचार रखा। आध्यात्म के बिना विज्ञान अंधा है और विज्ञान के बिना आध्यात्म पंगु है। आधुनिक सभ्यता में जिन तत्वों का अभाव है, उन्हें गाँधी के विचारों द्वारा ही पूरा किया जा सकता है। उनके विचारों में हमें मनुष्य और प्रकृति, विज्ञान और आध्यात्म, पूर्व और पश्चिम के विचारों का समन्वय दिखाई देता है और आज दुनिया को इसी की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. सिंह, रामजी, यादव धर्मराज, (संपादक) गाँधी विचार और सामाजिक पुनर्रचना 'मिश्रा ट्रेडिंग कारपोरेशन, वाराणसी 1997 पृ. 78
2. भट्टचार्जी, गौरीप्रदा, गाँधी और अंबेडकर की समकालीन प्रासंगिकता वर्ल्ड फोकस मई 2014, पृ. 4
3. वही
4. सिंह, रामजी, गाँधी विचार दर्शन, धर्म, राजनीति और अर्थनीति, मानक पब्लिकेशन्स प्रा. लि. दिल्ली, 1995 पृ. 35
5. वही, पृ. 36
6. भरूचा, इराक, पर्यावरण अध्ययन, ओरियन्ट लांगमैन प्रा. लि. 2007, नई दिल्ली पृ. 165
7. सिंह, रामजी, यादव धर्मराज (संपा.) वही, पृ. 81
8. सिंह, रामजी, गाँधी विचार दर्शन, धर्म, राजनीति और अर्थनीति, वही, पृ. 37
9. हिन्दी नवजीवन (साप्ताहिक), 2 नवम्बर 1924
10. यंग इंडिया, 17 जून 1926
11. सिंह, रामजी, गाँधी विचार दर्शन, धर्म, राजनीति और अर्थनीति, वही, पृ. 36
12. सिंह, रामजी, गाँधी विचार और सामाजिक पुनर्रचना, वही, पृ. 86- 87

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

मध्यवर्ग : एक परिचय

• दिव्या मिश्रा
•• रामेश्वर पाण्डेय

सारांश- मध्यवर्ग आज दुनिया के सबसे बड़े वर्ग के रूप में जाना जाता है। यह सच है कि सत्ता और शक्ति उच्च वर्ग के हाथों में है परंतु उसे उनका सही तरीके से संचालन करने के लिए मध्यवर्ग की ही आवश्यकता होती है। यह वर्ग निम्न वर्ग एवं उच्च वर्ग के बीच एक कड़ी की तरह से समाज में कार्य करता है। यह वर्ग न तो उच्च वर्ग की तरह से समृद्धशाली होता है और न निम्न वर्ग की तरह से विपन्न।

मुख्य शब्द- मध्यवर्ग, सत्ता, शक्ति, समृद्धशाली

प्रस्तावना- एनसाइक्लोपीडिया आफ सोशल साइंसेजमें मध्यवर्ग को कुछ इस तरह परिभाषित किया गया है, ''मध्यवर्ग उद्योग एवं व्यापार के मक्तली स्थिति के उद्यमकर्ता जैसे शिल्पी और किसान अर्थात वस्तुओं के छोटे उत्पादक छोटे दुकानदार और व्यापारी तथा दफ्तरों के कर्मचारियों एवं वेतन भोगी लोगों को समाविष्ट करता है।''[1] इसी प्रकार से मानक हिन्दी कोश में मध्यवर्ग की वौद्धिकता को दृष्टि में रखकर उसे परिभाषित करते हुए लिखा गया है- मध्यवर्ग ''मनुष्य समाज के आर्थिक तथा सामाजिक दृष्टि से विभाजित वर्गों उच्च मध्य और निम्न में से बुद्धि प्रधान एक वर्ग है जो सामान्य आर्थिक स्थिति तथा सामाजिक स्थिति वाला संभवत: माना जाता है। और उच्च वर्ग और निम्न वर्ग के बीच में माना जाता है।''[2] मध्यवर्ग को पूँजीवाद के उद्‌भव एवं विकास से जोड़कर देखा जाता है क्योंकि इसका विकास भी पूँजी के विकास से जुडा हुआ है। इस संदर्भ में हिन्दी साहित्य कोश में कहा गया है कि-''पूँजीवादी अर्थव्यवस्था ने समाज को इतना जटिल कर दिया है कि एक मध्यवर्ग की भी आवश्यकता हुई जो इस जटिल व्यवस्था के संगठन सूत्र को संभाल सके। इस वर्ग में नौकरी पेशा, शिक्षक, क्लर्क और अन्य साधारण लोग आते हैं मध्यवर्ग विशेषतया बुद्धि प्रधान वर्ग माना गया है। और सामाजिक क्रांति के प्राय: समस्त विचारों का सर्जन मध्यवर्ग में ही होता है।''[3] इसी प्रकार व्यापकता, संवेदनशीलता की दृष्टि से यदि देखा जाए तो मध्यवर्ग उच्चवर्ग एवं निम्नवर्ग से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। इसी संदर्भ में भूपसिंह भूपेन्द्र लिखते हैं कि-''यह वर्ग उच्च तथा निम्न वर्ग की अपेक्षा अधिक व्यापक संवेदनशील, प्रेरक तथा अपनी विशिष्ट दुर्बलताओं से ग्रस्त होता है।''[4]

1. मध्यवर्ग की सामाजिक पृष्ठभूमि- भारतीय समाज में प्राचीन काल से वर्ण व्यवस्था के आधार पर वर्गों का विभाजन हुआ और उसी समय से मध्यवर्ग भी विद्यमान हुआ। प्राचीन समय में भारत वर्ष में मध्यवर्ग का अपना अलग रूप था। मध्यवर्ग के रूप

• पीएच.डी, शोध छात्रा, हिंदी, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
•• प्राध्यापक, हिंदी विभाग, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

में ऐसे महाजनों और बड़े-बड़े व्यापारियों के रूप में दरबारशाही वर्ग मौजूद थे। किन्तु सही मायने में भारत में मध्यवर्ग का उदय अंग्रेजी साम्राज्य के परिणाम स्वरूप हुआ। भारत में यह वर्ग उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में दिखाई देने लगा। 1857 की क्रांति के बाद अंग्रेजी सत्ता ने प्रत्यक्ष रूप से पराजय स्वीकार ली थी किन्तु परोक्ष रूप से वे जन मानस में अपना प्रभाव व्यवस्था परिवर्तन के रूप विस्तारित कर रहे थे। समाजशास्त्री विद्याभूषण और डी. आर. सचदेव का प्रस्ताव ध्यान देने योग्य है, यह दो तरह की प्रवृत्तियों का नतीजा है-पुराने शासन का नाश एक ओर दूसरी और जमींदारों, व्यापारियों तथा बुद्धिजीवियों के नये-नये समूह का उदय। उच्चवर्ग का अध:पतन ब्रिटिश सत्ता का सीधा परिणाम यो तो व्यावसायिक दलों का रूपायन यूरोपीय व्यासायिक उधम की उप-उपज था और साथ ही जमींदारों तथा बुद्धिजीवियों का विकास ब्रिटिश प्रशासन और पाश्चात्य शिक्षा सप्रदाय के कारण थे। दूसरे शब्दों में कहे भारतीय मध्यवर्ग का सृष्टा ब्रिटिश शासन था।

वास्तव में हिन्दी साहित्य की अधिकतर आधुनिक कहानी, मध्यवर्गीय जनता की कहानी है। भारतीय समाज व्यक्तियों का सामूहिक समुच्चय है। इन लोगो के रहने-जीने और आपस में संपर्क स्थापित कर सहयोग करने के भी अलग-अलग अपने कई तौर-तरीके होते है। भारतीय समाज ही वह संस्था है, जहाँ मनुष्य अपने व्यक्तित्व को संपूर्णता एवं सार्थकता प्रदान कर पाता है। समाज मनुष्य के भीतर संस्कार पैदा करके उसे सही अर्थो में मनुष्य बनाता है। क्योंकि समाज से पृथक व्यक्ति का कोई अर्थ नहीं रह जाता है।

हमारा समाज भी सेक्स, उम्र जाति, धर्म जैसी अनेक श्रेणियों के आधार पर बटा हुआ है। कभी वर्ण व्यवस्था सामाजिक विभाजन का आधार हुआ करती थी। परंतु आधुनिक समाज के विभाजन के तरीके इस रूढ़ि पद्धति से पृथक हो गये हैं। सामाजिक व्यवस्था, जो संसाधन उपकरण पर आधारित है, और जिसका आधार पूँजी बाजार है। श्यामसुन्दर घोष लिखते हैं कि, ''इस प्रकार विभाजित होने पर समाज के तीन हिस्से हो जाते हैं। उच्च वर्ग, मध्यवर्ग और निम्न वर्ग। अनुप्रस्थ ढंग से समाज का विभाजन होने पर उसका जो बिचला हिस्सा है। उसे मध्यवर्ग कहा जाता है।''[5] प्रत्येक वर्ग की तरह मध्यवर्ग के भी अपने कुछ संस्कार, कुछ प्रवृत्तियाँ है, जिनका अपना एक विशेष रूप होता है, और उस रूप के वैशिष्टय के कुछ अपने सामाजिक तर्क होते है। समाज में सामाजिक प्राणियों का वर्ग विभाजन होता है। जो उच्च मध्य और निम्न तबके में बटा होता है।

उच्च वर्ग- सामाजिक दृष्टि से इस वर्ग का समूह छोटा किंतु आर्थिक दृष्टि में संपन्न होता है। और लोग वैभव का जीवन जीते हैं। इस वर्ग में बड़े-बड़े पूँजीपति, व्यवसायी नव धनाद्य तथा भूमिस्वामी आते हैं।''समाज का पूँजीपति वर्ग सबसे प्रबल वर्ग घोषित हुआ है। पूँजी के बूते पर इसका केवल जीवन की सुविधाओं पर ही अधिकार नहीं बल्कि अनेक सामाजिक तथा राजनैतिक तत्वों पर इसकी सत्ता का आधिपत्त है। नगरीय शक्ति संरचना में व्यापार वाणिज्य और उद्योग संस्थाओं के मालिकों का प्रमुख स्थान होता है और ये उच्च प्रभावी तथा मुख्य प्रभावी समूह में सम्मिलित किये जाते हैं।''[6]

समाज का यह वर्ग विलासितापूर्ण जीवन जीता है। इस वर्ग के अधिकांश लोग महत्वाकांक्षी, अभिमानी और व्यक्ति केन्द्रित होते है। इनके जीवन दृष्टि में अर्थ का प्रमुख स्थान होता है। इनके दृष्टिकोण में कला साहित्य और सांस्कृतिक ये सब प्रदर्शन की चीजें

होती है। ये इन्हें विलासिता की वस्तु के रूप में उपयोग करते हैं। मध्यवर्ग सामाजिक क्रियाकलापों में महँगी होती वस्तुओं के साथ दुर्लभ वस्तुओं का प्रदर्शन कर अपने को कला संरक्षक मानते हैं। इनका चिंतन समाज केंद्रित होने की वजह व्यक्ति केन्द्रित आत्मनिष्ठ होता है। परिवारिक संबन्धों में नैतिकता की जगह अनैतिकता दिखाई देती है। अधिकांश उच्च वर्गीय सदस्यों में मानवीय संवेदना हीन होती है। उनकी दृष्टि में मानव एक गुलाम होता है। जो उनकी सेवा के लिए जन्म लेते हैं। यदि यह वर्ग समाज में कोई परोपकारी कार्य करवाते हैं तो उसका प्रचार-प्रसार करते हैं और वास्तविक अपने घृणित चेहरे को छिपाने की कोशिश करते हैं। इनके जीवन में आर्थिक आभाव नहीं होता। "उच्च वर्ग का आकार संक्षिप्त होता है। उसके सदस्यों की आय, व्यवसाय, पद, प्रतिष्ठा और आर्थिक स्थिति आदि समानता होती है। इसीलिए उनकी वर्ग चेतना का रूप और प्रकार एक किस्म का होता है। इनमें एक अभिजात्य चेतना की प्रधानता होती है। इस वर्ग के सभी सदस्य इसी चेतना से परिपूर्ण या आक्रांत होता है। इस प्रकार उनकी वर्ग चेतना एक ही प्रकार की होती है।"[7]

उच्च वर्ग में पूँजीपतियों के अतिरिक्त बड़े-बड़े व्यापारी अफसर, ठेकेदार, राजनेता तथा जमींदार शामिल हैं जिनका मुख्य उद्देश्य किसी प्रकार धन संग्रह करना होता है। डॉ. मन्जूलता सिंह लिखती हैं कि, "आर्थिक दृष्टि से संपन्न उच्चवर्गीय व्यक्ति सभी सुख-सुविधाओं का भोक्ता होता है। यह वर्ग समाज में अनेक रूपों में छाया हुआ है।"[8] यह वर्ग अपने से छोटे वर्गों का शोषण करता रहता है। देश के आजाद होने के बाद उच्च वर्ग के संपर्क में आने और सुविधा भोगी जीवन जीने के कारण यह प्रवृत्ति अन्य वर्गों में भी उत्पन्न हो रही है।

मध्यवर्ग- मध्यवर्ग सामाजिक दृष्टि से सबसे बडा वर्ग समूह वाला वर्ग है। मध्यवर्ग मनोवैज्ञानिक,सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक समीकरणों से दूसरों वर्गों से भिन्न है। यह वर्ग अपनी विशिष्टताओं और गुणों में इतना मिला जुला है कि इस वर्ग को अन्य वर्गों के मध्य ही माना जाता है। इस संबंध में डॉ. श्यामसुन्दर घोष लिखते हैं कि-"यह वर्ग समाज के बीच का वह हिस्सा है, जो समाज को अनुप्रस्थ ढंग से विभाजित करने पर बनता है। और जिसमें कामोंवेश कर एक ही रूतबे या ओहदे के लोग सम्मिलित होते हैं जिसकी विशेष आर्थिक और सामाजिक स्थिति एवं प्रवृत्ति होती है। जो बहुधा उनकी आय व्यवसाय शिक्षा और वंश परम्परा से निर्धारित होती है।"[9]

इस वर्ग में वेतन पाने वाले कर्मचारी जैसे मेनेजर, निरीक्षक, सुपरवाईजर और तकनीकी कर्मचारी तथा बैंक उद्योगों एवं अन्य व्यापारिक संस्थाओं में उच्च वेतन पाने वाले अधिकारी राजनीतिक संगठनों व्यापरिक संघों दानशील सांस्कृतिक और शैक्षिक निकायों में कार्य करने वाले लोग मध्यवर्ग के अंतर्गत आते हैं। मध्यवर्ग की विस्तृत सीमा में विभिन्न आर्थिक स्तरों के लोग सम्मिलित हैं। मध्यवर्ग की कुछ सामान्य विशेषताएँ हैं। जिससे मध्यवर्ग समाज के अन्य वर्गों से पृथक हो जाता है। इस वर्ग में आत्मनिर्भरता जीवन एवं परिथितियों के साथ संघर्ष करने की अद्‌भुद क्षमता होती है। मध्यवर्ग विषय आर्थिक परिस्थितियों के साथ ही सामाजिक और राजनीतिक समस्याओं से ग्रसित रहता है। अपने परिवर्तन के लिए मध्यवर्ग विवशता, घुटन, आक्रोश असंतोष में जीता है। इस

वर्ग के लोग प्रदर्शनप्रिय, महत्वाकांक्षी, आत्मकेंद्रित तथा कल्पनाप्रिय होते हैं। यह वर्ग समाज को भी प्रेरित करता रहता है। सतत संघर्ष और समाज सुधार की कामना ही इस वर्ग का मुख्य उद्देश्य होता है।

जिस प्रकार समाज को अनुप्रस्थ ढंग से विभाजित कर उसके तीन हिस्से करते हैं और उन्हें उच्चवर्ग, मध्यवर्ग और निम्न वर्ग की संज्ञा देते हैं। उसी प्रकार मध्यवर्ग का अनुप्रस्थ ढंग से विभाजन प्रक्रिया अपनाते हैं तो इस वर्ग के दो भेद हो जाते हैं।

उच्च मध्यवर्ग- उच्च मध्यवर्ग कहने से मध्यवर्ग के उस वर्ग का बोध होता है। जो आर्थिक दृष्टि से सुदृढ़ होता है। डॉ. श्यामसुन्दर घोष बताते हैं कि, "इसमें साधारणतः बुर्जुआ वर्ग का बोध होता है।"[10] यूरोप का इतिहास यह कहता है कि इसने वहाँ सामंती व्यवस्था को अपदस्थ करने में महती भूमिका का निर्वाह किया। साधारणतः यह वर्ग व्यापार या व्यवसाय से संबंधित होता है। इस वर्ग के प्रति सर्वहारा वर्ग में वही रोष होता है। जो उच्चवर्ग के लिए उनके मन में होता है। यह वर्ग किसी भी तरह से पूँजी का विस्तार देखना पसंद करता है। अतः यह बड़ा खतरनाक भी है। सामंती व्यवस्था को इसने इसीलिए अपदस्थ किया क्योंकि सामंत उसकी इस मंशा में बाधक थे। डॉ. श्यामसुन्दर घोष बताते हैं कि-"बुर्जुआ वर्ग ने अपने को गरीबों का रहनुमा कहना शुरू किया और समता, स्वतंत्रता तथा भ्रातत्व का नारा दिया। निम्न वर्ग उसके चकमें में आ गया और बेहतर जीवन की आकांक्षा से प्रेरित होकर उसने सामंतों के खिलाफ विद्रोह किया।"[11] इस प्रकार निम्न वर्ग बद से बदतर स्थिति को प्राप्त कर गया। पश्चिम के ऐतिहासिक घटना-क्रम यह कहते हैं कि यह वर्ग अपनी रोटी सेकने में माहिर होता है। वह कभी भी स्वयं अग्र पंक्ति में नहीं आता है। बल्कि नेपथ्य से नेतृत्व देता है। परंतु इससे यह नहीं समझना चाहिए कि इसकी कोई प्रगतिशील भूमिका समाज में थी ही नहीं। इस मध्यवर्ग ने सामाजिक व्यवस्था को बहुत कुछ बदल दिया है।

कम-से-कम व्यक्ति को राजनीतिक मुक्ति प्रदान करने की दिशा में इसकी सोच ने महती भूमिका अदा की। समाजवादी विचारधारा ने इस वर्ग की असली शक्ल लोगों के सामने पेश कर दी और इसे सामंत से भी गया-गुजरा बताया अंततः यह निम्न वर्गों में घृणित एवं निन्दनीय बन गया। क्योंकि यहाँ मामला विश्वासघात का था। इसके बारे में डॉ. श्यामसुन्दर घोष लिखते हैं कि, "भारतीय सामाजिक परिस्थितियों को ध्यान में रखकर यदि हम विचार करें तो उच्च मध्य वर्ग का एक दूसरा ही रूप सामने आयेगा। इस दृष्टि से इसके कई हिस्से किये जा सकेंगे जैसे व्यापार और वाणिज्य से संबंधित उच्च मध्यवर्ग औद्योगिक व्यवस्था से संबंधित उच्च मध्य वर्ग और प्रशासनिक और गैर प्रशासनिक नौकरियों से संबंधित उच्च मध्यवर्ग।"[12] आज के समय में ये लोग उच्च वर्गियों के शौक को पालते-पोसते देखे जाते हैं। इस वर्ग में बहुत ही तेजी से उनकी आदतों एवं सोचने समझाने के तरीके में परिवर्तन दिखाई दे रहा है।

निम्न मध्यवर्ग- इस वर्ग के संबंध में डॉ. श्यामसुन्दर घोष लिखते हैं कि, "निम्न मध्यवर्ग, मध्यवर्ग का निचला हिस्सा होता है। जो उच्च मध्यवर्ग की तुलना में संख्या की दृष्टि से बहुत बड़ा होता है। अब साधारणतः मध्यवर्ग कहने से इसी वर्ग के लोगों का बोध होता है।"[13] सामंती व्यवस्था में सामंत उच्च वर्गीय थे उनके बाद पूँजीपति या उद्योगपति थे,

अत: वे मध्यवर्गीय माने गए और सबसे नीचे किसान एवं मजदूर थे। पूँजीवादी व्यवस्था की स्थापना होने पर सामाजिक वर्गगत ढाँचा बदल गया पूँजीपति उच्चवर्गीय हो गए और प्राचीन समाज का निम्नवर्गीय तबका आज का निम्न मध्यवर्गीय या निम्न वर्गीय तबका बन गया है। पूँजीवादी व्यवस्था में पूँजी का स्वामित्व कुछ ही लोगों के हाथों में होता है। ऐसे में जो लोग साधन और शक्ति संपन्न होते है। वे और अधिक धनवान होते हैं। और जो लोग साधन और शक्ति में हीन होते हैं वे और अधिक गरीब होते जाते हैं। ''पूँजीवादी समाज व्यवस्था का ज्यों-ज्यों फैलाव होता है। त्यों-त्यों शोषण बढ़ता है। शोषण चक्र बढ़ने से शोषितों की संख्या भी बढ़ती है। इसका परिणाम यह होता है कि समाज के बहुसंख्यक लोगों के जीवन की गति उच्चतर न होकर निम्न होती है। अर्थात लोग अपने लोग अपने वर्ग से ऊपर के वर्गों में जाने के बदले नीचे गिरते हैं और नीचे के वर्गो में प्रविष्ट होते है। इस प्रकार मध्यवर्ग के कुछ लोगों का धनी हो जाना और अधिकांश लोगों का निम्न वर्ग में प्रविष्ट होना स्वाभाविक है। इसीलिए पूँजीवाद की परवर्ती दशा में निम्न मध्यवर्ग की संख्या अधिक हो जाती है।''[14]

भारत की व्यवस्था ऐसी रही है कि यहाँ लंबे समय तक आधुनिक काल में अंग्रेजो का प्रभुत्व रहा। इस कारण यहाँ शोषण चलता रहा। इसने यहाँ ब्रिटिश पद्वति के मध्यवर्ग पनपने नहीं दिया। यहाँ जो चीज मध्यवर्ग के नाम पर सामने आयी वह साधन अभाव से पीड़ित निम्नवर्ग या ये लोग अंग्रेजो की नौकरी करते थे। इसीलिए भारतीय मध्यवर्ग कहते ही निम्न मध्यवर्ग की ही छवि उभर कर सामने आती है। इस वर्ग को गाँव एवं शहर दोनों ही स्थानों पर देखा जा सकता है। इसमें छोटे महाजन खाते-पीते किसान पंडित पुरोहित, सौदागर इत्यादि लोगों को सम्मिलित किया गया है।

निम्न वर्ग-निम्न वर्ग समाज का वह हिस्सा होता है जो अपना संपूर्ण जीवन उच्च वर्ग तथा कुछ मध्यवर्ग की सेवा में बिता देता है। पूँजीवादी व्यवस्था में इसे शोषित वर्ग कहा जाता है। यह उत्पादक वर्ग होता है। यह वर्ग हर जगह होते है चाहे शहर हो या गाँव।डॉ. मंजुलता सिंह बताती हैं कि, ''ग्रामीण निम्न वर्ग के अंतर्गत प्रधान रूप से खेतों पर काम करने वाले व्यक्ति, छोटे किसान तथा अन्य सर्वहारा वर्ग के लोग आते हैं। शहरी निम्न वर्ग के अंतर्गत मिलों कारखानों में काम करने वाले मजदूरों, दफ्तरों, होटलों तथा अन्य संस्थाओं में सेवारत नौकर-चाकर कम आय वाले सरकारी कर्मचारी आदि परिगणित किये जा सकते है।''[15]

इस वर्ग में अशिक्षा व्याप्त होती है। ये अंधविश्वासों रूढ़ियों और पुरानी मान्यताओं में जकड़े रहते हैं। ये संतोषी प्रकृति के होते हैं। अपनी वर्तमान आय से थोड़ी अधिक आमदनी होने पर अपार प्रसन्नता प्रकट करते हैं। पर्याप्त आय न होने के कारण ये कुपोषण के शिकार होते रहते हैं। यदि इस वर्ग के लोग बीमार होते हैं तो तंत्र-मंत्र जादू-टोने, झाड़-फूंक में ज्यादा विश्वास करते हैं। उच्च वर्ग एवं मध्यवर्ग धर्म की आड़ में इनका शोषण करते रहते हैं ।''इस रूप में निम्नवर्ग के सदस्य सामाजिक गतिशीलता की निरंतर अपेक्षा करते रहते हैं। लेकिन ऐसा चाहने पर भी वे यह नहीं चाहते कि अपना वर्ग त्यागकर दूसरे वर्ग में प्रविष्ट हो जायें वरन वे तो यह चाहते हैं कि उत्पादन के साधनों पर उचित अधिकार नियंत्रण और उत्पादित इकाई के मुनाफे में उचित हिस्सा मिलनें से उनकी

दशा इतनी अच्छी हो जाये कि निम्नवर्ग में रहते हुए ही उन्हें जीवन की सभी आवश्यक सुख सुविधाएँ मिल सके।''इस प्रकार इनकी आर्थिक स्थिति में सुधार आ जाता है। और ये मध्यवर्ग की श्रेणी में आने लगते हैं। निम्न वर्ग के आकार उच्च तथा मध्य वर्ग की तुलना में बड़ा होता है। इसके सदस्यों की आय पद, प्रतिष्ठा, व्यवसाय और आर्थिक स्थिति में इतनी समानता होती है कि उनकी वर्ग चेतना एक ही स्तर की होती है। जैसे किसान और मजदूर इनकी बड़ी संख्या के बावजूद आय, व्यवसाय तथा आर्थिक स्थिति में समानता होती है। किसानों में वर्ग संगठन होने से कम मजदूरों की तुलना में वर्ग चेतना कम देखने को मिलती है। यह वर्ग विभिन्न सामाजिक समूहो से मिलकर बना है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. एडविन आर.ए. सेलिमन, एनसाइक्लोपीडिया आफ सोशल साइंसेज, खण्ड IX एवं X न्यूयार्क, वर्ष 1959 पृ. 407
2. 'मानक हिन्दी कोश' सं. रामचंद्र वर्मा, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग सं. 1965 पृ. 284
3. 'हिन्दी साहित्य कोश' धीरेन्द्र वर्मा, ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी, द्वितीय सं. संवत् 2020 पृ. 612
4. 'मध्यवर्गीय चेतना और हिन्दी उपन्यास' भूपेन्द्र भूपसिंह 'याम प्रका'ान, जयपुर प्रथम सं. वर्ष 1987 पृ. 12
5. भारतीय मध्यवर्ग, डॉ. श्यामसुन्दर घोष, सं. 1982 पृ. 1
6. आर. एम. मैकाइवर तथा सी.एच. पेज, सोसाइटी पृ. 348
7. भारतीय मध्यवर्ग, डॉ. श्यामसुन्दर घोष, सं. 1982 पृ. 81
8. डॉ. मंजूलता सिंह, हिन्दी कहानी में युगबोध पृ. 163
9. भारतीय मध्यवर्ग, डॉ. श्यामसुन्दर घोष, सं. 1982 पृ. 2
10. भारतीय मध्यवर्ग, डॉ. श्यामसुन्दर घोष, सं. 1982 पृ.57
11. भारतीय मध्यवर्ग, डॉ. श्यामसुन्दर घोष, सं. 1982 पृ. 58
12. भारतीय मध्यवर्ग, डॉ. श्यामसुन्दर घोष, सं. 1982 पृ. 60
13. भारतीय मध्यवर्ग, डॉ. श्यामसुन्दर घोष, सं. 1982 पृ. 61
14. भारतीय मध्यवर्ग, डॉ. श्यामसुन्दर घोष, सं. 1982 पृ. 62
15. डॉ. मंजूलता सिंह, हिन्दी कहानी में युगबोध पृ. 166
16. भारतीय मध्यवर्ग, डॉ. श्यामसुन्दर घोष, सं. 1982 पृ.78

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

महिला सशक्तिकरण मध्य प्रदेश पंचायत राज एवं ग्राम स्वराज अधिनियम 1993 के संदर्भ में

• वंदना मिश्रा
•• संकटा प्रसाद शुक्ल

सारांश- लम्बे समय से महिलाएँ सामाजिक रूढ़ियों, नियमों व तथाकथित पितृसत्तात्मक मानसिकता से पीड़ित तथा शोषित रहीं है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् निर्मित भारतीय संविधान और उसमें निरन्तर होते संशोधनों से इस तथ्य को बराबर अनुभव किया जाता रहा कि महिलाओं के सशक्तिकरण हेतु ठोस कदम उठाना आवश्यक है। इस हेतु संविधान में अनेक प्रावधान किये गये है, जैसे- भारतीय संविधान की प्रस्तावना, मौलिक अधिकार, राज्य के नीति-निर्देशक तत्व इत्यादि में महिला सशक्तिकरण के लक्ष्य प्राप्ति के प्रमुख उद्देश्य समाहित किये गये थे। परन्तु सहभागिता के आधार पर यह उद्देश्य सैद्धान्तिक ही रहे। व्यवहारिक रूप में इन्हें तभी प्राप्त किया जा सकता था जब महिलाओं को राजनीतिक संस्थाओं में भागीदारी के अवसर प्रदान किये जायें।

मुख्य शब्द- महिला सशक्तिकरण, सामाजिक रूढ़ियॉ, भागीदारी

प्रस्तावना- स्त्री एक जननी तथा मानव जीवन का आधार स्तम्भ है। यह घर, परिवार तथा समाज को दृढ़ता प्रदान करने वाली सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कड़ी है। वर्तमान में महिलाएँ विश्व की लगभग आधी से अधिक जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करती हैं, परन्तु वैश्विक निर्वाचन क्षेत्रों में इनका प्रतिनिधित्व पुरूषों की अपेक्षा अत्यधिक कम है। भारत की गणना ऐसे प्रथम प्रजातांत्रिक देशों में की जाती है, जिसने महिलाओं को भी मताधिकार प्रदान किया था, परन्तु उस समय उनको ना तो वैधानिक क्षेत्रों में उचित स्थान प्राप्त था और न ही नीति-निर्माण में उनका कोई योगदान था। कई मनोवैज्ञानिक, सामाजिक तथा प्राकृतिक कारक उनकी राजनीतिक सक्रियता के मार्ग में रूकावटें उत्पन्न करते रही है।एक लोकतांत्रिक राष्ट्र तब तक प्रगति नहीं कर सकता जब तक कि वहाँ की आधी जनसंख्या-शक्ति केवल रसोई तक सीमित हो। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारतीय संविधान में विभिन्न नियमों व विनियमों के माध्यम से लैंगिक समानता सुनिश्चित करने का प्रयास किया गया। ऐसा परिकल्पित किया गया कि ये नियम और अधिकार स्वत: देश की महिलाओं के राजनीतिक विकास में परिणत हो जायेंगे, परन्तु राजनीति में महिलाओं की अधिकारिता के मुद्दे की समाज में उनकी सामान्य अवस्था से पृथक करके नहीं देखा गया। अत: उनकी विशाल संख्या के

• पीएच.डी, शोध छात्रा, राजनीति विज्ञान, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
•• प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

बावजूद महिलाओं को राजनीतिक व्यवस्था में दोयम दर्जा प्राप्त हुआ। भारत में संसदीय लोकतंत्र स्थापित है और संसदात्मक शासन व्यवस्था में बहुमत का शासन होता है। महिलाओं की लगभग आधी जनसंख्या की उपेक्षा करके भारतीय संविधान के समाजवादी, समतावादी तथा लोकतांत्रिक ढॉचे के अन्तर्गत राष्ट्र स्वतंत्रता, समानता तथा न्याय की स्थापना के लक्ष्य की प्राप्ति नहीं कर सकता।

महिला सशक्तिकरण से तात्पर्य लिंग, प्रजाति, सामाजिक वर्ग तथा आयु वर्ग में निष्पक्षता करते हुए समान अवसर प्रदान करना तथा जीवन के सभी क्षेत्रों यथा-सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक में विकास की प्रक्रियाओं तथा नीति निर्माण में सहभागिता करना है। इस प्रकार साशक्तिकरण द्वारा महिलाओं में आत्मविश्वास तथा स्वाभिमान जागृत होता है और वे अपना जीवन-निर्वाह अपनी इच्छानुसार करने में सक्षम हो पाती हैं। महिला सशक्तिकरण एक बहुआयामी संकल्पना है। किसी भी प्रकार के सशक्तिकरण को गतिमान बनाये रखने हेतु राजनीतिक सशक्तिकरण एक आवश्यक शर्त होती है। डॉ. भीमराव अम्बेडकर के अनुसार, ''बिना राजनीतिक सशक्तिकरण के सामाजिक सशक्तिकरण व्यर्थ है''।[1]

महिलाओं की सार्वजनिक क्षेत्रों व संस्थाओं में भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु सन् 1952 में सामुदायिक विकास योजनाओं की शुरूआत की गई, जो कि जन-जागृति, जन-सहयोग व उत्साह के अभाव के कारण असफल हो गया। इसके पश्चात् सन् 1959 में 'बलवन्त राय मेहता समिति' की सिफारिशों के आधार पर त्रि-स्तरीय पंचायती राज व्यवस्था स्थापित की गई और इसमें यह स्वीकार किया गया कि समग्र राष्ट्र का विकास महिलाओं की उपेक्षा करके नहीं किया जा सकता। इस समिति में यह सुझाव दिया गया कि यदि ग्राम पंचायत, पंचायत समिति एवं जिला परिषद् में कोई महिला निर्वाचित ना हो सके तो इस स्थिति में ऐसी दो महिलाओं का मनोनयन कर लिया जाए, जो बच्चों व महिलाओं के कार्यो में रूचि रखती हों। परन्तु वास्तव में इसमें उन्हीं महिलाओं का मनोनयन हुआ, जो राजनीतिक अथवा सामाजिक दृष्टि से प्रभावशाली परिवारों से सम्बन्धित थीं। फलस्वरूप पंचायती राज व्यवस्था को सुदृढ़ करने व उनमें महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु सन् 1992 में 73वाँ संवैधानिक संशोधन अधिनियम पारित किया गया। इस अधिनियम के द्वारा ग्राम सभा का गठन अनिवार्य कर दिया गया। जिसका प्रभाव यह हुआ कि राष्ट्र की असंख्य महिलाओं ने इसमें भागीदारी की। इस अधिनियम के द्वारा जहाँ एक ओर त्रि-स्तरीय पंचायती राज व्यवस्था को लोकतांत्रिक प्रशासन के तीसरे सोपान के रूप में वैधानिकता प्राप्त हुई, वहीं दूसरी ओर महिलाओं के अस्तित्व और अधिकार क्षेत्र को भी मान्य किया गया और महिला सशक्तिकरण की प्रक्रिया को बल मिला। इस संशोधन में पंचायती राज व्यवस्था के प्रत्येक स्तर पर महिलाओं के लिए एक-तिहाई आरक्षण का प्रावधान किया गया। अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति की महिलाओं को उनकी जनसंख्या के अनुपात में एक-तिहाई आरक्षण प्रदान किया गया। कुछ समय पूर्व तक ग्रामीण राजनीतिक क्षेत्रों में महिलाओं की भूमिका तथा पंचायतों में उनका प्रतिनिधित्व नगण्य थी, परन्तु वर्तमान में ग्राम पंचायत से लेकर जिला स्तर की संस्थाओं में महिलाएँ निर्वाचित होकर विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका

अभिनीत कर रहीं हैं। इस प्रकार तृणमूल स्तर पर महिलाओं का राजनीतिक सशक्तिकरण एक बहुचर्चित संकल्पना के रूप में उभरा।

महिलाएं समाज के लगभग आधे भाग का प्रतिनिधित्व करती हैं लेकिन उनकी राजनीतिक सहभागिता लगभग नगण्य रही है। वर्तमान पंचायती राज सामाजिक समता, न्याय, आर्थिक विकास और व्यक्ति की प्रतिष्ठा पर आधारित ग्रामीण जीवन को नया रूप देने का एक सामाजिक प्रयास है। महिलाओं की दयनीय स्थिति को देखते हुए स्वतन्त्र भारत के संविधान निर्माताओं ने सामाजिक न्याय के अन्तर्गत विकास की सभी प्रक्रियाओं में महिलाओं की व्यापक भागीदारी को आव''यक माना ताकि सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक दृष्टि से सशक्त भारत का निर्माण किया जा सके। इसी क्रम में पंचायती राज में महिलाओं के लिए आरक्षण की व्यवस्था की गई है। 73वें संविधान सं''ोधन अधिनियम की सबसे बड़ी उपलब्धि यह है कि इसके अन्तर्गत पचांयती राज सस्थाओं में महिलाओं के लिए एक तिहाई (1/3) आरक्षण की व्यवस्था की गई है जिसमें अनुसूचित जाति, जनजाति एवं पिछड़ा वर्ग की महिलाएं भी शामिल हैं।[2]

पंचायती राज व्यवस्था में महिला नेतृत्व की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि- भारत में पंचायती राज व्यवस्था का एक दीर्घकालीन इतिहास रहा है। अतः पंचायती राज व्यवस्था में महिला नेतृत्व का विश्लेषण करने हेतु अतीत से लेकर वर्तमान तक की पचांयती राज व्यवस्था की विकास यात्रा व इसमें महिलाओं की भूमिका और वैदिक कालीन पचांयतों में महिलाओं की स्थिति का विश्लेषण अनिवार्य है। पचांयती राज व्यवस्था के विकास एवं स्वरूप का वर्णन अग्रलिखित है-

प्राचीन काल के स्थानीय स्वशासन में महिला नेतृत्व- वैदिक काल के इतिहास का अध्ययन करने पर पंचायती राज का अस्तित्व साफ दिखाई देता है। इस समय तक ग्राम सभाओं तथा ग्राम-पंचायतों का गठन हो चुका था। वैदिक काल में 'ग्राम' प्रशासन की सबसे लघु इकाई थी जिनका मुखिया 'ग्रामीणी' कहलाता था। ग्रामीणी गाँव के श्रेष्ठ तथा बुजुर्ग व्यक्तियों की सलाह से कार्य करता था। वैदिक काल में सभा होती थी, जिसमें प्रत्येक नागरिक भाग लेता था, जहाँ राजा भी भयभीत रहता था कि कहीं उसे राजा के पद से न हटा दिया जाए। वैदिक काल में जनता की ग्राम सभाएँ प्रत्येक गाँव में होती थी। ये ''सभा'' मुख्यतः गाँव की सामाजिक गोष्ठी होती थी, जो आवश्यकता पड़ने पर वह गाँव की समस्याओं से सम्बन्धित विषयों पर भी विचार करती थी। गाँव के पारस्परिक झगड़ों को तय करना व गाँव की रक्षा करना उसका कार्य था।[3]

महाकाव्य काल (रामायण व महाभारत) में भी सभा का उल्लेख मिलता है, जो ग्रामीण सुरक्षा का प्रबन्ध करती थी। परन्तु इस सभा का स्वरूप वर्तमान पंचायतों के अनुरूप नहीं था। महाकाव्य काल में शासन की न्यूनतम इकाई 'ग्राम' ही मानी जाती थी जिसका मुखिया 'ग्रामीक' ग्रामीण शासन के लिए उत्तरदायी होता था। वह कर एकत्रित करने, ग्राम में शान्ति एवं व्यवस्था बनाए रखने का कार्य करता था। मौर्य काल में प्रचलित ग्रामीण स्वशासन में, प्रत्येक ग्राम का शासन पृथक-पृथक होता था। ग्राम के शासक को 'ग्रामीक' कहते थे। दस ग्रामों के मध्य 'संग्रहण' तथा 200 गांवों के मध्य 'स्थानीय' नाम की संस्थाओं की स्थापना की जाती थी। गुप्त काल में मौर्यकाल की भाँति ही स्थानीय

स्वशासन व्यवस्था प्रचलित थी। जिसकी सबसे लघु इकाई ग्राम थी, जिसका मुखिया 'ग्रामीक' होता था। गुप्तकालीन ग्राम सभा को 'ग्राम जनपद' या 'पंचमण्डली' कहा जाता था, जो महत्वपर्णू कार्यों का सम्पादन करती थी। दक्षिण भारत में सात-वाहन-शासकों के काल में नगरों तथा ग्रामों में स्थानीय शासन संस्थाएं विधमान थी। दक्षिणी भारत के ही चोल प्रशासन में भी ग्राम स्वायतत्ता (ग्राम परिषद) पायी जाती थी।अतीत में भारत में पंचायतें थीं, इसके अनेक प्रमाण मिलते हैं। लेकिन इनमें महिलाओं की भागीदारी भी थी, इसके प्रमाण नहीं मिलते हैं। तत्कालीन पचांयतों के सदस्यों के लिए जो योग्यताएं निर्धारित की गई थी, महिलाएँ उनकी परिधि में नहीं आती थी। वही व्यक्ति पंचायत में चुना जा सकता था जिसके पास कर देने योग्य भूमि हो, उसके पास अपना मकान हो, वह संस्कृत जानता हो तथा उसका ज्ञान बताने व सुनाने योग्य परिपक्व हो। वह व्यवसाय करना जानता हो और अपना धन ईमानदारी से कमाया हो। इन योग्यताओं के आधार पर महिलाएँ चुनाव के योग्य हो ही नहीं सकती थी। उत्तर वैदिक काल के बाद न उनके स्वामित्व में भूमि थी, न उनको शिक्षा ग्रहण करने का अधिकार था, और न ही आर्थिक गतिविधियों में संलग्न होने का अधिकार था।[4]

जॉन मथाई ने अपनी पुस्तक-'विलेज गवर्नमेंट इन ब्रिटिश इंडिया' में बताया है कि विभिन्न ग्रामीण समितियों के गठन में महिलाओं को सदस्य बनने की मनाही नहीं थी। पंडित जवाहरलाल नेहरू ने भी अपनी पुस्तक 'भारत की खोज' में इस तरह का ईशारा करते हुए लिखा है कि ग्रामीण समितियाँ एक वर्ष के लिए गठित होती थी और महिलाएं भी ऐसी समितियों की सदस्य हो सकती थी। इन सन्दर्भों से यह ज्ञात होता है कि महिलाएं भी ग्रामीण समितियों की सदस्य बन सकती थी, लेकिन ऐसा प्रावधान वास्तविकता के धरातल पर प्रचलन में नहीं था। महिलाओं की जीवन-शैली इस तरह से नियंत्रित होती थी कि वे चाहकर भी किसी समिति का सदस्य नहीं बन सकती थी। इन समितियों को अनेक सार्वजनिक सामाजिक उत्तदायित्वों का पालन करना पड़ता था, इसलिए महिलाएं इनसे संबद्ध नहीं हो पाती थी।

मध्यकालीन स्थानीय स्वशासन में महिला नेतृत्व-राजपूत काल में ग्राम पचांयतों का महत्व कम हो गया क्योंकि इन सस्थाओं पर सामंतों का एकाधिकार हो गया। सामंती राजव्यवस्था ने पचांयती राज संस्थाओं को समाप्त कर दिया तथा केन्द्रीय व्यवस्था की स्थापना का प्रयास किया जिसमे महिलाओं के लिए कोई स्थान नहीं था। मध्यकालीन भारत के दो प्रमुख कालों- 'सल्तनत काल' (1200-1526) व 'मुगल काल' (1527-1707) में स्थानीय स्वशासन सस्थाओं का विशेष महत्व था। दिल्ली सल्तनत काल में राज्य की सबसे लघु इकाई 'ग्राम' को प्रबन्ध के मामले में पर्याप्त स्वायतता प्राप्त थी। ग्राम का प्रबन्ध नम्बरदारों, पटवारियों तथा चौकीदारों द्वारा किया जाता था। मुगलकालीन भारत में भी ग्रामीण स्थानीय स्वशासन की इकाई अपने प्राचीन रूप में ही संचालित रही। इस काल में भी शासन की सबसे छोटी इकाई 'ग्राम' ही थी, जिसके शासन का प्रबन्ध ग्राम स्तर पर तीन महत्वपर्णू अधिकारियों-मुक्कद्दम, पटवारी व चौधरी द्वारा किया जाता था। शासन में पंचायत के महत्व को तो स्वीकारा जाता था लेकिन मुगलों के शासन काल में महिलाओं की स्थिति वैदिक काल की अपेक्षा और

अधिक पिछड़ी तथा उनकी भूमिका और अधिक सिकुड़ गई थी। सामाजिक, राजनीतिक व आर्थिक गतिविधियों में भाग लेने की बजाय उन्हें घूंघट (पर्दा प्रथा) में बन्द करके घर की चार दीवारी तक ही सीमित कर दिया गया था।[5]

ब्रिटिश कालीन स्थानीय स्वशासन में महिला नेतृत्व- 18वीं शताब्दी में मुगल काल के पतन के पश्चात ग्रामीण स्थानीय स्वशासन संस्थाओं की लोकप्रियता धीरे-धीरे समाप्त होने लगी। इसके मुख्य कारण कम्पनी की प्रशासनिक नीतियाँ तथा "ासकों द्वारा पंचायतों का विरोध करना थे। परन्तु इसके बावजूद भी ईस्ट इण्डिया कम्पनी का इन संस्थाओं के बारे में नजरिया व्यावहारिक था। ब्रिटिश काल में पंचायतों ने अपनी सत्ता खो दी, क्योंकि ब्रिटिश सरकार ने सारी सत्ता की बागडोर अपने हाथ में ले ली। ब्रिटिश शासकों ने ग्रामीण स्वशासन के स्थान पर अधिकारी तन्त्र को प्रोत्साहित किया ताकि भारतीय जनता का अधिकाधिक शोषण किया जा सके। इस समय तक ग्रामीण आत्मनिर्भरता की व्यवस्था नष्ट होने लगी। परन्तु सरकार में भागीदार नहीं होने के बावजूद इन सस्थाओं का सामाजिक परिवेश में, ग्रामों में महत्व कायम रहा। अंग्रेजी शासन में व्यापक पैमाने पर हुई व्यवहार एवं दण्ड न्यायालयों की स्थापना के कारण ग्राम पंचायतें शून्य होने लगी।

बदलते समय के साथ उदार व दूरगामी दृष्टि रखने वाले लार्ड-रिपन जैसे कुछ अंग्रेज शासकों ने प्रशासन को सुधारकर, सफल व मजबतू बनाने के लिए स्थानीय स्वशासन को सुदृढ़ बनाने के प्रयास किए तथा 1882 में 'नार्थ वैस्ट एक्ट' पास करवाया। इस अधिनियम में ग्रामीण क्षेत्रों में 'जिला बोर्ड' की स्थापना तथा ग्राम स्तर पर पंचायतों की व्यवस्था का प्रावधान किया गया, परन्तु यह व्यवस्था अधिक समय तक क्रियाशील नहीं रह सकी, क्योंकि आम जन पूर्णतया सरकार से अलग हो चुका था। लार्ड रिपन का यह मानना था कि भारत के गाँवों से जिले तक को सुदृढ़ बनाने तथा उन्हे अपने साथ मिलाकर कार्य करने के लिए स्थानीय स्वशासन स्थापित होना चाहिए तथा इनमें निर्वाचित सदस्य शामिल होने चाहिए। परन्तु लार्ड रिपन का प्रयास विफल रहा, क्योंकि ब्रिटिश सरकार द्वारा उन्हें पूर्ण सहयोग नहीं दिया गया।

सी.आई.एच. हॉब्स हाऊस की अध्यक्षता में 1907 में बने शाही विकेन्द्रीकरण आयोग द्वारा सीधे तरीके से, नए रूप में स्थानीय स्वशासन संस्थाओं के निम्न स्तर के चुनाव करवाने तथा गांव को स्थानीय स्वशासन की इकाई मानने की सिफारिश की गई। 1919 का "भारत सरकार अधिनियम" लागू होने पर स्थानीय स्वशासन के नवीन युग का आरम्भ हुआ तथा स्थानीय शासन हस्तातंरित विषय बना और सभी प्रांतो को अपनी आवश्यकतानुसार स्वायत स्थानीय संस्थाएँ विकसित करने की आज्ञा मिली। उसी समय ब्रिटिश सरकार ने 'संयुक्त प्रान्त विलेज पंचायत अधिनियम 1920' पारित किया। इस अधिनियम के अन्तगर्त पचांयतों की स्थापना का अधिकार जिलाधिकारी को प्रदान कियागया। गांधी जी ने भी 1920 में असहयोग आन्दोलन के माध्यम से स्थानीय शासन को और ज्यादा सक्रिय बनाने का प्रयास किया। 'भारत सरकार अधिनियम-1935' के अन्तर्गत 1937 तक बने लोकप्रिय मन्त्रीमण्डलों ने स्थानीय सस्ंथाओं को जनता में लोकप्रिय बनाने के लिए अनेक कानून बनाए। इससे ये संस्थाएँ विकास तथा लोकप्रियता की चरम सीमा पर पहुँची। लेकिन 1939 में द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान

इनके त्याग पत्र देने का सीधा प्रभाव स्थानीय स्वशासन व्यवस्था पर पड़ा। ब्रिटिश पदाधिकारियों द्वारा इस व्यवस्था पर ध्यान नहीं देने के कारण फिर से एक व्यक्ति का शासन स्थापित हो गया। इसी कारण 1939 से 1946 के समय को स्थानीय शासन के इतिहास में 'अन्धकार काल' माना जाता है। ब्रिटिश काल में पचांयतों के विकास हेतु अनेक कदम उठाए गए, लेकिन इन संस्थाओं में महिलाओं की सहभागिता सुनिश्चित करने की दिशा में कोई ठोस कार्रवाई नहीं की गई।[6]

पंचायतों व उनमें महिलाओं के नेतृत्व के बारे वर्णन करते समय संविधान सभा का उल्लेख करना अत्यन्त जरूरी है। पहले तो पंचायतों को संविधान में जगह ही नहीं दी जा रही थी परन्तु गाँधी जी के प्रभाव व अन्य लोगों के प्रयासों व दबावों के कारण अन्ततः पंचायतों को तो संविधान का हिस्सा बनाया गया। परन्तु इन पंचायतों में महिलाओं की सहभागिता के बारे में कोई विचार विमर्श नहीं हुआ। संविधान सभा में पंचायतों की बात तो दूर, विधानमण्डल व संसद में भी महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने की बात को लिंग भेदभाव तथा समानता के विपरीत बताकर रद्द कर दिया गया। भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के कुछ अग्रणी नेताओं ने न केवल महिलाओं की दशा सुधारने का संकल्प लिया बल्कि उनकी शक्ति को पहचानते हुए, उन्हे स्वतन्त्रता संग्राम में शामिल करने का भी आह्वान किया। राजा राम मोहन राय, स्वामी दयानन्द सरस्वती, विवेकानन्द, ऐनीबेसेंट, रामकृष्ण परमहंस ईत्यादि ने सामाजिक कुरीतियों के विरूद्ध तीव्र जन-आन्दोलन चलाकर महिलाओं को स्थिति सुधारने का सराहनीय प्रयास किया।

स्वतन्त्र भारत में पंचायती राज व्यवस्था में महिला नेतृत्व-स्वाधीन भारत में महिला विकास को एक नई गति मिली। स्वतन्त्रता के बाद महिलाओं के राष्ट्रीय आन्दोलन में योगदान को स्वीकारते हुए तथा उदारवादी और समाजवादी विचारधाराओं के प्रभाव के कारण पं. जवाहर लाल नेहरू जैसे नेताओं ने महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक स्थिति सुधारने की प्रक्रिया शुरू की।

नेहरू ने देश के सामाजिक-आर्थिक विकास की समूची अवधारणा के मूल आधार के बारे में बात करते हुए स्त्रियों को आगे बढ़ाने की वकालत की। इसलिए भारतीय संविधान में जहाँ एक और महिलाओं को पुरूषों के समान वयस्क मताधिकार प्रदान किया गया वहीं दूसरी और मौलिक अधिकारों में उन्हें पुरुषों के समान सामाजिक और राजनीतिक स्थिति प्रदान करने की व्यवस्था की गई। इसके अतिरिक्त राज्य के नीति-निर्देशक तत्वों में भी महिलाओं की स्थिति सुधारने का वचन दिया गया।

संविधान के मौलिक अधिकारों के तहत अनु. 15 में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि लिंग के आधार पर महिलाओं के साथ किसी भी प्रकार से भेदभाव नहीं किया जा सकता है। अनु. 15(3) में भी स्पष्ट रूप से महिलाओं और बच्चों के लिए विशेष प्रावधान करने की अनमुति दी गई है। अनु. 16(1)"राज्य के अधीन किसी पद पर नियोजन या नियुक्ति से सम्बन्धित विषयों में सभी नागरिकों के लिए अवसर की समानता" की गारन्टी करता है। तथा अनु.16(2) के अनुसार राज्य के अधीन किसी पद या नियोजन के सम्बन्ध में केवल धर्म, जाति, मूल वंश, लिंग, उद्भव, जन्म स्थान, निवास या इनमें से किसी के आधार पर कोई भेदभाव नहीं किया जा सकता।[7]

संविधान के भाग चार में राज्य के निर्देशक तत्व भी परोक्ष रूप से महिलाओं से सम्बन्धित हैं, जिनमें महिलाओं की स्थिति सुधारने का वचन दिया गया है। जैसे अनु. 39(क) प्रावधान करता है कि पुरुष और स्त्री दोनों को समान रूप से जीविका के साधन प्राप्त करने का अधिकार है। अनु. 39(ख) में पुरुष व स्त्री दोनों को समान कार्य के लिए समान वेतन दिए जाने का प्रावधान है। इसी प्रकार मूल कर्त्तव्यों में भी महिलाओं के लिए अनु. 51(ड) प्रत्येक नागरिक पर ऐसी प्रथाएं त्यागने का कर्त्तव्य डालता है जो स्त्रियों के सम्मान के विरूद्ध होi संविधान की इसी भावना के अन्तर्गत कालान्तर में पंचायती राज अधिनियम पारित कर पचांयती राज व्यवस्था का शुभारम्भ, भारत के सभी राज्यों द्वारा अपने-अपने क्षेत्र में किया गया है। 73वें संविधान संशोधन अधिनियम की महत्वपूर्ण विशेषता यह भी है कि पंचायती राज संस्थाओं के सभी स्तरों पर महिलाओं के लिए स्थानों का आरक्षण किया गया है। अधिनियम में प्रावधान किया गया है कि प्रत्येक पंचायत में प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा भरे जाने वाले स्थानों (अध्यक्ष पद के लिए आरक्षण सहित) की कुल सख्ंया के कम से कम एक तिहाई स्थान (जिसमें अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों की महिलाओं के लिए आरक्षित स्थानों की संख्या भी सम्मिलित है।) महिलाओं के लिए आरक्षित होगेi ऐसे स्थानों का आवंटन किसी पचांयत में चक्रानुक्रम में किया जाएगा।[8]

पंचायती राज व्यवस्था में महिला नेतृत्व की वर्तमान स्थिति- भारतीय महिलाओं की अधिकारिक प्रस्थिति को ऊँचा उठाने, उनके जीवन स्तर को आदर्श स्वरूप देने, उनकी जागरूकता व साक्षरता आदि में वृद्धि करने के उद्देश्य से शासन की सबसे छोटी ईकाई पंचायती राज में उन्हे सहभागिता दी गई, जैसा कि संविधान के अनुच्छेद 243 घ (1) के अनुसार प्रत्येक पंचायत में प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा भरे जाने वाले स्थानों की कुल संख्या के कम से कम एक तिहाई स्थान (एस.सी. व एस.टी. की महिलाओं सहित) महिलाओं के लिए आरक्षित होगें।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. संपादकीय, कुरूक्षेत्र, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली, मई 2013
2. नवानी एवं रावत (सं0), उत्तराखण्ड ईयर बुक 2016, नवाँ संस्करण, बिनसर पब्लिशिंग कम्पनी, देहरादून, 2016
3. सिंह जनक, भारतीय लोक प्रशासन संस्थान नई दिल्ली की अर्द्धवार्षिक शोध पत्रिका, जुलाई-दिसम्बर 2011
4. सुराणा राजकुमारी, भारत में लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण और नव-पंचायती राज, राज पब्लिशिंग हाऊस, जयपुर, 2000
5. कौटिल्य का अथर्शास्त्र, प्रथम अध्याय, चौखम्भा विधाभवन, वाराणसी, 1992
6. महिपाल, पंचायतों में महिलाएँ: सीमाएं और सम्भावनाएं, सारांश प्रकाशन, नई दिल्ली, 1996
7. राठौड़ गिरिवर सिंह, भारत में पंचायती राज, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 2004
8. शर्मा बी, ब्रजभूषण एवं आशीष भट्ट, जिला प्रशासन, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2000

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

भैरव प्रसाद गुप्त के कथा साहित्य में भारतीय समाज

• दिव्या मिश्रा
•• रामेश्वर पाण्डेय

सारांश- भैरव प्रसाद गुप्त के 'महफिल' 1958 कहानी संग्रह की 'घरघुआ' कहानी में चित्रित घरघुआ पर जमींदार अमानवीय अत्याचार करता है। घरघुआ की नरहन गांव में जमीन है, वहाँ पर वह अपने भाई के साथ रहता है। लगान के बदले में गोवर्धन (घरघुआ) को जमींदार, चरवाही के लिए रखता है। एक दिन गोवर्धन के देरी से जाने पर जमींदार और गोवर्धन में कहासुनी हो जाती है। गोवर्धन जमींदार को उल्टे लफ्ज सुनाता है। गोवर्धन की गुस्ताखी देखकर जमींदार सचमुच उसकी जबान खींच लेता है। परिणामत: अंत तक वह बोल नहीं पाता। वह यहाँ विरोध तो नहीं करता, परन्तु मंगरा की औरत पर हुए अन्याय में गोवर्धन मंगरा की औरत का साथ देने के लिए असमर्थता दिखाकर कुएँ में कूदता है। यहाँ खुला आंदोलन तो नहीं है, परन्तु अन्याय के खिलाफ गोवर्धन का आत्मसमर्पण बहुत कुछ बताकर जाता है।

मुख्य शब्द- अमानवीय अत्याचार, आंदोलन, आत्मसमर्पण

प्रस्तावना- भैरवप्रसाद गुप्त के 'सपने का अंत' 1961 कहानी संग्रह की कहानी 'इंसान और मक्खियाँ' में सामान्य आदमी की व्यथा को वाणी मिली है। सामान्य आदमी, किसान, मजदूर सभी अन्याय के विरोध में आवाज उठाते हैं और नेताओं को 'चावल दो या गद्दी छोड़ो' के नारे लगाते हैं। वे आंदोलन करते हैं, परन्तु समुद्र की तरह विशाल दिखाई देने वाले इस जुलूस के बारे में उनका रवैया देखिए। ''उनका कहना था कि पहले यह जुलूस तोड़ दो, नारों को बंद करो, यह विद्रोही वातावरण को खत्म करो फिर हम बात करेंगे।''[1] विद्रोह तथा आंदोलन को दबाना ही राजनीतिज्ञों का पहला लक्ष्य रहता है। चाहे इसमें कितने ही बेगुनाहों की मौत हो जाए। यहाँ कृषक आंदोलन के विराट किन्तु विवश रूप को दिखाया है।

'आंखों का सवाल' 1965 कहानी संग्रह की कहानी 'आंखों का सवाल' में लोगों के सुखों की कुर्बानियों के बल पर नेता बना हुआ रामबाबू उन्हीं किसानों के खेतों को रौंदता हुआ जब अपनी जीप पर से आता है, तो उन्हें वहीं सवाल लोगों की आंखों में दिखाई देता है, जो उसने कभी अपनी माँ की आंखों में देख लिया था, जिसे रोने पर वह डाँटता था। आज उनकी स्थिति कैसी है–आंखें–आंखे उनके चारों ओर आंखें घूर रही थीं। एक ही तरह की आंखें, उनमें एक ही सवाल, एक ही भाव, उनमें नफरत नहीं थी, क्षोभ भी नहीं था, उसे आश्चर्य भी नहीं कहा जा सकता था। पर उनमें कुछ था, जिसे रामबाबू कभी भी न समझ सके, फसलों को कुचलती हुई उनकी जीप गई थी और किसानों की आंखों में पहली बार वह सवाल उभरा था।''[2]

• पीएच.डी, शोध छात्रा, हिंदी, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
•• प्राध्यापक, हिंदी विभाग, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

कृषक आंदोलन का जिक्र यहाँ नहीं है, लेकिन रामबाबू के विरोध में मौन विद्रोह की शुरूआत होती है। यहाँ दबाव के कारण आंदोलन तो खड़े हो नहीं पाते परन्तु आंदोलन की मानसिकता तो जरूर पैदा हुई है। उनका कहना था कि "पहले यह जुलूस तोड़ दो, नारों को बंद करो, यह विद्रोही वातावरण को खत्म करो, फिर हम बात करेंगे।"[3] विद्रोह तथा आंदोलन को दबाना ही राजनीतिज्ञों का पहला लक्ष्य रहता है। भैरव जी यहाँ कृषकों के मन में आत्मविश्वास को चेतित करना चाहते हैं।

गुप्त जी 'मंगली की टिकुली' 1982 कहानी संग्रह की कहानी 'मंगली की टिकुली' में फारम के मालिक कह देते हैं-"ई केबनि हडरे? बड़ा टिकुली चमकावतिया?"[4] तो मंगली को गुस्सा आ जाता है। वह टिकुली उतारकर अपने पति रामा के आगे फेंक देती है। यहाँ आंदोलन तो नहीं परन्तु रामा द्वारा किये गये विरोध का, असंतोष का अंकन है। रामा उसी शाम को मौका मिलते ही मालिक का विरोध कर देता है और मालिक की आंख में हँसिया घुसेड़ देता है। मंगली उससे छिपकर मिलती है। एक बार भेस बदलकर जाने वाली मंगली पर हमला किया जाता है। मंगली को मालिक के लोगों द्वारा उठाकर ले जाने का संदेश रामा तक पहुँचते ही अनगिनत लोग मशाले लेकर फारम के मालिक के पास पहुँचते हैं और वहाँ के सभी को मारकर मालिक का लिंग काटकर उसे भयंकर सजा दी जाती है। कृषक आंदोलन का यह रौद्र रूप यहाँ दिखाई देता है।

इसी 'मंगली की टिकुली' कहानी संग्रह की कहानी 'टिड्डे' में करमी के जंगलों पर जीवित रहने वाले लोगों की कहानी बतायी है। जमींदार इन करमियों पर अधिपत्य प्रस्थापित कर उन जंगलों को काटकर फिर उससे खेती की बात करते हैं परन्तु करमी लोग उसका विरोध करते हैं, क्योंकि उनका जीवन ही उस पर आधृत है। इसी कारण वे आंदोलन कर इसका विरोध कर करमी काटने वालों को टिड्डों की उपमा देते हैं।

भैरव प्रसाद गुप्त जी की अनेक कहानियों में भारतीय समाज के मिल-मजदूर आंदोलन का जिक्र आया है। उनके 'सपने का अंत' 1961 'चाय का प्याला' कहानी संग्रह की कहानी 'चाय का प्याला' में प्रेस में काम करने वाले लोग चाय के लिए एक होकर मालिक का विरोध कर चाय पीने का हक हासिल करते हैं। उसी कहानी के अग्रवाल की सोच से मजदूरों की स्थिति स्पष्ट होती हैं, वह सोचता है, "मध्यम वर्ग के कायरों! तुम क्षणों के गुलाम हो, क्षण में हंसते हो, क्षण में रोते हो, तुम्हारा हंसना क्या, रोना क्या, न तुम्हारे हंसने में मुझे खुशी है, न रोने में सहानुभूति। तुम ढोल हो, ऊपर से आवाज करते हो, अंदर से खोखले! मैं समझता हूँ सब व्यर्थ की बातें। महफिल कहानी संग्रह की 'कुत्ते की टांग' कहानी का नायक अपने फैक्ट्री में काम करने वाले मजदूरों का सेक्रेटरी होने के कारण फैक्ट्री में घटित हुई घटना से बात आगे न बढ़ने पाये इसलिए वह तरह-तरह के बहाने बनाता है। वह कई प्रकार की रिश्वत देने का प्रयास करता है। जैसे-"मैं सब करने लिए तैयार हूँ, लेकिन मुझे यह भी तो मालूम हो कि मेरा अपना कोई वहाँ है। लेकिन सेक्रेटरी साहब आप मेरी बात नहीं समझते। मेरा क्या, जैसे और सब होता है, हजार-पांच सौ और सही लेकिन आप क्यों यह सुनहला मौका खो रहे हैं?"[5]

मालिकों को अपने स्वार्थ के आगे कुछ भी दिखाई नहीं देता है। वे अपने कुत्तों के लिए, उसकी टॅटी टांग के लिए कुछ भी कर सकते हैं लेकिन मनुष्य के टूटे हाथ के लिए

कुछ नहीं कर सकते। इस अंश में मजदूरों का विरोध, मजदूरों की विवशता, मजदूरों के स्वार्थ के कारण अन्य मजदूरों पर होने वाला अन्याय आदि बातों का विवेचन भैरव प्रसाद गुप्त जी ने अच्छे तरीके से किया है। गुप्त जी की कम कहानियों में सांप्रदायिक आंदोलन देखने को मिलता है, लेकिन अधिकतर धार्मिक कट्टरता का रूप ही दिखाई देता है।

भैरव जी के कहानी संग्रह 'आप क्या कर रहे हैं' की 'लड़का' कहानी की कथा का आधार भैरव जी का उपन्यास भाग्यदेवता है। एक छोटा लड़का अपने ताऊजी का इंतजार करता है क्योंकि उसने एक दिन पहले उनके प्रेस में हुए मजदूरों के आंदोलन को देख लिया है। इस आंदोलन का लड़के पर आतंक इतना छाया है कि वह ठीक से सो भी नहीं पाता और दिनभर अपने ताऊजी का इंतजार करता रहता है। मजदूरों को इस आंदोलन में हवालात में बंद किया जाता है।

'आप क्या कर रहे हैं' कहानी संग्रह की प्रतिनिधि कहानी 'आप क्या कर रहे हैं' का नवाब तो अपने हकों की पूरी जानकारी रखता है। बहुत खाना खिलाने के बाद वह मालिक के टेबल पर बैठकर खाना खा लेता है। जिससे मालिक क्रुद्ध होते हैं। मालिक की यह नीति देखकर वह मालिक को हिदायत देते हुए कहता है–''देखिए साहब, जहाँ तक काम का संबंध हैं, मैं आपका नौकर हूँ। काम में कोई नुक्स हो, आप मुझे डाँटिए लेकिन जहाँ तक आपके और मेरे बीच व्यवहार का संबंध है, मैं आप से निवेदन कर देना चाहता हूँ कि वहाँ आप मुझे नौकर न समझें, बल्कि अपने बराबर का समझें।''[6] यहाँ लेखक की साम्यवादी विचारधारा देखने को मिलती है। इसमें साम्यवाद के लिए आंदोलन की मिल–मजदूर में उभरी मानसिकता के संकेत मिलते हैं।

'आप क्या कर रहे हैं' कहानी संग्रह की 'हनुमान' कहानी में वित्रित गरीब निरीह हनुमान पर प्रेस मालिक और अन्य लोग विविध जुल्म ढाते हैं, जिससे वह विरोध करने को तैयार होता है। किसी भी कागज पर दस्तखत करने के लिए इंकार कर देता है, इस स्थिति में सभी मजदूर उसका साथ देते हैं। हड़तालों के साथ, आंदोलनों के साथ इसके द्वारा प्राप्त होने वाले फायदों के साथ लोगों की, मजदूरों की मानसिकता जुड़ी होती है। 'हड़ताल' कहानी के प्राणबाबू हड़ताल के दिन इतने खुश हो जाते हैं कि अब उन्हें सभी प्रकार की खुशियाँ प्राप्त होंगी। शाम के समय कृपाल बाबू आकर बताते हैं–''लेकिन भाई बाद में लोग छुपकर रजिस्टर पर अपनी हाजिरी के दस्तखत बना आये हैं। इस समय भी दस्तखत बन रहे हैं। मुझे तो शाम को शंकर बाबू ने बताया कि ऐसा हो रहा है।''[7] तो उन्हें इतना गहरा सद्मा लगता है जिससे उनकी मौत होती है। यहाँ आंदोलन का अवरोध करने वाले मजदूरों के बीच की दोगली नीति के दर्शन होते हैं।

भारतीय समाज के दलितों की स्थिति को भैरवप्रसाद गुप्त जी ने अत्यंत यथार्थ ढंग से चित्रित किया है। अधिकतर दलितों पर होने वाले अन्यायों का अंकन उन्होंने किया है। कहीं–कहीं पर दलितों द्वारा विरोध का अंकन भी किया है। 'आप क्या कर रहे हैं' कहानी संग्रह की 'केवल एक दिन के लिए' कहानी में नायक बोधा के एक पत्नी एवं पांच बच्चे हैं। वह रिक्शा चलाता है। एक दिन उसकी पत्नी मर जाती है। एक तो अर्थभाव और ऊपर से पत्नी की मौत, किसी तरह उसकी अरथी का वह इंतजाम करता है। फिर दूसरे दिन और तीसरे दिन पास–पड़ोस वालों के बलपर काम चलाता है। लेकिन चौथे

दिन उसे रिक्शा चलाना ही पड़ जाता है। वहाँ पाँच रूपये कमाकर लाता है। एक किलो सत्तू और पावभर दूध लाता है। बच्चे खुद ही सब खा लेते हैं, उसे कुछ भी प्राप्त नहीं होता फिर दो दिन और वह इसी प्रकार गुजारता है। बिना खाये काम नहीं चल सकता। छोटा बच्चा बीमार पड़ जाता है। जो भी वह कमाकर लाता है वह बच्चों को ही पूरा नहीं होता और उसे भूखा पेट रहना पड़ता है। जब बीमारी के कारण लेकर नसें काटकर मार डालता है। अपनी गरीबी दूर करने का यही आखिरी उपाय उसके पास है। यहाँ बोध परिस्थिति और परिवेश के साथ संघर्ष तो प्रत्यक्ष रूप में नहीं करता परन्तु उसकी आंदोलन से चेतित मानसिकता उसके परिवार का विनाश करती है।

इसी प्रकार दलित आंदोलन केवल एक दिन के लिए, भोले-भाले लोग, ऐसी आजादी रोज हो, नया खाता, आया, धनिया की साड़ी, चरमबिन्दु, एक पांव का जूता आदि कहानियों में भी दलितों पर होने वाले अत्याचारों और अन्याय का अंकन हुआ है। उच्च वर्ग और सर्वहारा के बीच का संघर्ष यहाँ भारतीय समाज को प्रस्तुत करता है।

भैरव प्रसाद गुप्त जी कहानियों में जनआंदोलन के स्वरूप को जब हम देखते हैं तो भैरव प्रसाद की कहानियों का परिवेश आजादी के बाद का समस्याग्रस्त समाज लगता है। उनकी कहानियों में पाये जाने वाले जनआंदोलन भी कृषक मिल मजदूर दलित सांप्रदायिक आंदोलन के रूप में दिखाई देता है। उनकी कहानियों में सांप्रदायिक आंदोलन का जिक्र नहीं हुआ है। उनकी कहानियाँ मानव जीवन और सामाजिक यथार्थ के विविध आयामों का प्राय: सूक्ष्म यद्यपि जीवन्त परिचय देती हैं। उनकी कहानियाँ उस संघर्ष चेतना का प्रतीक है, जिसने आजादी के बाद प्रतिबद्ध लेखन में मानव विरोधी नियंत्रक मूल्यों से टक्कर ली है।

प्रेमचंद से हिन्दी साहित्य में मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित होकर कथा साहित्य लिखने की परंपरा शुरू हुई। प्रेमचंद जी के परवर्ती युग में 'रेणु', 'नागार्जुन', 'रांगेय राघव', 'रामदरश मिश्र', 'विवेकी राय', 'गोविंद मिश्र', 'शिवप्रसाद सिंह', 'मैत्रेयी पुष्पा', 'मन्नू भण्डारी' आदि ने अपने कथा साहित्य में मार्क्सवादी विचारों से प्रभावित होकर कम अधिक मात्रा में जनवादी विचारधारा को पुष्ट बनाने का प्रभावी काम किया है।

भैरव प्रसाद गुप्त ने इस दिशा में प्रशंसनीय काम किया है। भैरव जी के कथा साहित्य के पात्र निम्न मध्यवर्ग से, निम्नवर्ग से, उपेक्षित वर्ग से संबंधित माने जाते हैं। भैरव जी के कथा साहित्य में चित्रित पुरुष पात्र धीरे-धीरे चेतित बन जाते हैं और क्रांति कर सकते हैं। इस दिशा में भैरव जी के नारी पात्र भी पीछे नहीं रहते। आजादी के बाद हिन्दी उपन्यासों में नारी जनजीवन का चित्रण करने वाली, नारी के समस्या के प्रति हमदर्दी दिखाने वाली अनेक कहानियाँ और उपन्यास लिखे गए। इन सभी उपन्यासों में महिलाओं की स्थिति और गति पर यथार्थ ढंग से प्रकाश डाला गया है।

आज भारतीय समाज में विधवा नारी, वेश्या नारी, फंसाई गयी नारी, नौकरी पेशावाली नारी, सर्वहारा मजदूर नारी आदि विभिन्न रूप नारी जीवन की अनेक समस्याओं को प्रस्तुत करते हैं। आर्थिक दुर्बलता, विशिष्ट मनोवृत्ति, पति के साथ झगड़े, पति का दुर्व्यवहार, विवाहपूर्व स्थापित अवैध यौन संबंध किसी प्रेमी के द्वारा विश्वासघात ऐसे अनेक कारण हैं जो नारी को गैरमार्ग में लगा देते हैं। भैरव प्रसाद गुप्त जी के कथा साहित्य में भारतीय मध्यवर्ग की नारियाँ उपेक्षित वर्ग से सामान्य वर्ग से

संबंधित हैं फिर भी भैरव जी ने इन सामान्य सर्वहारा नारियों में दलित पिछड़ी हुई नारियों में जनवादी चेतना भरकर उन्हें विद्रोह के लिए उकसाया है। भैरव जी के कथा साहित्य में आशा, रंभा, कालिंदी, शशी, संता, सकीना, मदीना, प्रभा, मटरू की भाभी, कैलासिया, बसुमतिया, भरत की माॅ, मुनरी, बदमियाॅ, महाराजिन, सुगियाॅ, पानकुॅवरी, जुलेसरी, जनकियाॅ, पटेसरी, सुंदरी, शकुंतला आदि अनेक नारी पात्र हैं। कई नारी पात्रों का सामाजिक स्तर उनके नामों से भी पता चलता है। ये नारियाॅ भैरव जी के विचारधारा को प्रवाहित करने में अग्रणी लगती हैं।

भैरव प्रसाद गुप्त के कहानी संग्रहों में भारतीय मध्यवर्ग से प्रेरित नारी पात्र देखने को मिलते हैं। ''सातवें दशक के अंत समाज और राजनीति के साथ-साथ हिन्दी कथा साहित्य में एक जनवादी आंदोलन शुरू हुआ, धीरे-धीरे लेखकों की समझ में आने लगा कि आठवें दशक की हिन्दी कहानी में प्रामाणिकता के नारे की असलीयत समझकर पुनः यथार्थवादी कथा परंपरा से अपने आपको जोड़ा है और उसके विरूद्ध सक्रिय प्रकृतिवादी, अनुभववादी, आधुनिकतावादी, प्रवृत्तियों का, प्रतिगामिता के विरूद्ध लगातार संघर्ष करते हुए जनवादी कहानी के रूप में यथार्थवाद को पुनः प्रतिष्ठित किया।''[8]

आमतौर पर भैरव प्रसाद गुप्त मुख्यतः उपन्यासकार है। आजादी के बाद भारतीय समाज की केन्द्रीय समस्याओं को उन्होंने उपन्यास के माध्यम से चित्रित किया है। उनकी कहानियों की संख्या भी कम नहीं है। भैरव जी की कहानियों को हम लोककथा शैली, तीखे व्यंग्य, परिवर्तनकारी पात्रों के प्रेरणादायी चित्रण, निम्न-मध्यमवर्गीय जीवन की पीड़ा के तहत देख सकते हैं। भैरव जी की कहानियों का परिवेश आजादी के बाद समस्याग्रस्त समाज है। इनकी कहानियों में इमानदार और परिश्रमी लोगों की निराशा एवं पीड़ा देखने को मिलती है। भैरव जी की कहानियों के पात्र अधिकांश मात्रा में शहरों और कस्बों में रहने वाले हैं। वे अपने हैसियत के मुताबिक अनेक योजनाएॅ बनाते हैं, उन पात्रों का मूल प्रेरणास्रोत आजादी की पृष्ठभूमि पर खड़ा है। इन पात्रों में चेतना को ढालकर भैरव जी ने सामाजिक बदलाव को स्पष्ट किया है। भैरव जी की कहानियों में पात्रों के मोहभंग निराशा और आपसी कडुवाहट को उकेरने का प्रयत्न किया गया है।

भैरव जी की कहानी 'चाय का प्याला' में पात्रों की जीवन पद्धति के साथ-साथ तत्कालीन समाज के बीच उभरे वाली उनकी समस्याओं को ढूॅढ़ने का प्रयत्न किया गया है। इनकी कहानियों में मध्यवर्गीय जीवन की स्थितियाॅ, उनके टुच्चेपन, उनकी स्वार्थपरता उनकी बेईमानी उनका नैतिक खोखलापन आदि पर व्यंग्य किया है। भैरव जी की कहानियों में भारतीय मध्यवर्ग पूंजीवादी शोषण के खिलाफ विरोध दर्शाया गया है। उन्होंने उच्चवर्गियों की निर्दयता, अमानवीयता पर कठोर आघात किया है। भैरव जी की अनेक कहानियों में परंपराओं के बीच के टकराव को दिखाया है। भैरव जी की कहानियों सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया को लेखकीय परिकल्पना के बल पर साकार करती हैं। उनकी कहानियों में शहरी मजदूरों के जीवन प्रसंगों के साथ-साथ परिवर्तनकारी प्रक्रिया के चित्रण को लिए लेखक ने ग्रामीण परिवेश को ही चुना है।

भैरव प्रसाद गुप्त जी समाज जीवन के विकास के परिणामस्वरूप सामाजिक समस्याएॅ दिखाई देती है और ये समस्याएॅ मानवीय विकास में बाधा पहुॅचाती है। आजादी

के पश्चात् पूरा भारतीय जन-जीवन परिवर्तित हुआ। इस परिवर्तित जनजीवन के कारण समाज जीवन में अनेक समस्याओं का निर्माण हुआ इस आधार पर यह स्पष्ट होता है कि आजादी के बाद भैरव प्रसाद गुप्त ने अपने कथा साहित्य में निम्नलिखित सभी समस्याओं का गहराई से चिंतन किया है।

1. भैरव प्रसाद गुप्त के कथा साहित्य में चित्रित बेरोजगारी की समस्या।
2. भैरव प्रसाद गुप्त के कथा साहित्य में चित्रित वर्ग-संघर्ष की समस्या।
3. भैरव प्रसाद गुप्त के कथा साहित्य में चित्रित सांप्रदायिकता की समस्या।
4. भैरव प्रसाद गुप्त के कथा साहित्य में चित्रित नारी शोषण की समस्या।
5. भैरव प्रसाद गुप्त के कथा साहित्य में चित्रित शिक्षा क्षेत्र में प्रविष्ट अराजकता की समस्या।
6. भैरव प्रसाद गुप्त के कथा साहित्य में चित्रित राजनीति से उत्पन्न समस्या।
7. भैरव प्रसाद गुप्त के कथा साहित्य में चित्रित पुलिस शोषण की समस्या।

भैरव प्रसाद गुप्त के कथा साहित्य में व्यक्ति एक सामाजिक ईकाई है। व्यक्ति का अस्तित्व सामाजिक अस्तित्व में संपृक्त किया गया है। अपने विकास की एक विशेष स्थिति में पहुँचकर व्यक्ति की सारी भौतिक शक्तियाँ आपस में टकराने लगती हैं, जिससे आर्थिक परिवर्तन की मांग के परिणामस्वरूप टकरावजन्य स्थितियों का निर्माण हो चुका है। भैरव प्रसाद गुप्त के कथा साहित्य में भारत के समाज जीवन में उभरने वाली जनवादी चेतना का निर्वाह होता है। भैरव जी ने जनवादी चेतना के तहत कृषकों, भूमिहीन मजदूरों, औद्योगिक सर्वहाराओं आदि के प्रति सहानुभूति दिखाई है। भैरव जी ने शोषित जनता और शोषक मालिक के बीच संघर्ष का निर्माण करके अनेक सामाजिक समस्याओं का चित्रण किया है। भैरव जी के कथा साहित्य में मध्यवर्ग, झठी शान के पीछे लगकर काल्पनिक गरिमा के बीच अटक्कर कुंठित दिखाई देता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. भैरव प्रसाद गुप्त-'सपने का अंत', पृ. 130
2. भैरव प्रसाद गुप्त-'आंखों का सवाल', आधुनिक कथा प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1964, पृ. 142
3. भैरव प्रसाद गुप्त-'सपने का अंत', धारा प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1961, पृ. 130
4. भैरव प्रसाद गुप्त-'मंगली की टिकुली', धारा प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1982, पृ. 121
5. भैरव प्रसाद गुप्त-'आप क्या कर रहे हैं', धारा प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1983, पृ. 92
6. भैरव प्रसाद गुप्त-'आंखों का सवाल', आधुनिक कथा प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1964, पृ. 142
7. भैरव प्रसाद गुप्त-'आप क्या कर रहे हैं', धारा प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1983, पृ. 115
8. संपादक विद्याधर शुक्ल-भैरव प्रसाद गुप्त, व्यक्ति और रचनाकार, प्रभा प्रकाशन इलाहाबाद, संस्करण 1988, पृ. 236

UGC Journal No. (Old) 2138,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 21, Hindi Edition, Year-11, April-Sept. 2021

महिलाओं की राजनैतिक सहभागिता एवं सशक्तिकरण की स्थिति मध्यप्रदेश के सतना जिले के संदर्भ में

• वंदना मिश्रा

•• संकटा प्रसाद शुक्ल

सारांश- राजनीतिक सहभागिता की अवधारणा राजनीतिक विज्ञान की एक नवीन अवधारणा है। इसे विकसित करने का श्रेय मुख्य रुप से व्यावहारवादियों को जाता है। व्यावहारवादियों ने राजनीतिक सहभागिता का उदाहरण प्रस्तुत करते हुऐ राजनीति में एक उदार विचार की प्रवृत्ति को बढाया दिया है। गणतन्त्रीय एवं प्रजातान्त्रिक सिद्धान्तवादियों में रूसों एवं उसके समकालीन विचारकों ने राजनीतिक सहभागिता की अवधारणा को दो दृष्टियों अर्थात् दृष्टिकोण एवं गतिविधि से अत्यधिक समृद्ध किया है। दृ'टिकोण के रुप में राजनीतिक सहभागिता का अध्ययन परम्परागत तरीके से किया जाता है और इसे राज्य अथवा ''ाासन के प्राचीन व सुद्रढ़ व्यैक्तिक पक्ष के रुप में जाना जाता है, उदाहरण के लिए - अमेरिका की बोस्टन टी पार्टी की घटना को परम्परागत राजनीतिक सहभागिता के रुप में जाना जा सकता है। यह एक नकारात्मक अवधारणा है। किन्तु एक गतिविधि के रुप में राजनीतिक सहभागिता की अवधारणा आधुनिक प्रजातान्त्रिक राज्यों की महत्वपूर्ण इकाई है। एक गतिविधि के रुप में राजनीतिक सहभागिता सरकार अथवा शासन की प्रक्रिया में वास्तविक सहभागिता है।

मुख्य शब्द- राजनीतिक सहभागिता, सशक्तिकरण, लोकतंत्र, शासन व्यवस्था

प्रस्तावना- राजनीतिक सहभागिता की इसी अवधारणा के अन्तर्गत आवश्यक रुप से आम जनता का एक बहुसंख्यक भाग अपने शासक अथवा नेता का चुनने में और सरकारी नीतियाँ बनाने व पूर्ण करने में मुख्य भूमिका निभाता है। इस प्रकार, लोकतंत्र में राजनीतिक सहभागिता की अवधारणा नागरिकों को शासन के कार्यों में अधिक से अधिक शामिल करने और शासन को लोकप्रिय व विकेन्द्रीकृत बनाने हेतु एक सफल अवधारणा है। यह लोकतांत्रिक शासन के सही क्रियान्वन में पूरी भागीदारी अदा करती है और राजनीतिक गतिविधियों को सही दिशा प्रदान करके एक आदर्श शासन व्यवस्था की स्थापना में भी सहायक है। राजनैतिक सहभागिता की अवधारणा अपने आधारों में परिवर्तन किये बगैर राजनीतिक क्रिया-कलापों की शैली में परिवर्तन करते हुऐ राज्य की जनता को सुख-सुविधाऐं प्रदान करने वाली लाभकारी योजनाओं को बनाने में पूर्णतः सफल और सक्षम है, ''राजनीतिक गतिविधि में लीनता

• पीएच.डी, शोध छात्रा, राजनीति विज्ञान, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

•• प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

सहभागिता के आधारों में बिना किसी बदलाव के राजनीतिक कार्य की शैली में बदलावों की प्रस्तुत करती है।"

इसके साथ ही यह अवधारणा लोकतान्त्रिक देशों के दिनों दिन बदलते परिदृश्य और नागरिकों को मिलने वाली सुविधाऐं आदि के सही आँकलन का आधार भी है, "लोकतान्त्रिक समाजों में, महत्वपूर्ण बदलाव के बारे में वास्तविक मूल्यांकन करना, सहभागिता की अवधारणा के प्रयोग पर निर्भर होता है।" नि:सन्देह, राजनीतिक सहभागिता की अवधारणा राजनीति के क्षेत्र में एक बहुत ही उपयोगी और मूल्यवान अवधारणा है। हरिहरदास के अनुसार, "राजनीतिक सहभागिता के उच्च स्तर सामान्यत: लोकतंत्र से ही सम्बद्ध हैं और जो दोनों के लिए ही अर्थात् व्यक्ति एवं राज्य के लिए लाभदायक हैं।"[1] इस प्रकार, राजनीतिक सहभागिता का स्वरुप निर्धारित करने वाली इन गतिविधियों का अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि राजनीतिक सहभागिता की अवधारणा लोकतंत्र की एक स्वाभाविक और अन्त:वर्ती विशेषता है जो किसी भी देश की लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था को सुचाररुप से व्यवस्थिति व उन्नत बनाये रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।[2]

राजनीतिक सहभागिता के प्रकार - राजनीतिक सहभागिता के कुल तीन प्रकार हैं जो निम्नलिखित हैं-

परम्परागत सहभागिता- राजनीतिक सहभागिता का प्रथम प्रकार परम्परागत सहभागिता है। इसमें वे सभी गतिविधयां सम्मिलित हैं, जिनकी हम अच्छे नागरिकों से आशा करते हैं। यह सहभागिता लोगों के बहुसख्यक भाग द्वारा चुनाव के समय निभायी जाती है परम्परागत सहभागिता उन लागों के द्वारा अधिक पसंद की जाती है, जो राजनिति में नियमित रुप से सहभागी होने के साथ-साथ तन-मन-धन से समर्पित हैं। राजनैतिक सहभागिता के परम्परागत प्रकार के अन्तर्गत अनेक गतिविधियाँ जैसे-मतदान, चुनाव, प्रचार प्रसार में स्वैच्छिक जुड़ाव, चुनाव आदि हेतु राजनीतिक चन्दा, स्वयं समूहों में भागीदारी एवं सरकारी कार्यालयों में सेवा करना आदि सम्मिलित हैं।

गैर परम्परागत सहभागिता - ऐसी सभी गतिविधियां जो कानूनी होते हुऐ भी अक्सर अनुचित रुप में ही प्रयोग की जाती हैं, राजनीतिक सहभागिता का गैर परम्परागत प्रकार कहलाती हैं। उदाहरण के लिए कानून निर्माण की प्रक्रिया के दौरान सदन से बहिर्गमन करना, याचिका सुनना, नाटकीय प्रदर्शन एवं विरोध जताना आदि सभी को राजनीतिक सहभागिता के गैर परम्परागत प्रकार में सम्मिलित किया जाता है।

अवैध सहभागिता- वे सभी गतिविधियाँ जो कानून को तोड़तीं हैं, अवैध राजनीतिक सहभागिता के प्रकार में सम्मिलित हैं। उदाहरण के लिए राजनीतिक खतरों को बढ़ाने वाली, आंतकवाद, हड़तालियों के उपद्रव एवं चुनाव प्रचार प्रसार के दौरान हत्याऐं आदि।[3]

अध्ययन क्षेत्र- सतना जिला मध्य प्रदेश के 52 जिलों में एक जिला है। सतना जिले के अंतर्गत जिला एक संसदीय क्षेत्र होने के साथ 7 विधानसभा क्षेत्र भी सतना जिले में आते हैं। सतना जिले के अंतर्गत 6 उपमंडल, 8 ब्लॉक, 10 तहसील, 2125 ग्राम है एवं 704 ग्राम पंचायते भी है। सतना जिले का क्षेत्रफल 7502 वर्ग किलोमीटर है, और 2011 की जनगणना के अनुसार सतना की जनसँख्या 728619 और जनसँख्या घनत्व 97 प्रति वर्ग किलोमीटर है।

सतना की साक्षरता 73.79 प्रतिशत है, महिला पुरुष अनुपात यहाँ पर 927 महिलायें प्रति 1000 पुरुषो पर है। जिले की जनसँख्या विकास दर 2001 से 2011 के बीच 19.17 प्रतिशत रहा है।

अध्ययन पद्धति - शोध कार्य के अंतर्गत शोध की प्रकृति उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए सोद्देश्यपूर्ण निदर्शन विधि के द्वारा सतना जिले की सभी 10 तहसीलों से 30-30 महिला प्रतिनिधि परिवारों का साक्षात्कार लिया गया है। सतना जिले के 10 तहसील में सरल देव निदर्शन विधि के द्वारा 300 चुनी हुई महिलाओं का चयन करके तथ्यों को एकत्रित एवं विश्लेषित किया गया है जो निम्नलिखित है -

तथ्यों का विश्लेषण

तालिका क्र. 01
सतना जिले में स्थानीय स्तर पर ग्राम पंचायत में पदों पर आसीन महिलाओं की जानकारी का विवरण

क्र.	तहसील का नाम	प्रतिनिधित्व पद		कुल योग
		सरपंच	पंच	
1	रघुराज नगर(सतना)	10 (14.1)	20 (8.7)	30 (10.0)
2	नागौद	07 (9.9)	23 (10.0)	30 (10.0)
3	रामपुर बाघेलान	06 (8.5)	24 (10.5)	30 (10.0)
4	अमरपाटन	08 (11.3)	22 (9.6)	30 (10.0)
5	उचेहरा	05 (7.0)	25 (10.9)	30 (10.0)
6	रामनगर	06 (8.5)	24 (10.5)	30 (10.0)
7	मैहर	10 (14.1)	20 (8.7)	30 (10.0)
8	बिरसिंहपुर	05 (7.0)	25 (10.9)	30 (10.0)
9	कोटर	06 (8.5)	24 (10.5)	30 (10.0)
10	मझगवॉ	08 (11.3)	22 (9.6)	30 (10.0)
कुल योग		71 (23.7)	229(76.3)	300 (100.0)

उपरोक्त तालिका क्र. 01 के समंकों से स्पष्ट होता है कि 23.7 प्रतिशत महिला प्रतिनिधि पंचायत में सरपंच के पद पर प्रतिनिधित्व कर रही है तथा 76.3 प्रतिशत महिला प्रतिनिधि उत्तरदाता के द्वारा पंच के पद पर प्रतिनिधित्व कर रही है। अत: स्पष्टत: कहा जाता है कि अध्ययन क्षेत्र में पंचायती राज व्यवस्था में महिला प्रतिनिधि उत्तरदाताओं में पंच के पद पर प्रतिनिधित्व करने वाले उत्तरदाताओं का प्रतिशत सर्वाधिक है।

तालिका क्र. 02
पंचायत में महिला उत्तरदाताओं को चुनाव लड़ने की प्रेरणा की जानकारी का विवरण

क्र.	तहसील का नाम	विवरण				कुल योग
		स्वयं के निर्णय द्वारा	पति/पिता द्वारा	परिवार के द्वारा	गाँव के लोगों द्वारा	
1.	रघुराज नगर	11 (13.4)	05 (13.5)	11 (8.7)	03 (5.6)	30 (10.0)
2.	नागौद	09 (11.0)	04 (10.8)	12 (9.4)	05 (9.3)	30 (10.0)
3.	रामपुर बाघेलॉन	07 (8.5)	02 (5.4)	10 (7.9)	11 (20.4)	30 (10.0)
4.	अमरपाटन	06 (7.3)	03 (8.1)	17 (13.4)	04 (7.4)	30 (10.0)
5.	उचेहरा	08 (9.8)	05 (13.5)	10 (7.9)	07 (13.0)	30 (10.0)

6.	रामनगर	09 (11.0)	04 (10.8)	14 (11.0)	03 (5.6)	30 (10.0)
7.	मैहर	11 (13.4)	03 (8.1)	12 (9.4)	04 (7.4)	30 (10.0)
8.	बिरसिंहपुर	07 (8.5)	04 (10.8)	12 (9.4)	07 (13.0)	30 (10.0)
9.	कोटर	06 (7.3)	04 (10.8)	13 (10.2)	07 (13.0)	30 (10.0)
10.	मझगवॉ	08 (9.8)	03 (8.1)	16 (12.6)	03 (5.6)	30 (10.0)
कुल योग		82 (27.3)	37(12.3)	127(42.3)	54 (18.0)	300 (100.0)

उपरोक्त तालिका के समंकों द्वारा स्पष्ट होता है कि 27.3 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं का कहना है कि पंचायत में चुनाव लड़ने की प्रेरणा स्वयं के निर्णय द्वारा, 12.3 प्रतिशत ने पति/पिता के द्वारा एवं 42.3 प्रतिशत ने परिवार द्वारा, 18.0 प्रतिशत ने गाँव के लोगों द्वारा चुनाव लड़ने की प्रेरणा मिली। अतः परिवार के द्वारा चुनाव लड़ने वाले महिला उत्तरदाताओं का प्रतिशत सर्वाधिक पाया गया।

तालिका क्र. 03

पंचायत की बैठकों की जानकारी समय पर मिल जाती है

क्र.	विवरण	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	229	76.3
2.	कभी-कभी	71	23.7
कुल योग		300	100

उपरोक्त तालिका क्र. 6.3 के समंकों से स्पष्ट होता है कि 76.3 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं को पंचायत की बैठकों की जानकारी समय पर प्राप्त हो जाती है तथा 23.7 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं का कहना है कि कभी-कभी जानकारी मिल पाती है। अतः उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में महिला पंचायत प्रतिनिधियों को बैठकों की जानकारी समय पर मिल जाती है, उन उत्तरदाताओं का प्रतिशत सर्वाधिक है।

तालिका क्र. 04

पंचायत की बैठकों की जानकारी समय पर नही/कभी-कभी मिल जाती है

क्र.	विवरण	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
1.	जानकारी का अभाव	6	08.डंल
2.	जागरुकता की कमी	65	91.5
कुल योग		71	100

उपरोक्त तालिका क्र. 04 के समंकों से स्पष्ट होता है कि जिन महिला पंचायत प्रतिनिधियों को बैठकों की जानकारी समय पर नही मिलती या कभी-कभी मिलती है उनमें से 8.5 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं को जानकारी के अभाव के कारण पंचायत की बैठकों की जानकारी समय पर प्राप्त नही होती है, एवं 91.5 प्रतिशत उत्तदाताओं को जागरुकता की कमी जानकारी समय पर नही मिल पाती है, जैसे कई बार गाँव से आजीविका कार्य हेतु बाहर चले जाते है। अतः उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में महिला पंचायत प्रतिनिधियों को बैठकों की जानकारी समय पर मिल जाती है।

तालिका क्र. 05
पंचायत की बैठकों की सूचना
प्राप्तिपर बैठकों में शामिल होने संबंधी विवरण

क्र.	विवरण	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	222	74.0
2.	कभी–कभी	78	26.0
कुल योग		300	100

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि 74.0 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं का कहना है कि पंचायत में बैठकों की सूचना मिलने पर शामिल होती है तथा 26.0 प्रतिशत का कहना है कि कभी–कभी शामिल होती है। अतः तालिका से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में पंचायत की बैठकों में शामिल होने वाली महिला पंचायत प्रतिनिधियों की संख्या अधिक है।

तालिका क्र. 06
पंचायतों में बैठकों की सूचना मिलने पर शामिल कभी-कभी है

क्र.	विवरण	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
1.	घर के कार्य से समय नही मिलता	71	91.1
2.	अन्य	7	44448
कुल योग		78	100

उपरोक्त तालिका के समंकों से स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र में महिला पंच/सरपंच जो बैठकों में नही जाती है या कभी–कभी जाती है उनमें से 91.1 प्रतिशत महिला घरेलू कार्यो से समय नही निकाल पाती, एवं 9.9 प्रतिशत महिलायें अन्य कारणों जैसे अस्वस्थता एवं गाँव से बाहर रहने के कारण बैठकों में शामिल नही हो पाती है, अथवा कभी–कभी ही शामिल हो पाती है।

तालिका क्र. 07
पंचायत के कार्य संबंधी बातों में खुलकर बोलने संबंधी जानकारी

क्र.	विवरण	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	222	74.0
2.	कभी–कभी	78	26.0
कुल योग		300	100

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि 74.0 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं का कहना है कि पंचायत की बैठक में पंचायत के कार्य संबंधी बातों में खुलकर बोलती है, तथा 26.0 प्रतिशत का कहना है कि कभी–कभी खुलकर बोलती है। अतः तालिका से स्पष्ट है कि पंचायत की बैठकों में पंचायत के कार्य संबंधी बातों में खुलकर बोलने वाली महिला पंचायत प्रतिनिधि उत्तरदाताओं का प्रतिशत सर्वाधिक है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. विनय शर्मा (2004) पंचायती राजनीति में महिलाओं की भागीदारी रजत प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. डॉ. मनोज कुमार, अखलाक अहमद (2009) पंचायती राज उभरतें मुद्दे लक्ष्य साहित्य प्रकाशन।
3. महीपाल (2004) पंचायती राज चुनौतियाँ एवं सम्भावनायें, नेशनल बुक ट्रस्ट : इण्डिया।

Centre for Research Studies Rewa-486001 (M.P.) India

Registered Under M.P. Society Registration Act,
1973, Reg. No. 1802, Year-1997
www.researchjournal.in

ISSN 0975-4083

9 770975 408002

Editor : Prof. Braj Gopal, Printed and Published by Dr. Gayatri Shukla on behalf of Gayatri Publications,Rewa - 486001 (M.P.) and Printed at Lineage Offset Rewa - 486001 (M.P.)